Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अध्यापक शिक्षा का प्रारूप

डॉ० सुनीता गुप्ता
प्राचार्य
डॉ० एस० राधाकृष्णन
शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, सुकरीगढ़ा,
लारी, रामगढ़

शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षक का कार्य निष्पादन सर्वाधिक महत्व का निवेश है। शिक्षा से संबंधित प्रत्येक योजना का सफल क्रियान्वयन शिक्षकों के वैयक्तिक व्यवहार, शिक्षक अधिगम प्रक्रियाओं व कार्य निष्ठा पर निर्भर करता है। अपने शिष्यों के कल्याण के लिए पूर्णता प्रतिबद्ध परिश्रमी व सृजनशील शिक्षकों ने शिक्षा प्रणाली में व्यापत असंतोष व नगण्य लाभों के बावजूद अपने व्यवसायिक दायित्वों को समर्पण भाव से निभाया है। शिक्षक वास्तव में बच्चों के भविष्य को आकार देते हैं। अतः हमारे राष्ट्र के भविष्य का भी निर्माण करते हैं। इस महत्वपूर्ण योगदान के कारण ही भारत में शिक्षक प्राचीनकाल से ही समाज के सबसे सम्मानित स्वरूप के रूप में स्थान पाते हैं। विद्यार्थियों को ज्ञान, कौषल, नैतिक मूल्य प्रदान का सबसे महत्वपूर्ण साधन के रूप समाज में स्थान पाते हैं। नयी शिक्षा नीति 2020 में शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षकों के महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते हुए अध्यापक शिक्षा में महत्वपूर्ण बदलावों को स्थान दिया गया है

अगली पीढ़ी को आकार देने वाले शिक्षकों की एक टीम के निर्माण में अध्यापक शिक्षा की भूमिका महत्वपूर्ण माना गया है। नयी शिक्षा नीति 2020 में यह स्वीकार किया गया है कि शिक्षकों को तैयार करना एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके लिए बहु – विषयक दृष्टिकोण और ज्ञान की आवश्यकता के साथ ही साथ, बेहतरीन मेंटरों के निर्देशन में मान्यताओं और मूल्यों के निर्माण के साथ ही साथ उनके अभ्यास की भी आवश्यकता है। यह सुनिश्चित किये जाने की आवश्यकता है कि अध्यापक शिक्षा और शिक्षण प्रक्रियाओं से संबंधित अद्यतन प्रगति के साथ ही साथ भारतीय मूल्यों, भाषाओं, ज्ञान, लोकाचार परंपराओं और जनजातीय परंपराओं सहित सभी के प्रति शिक्षक जागरूक रहें।

नयी शिक्षा नीति 2020 में उच्चतम न्यायालय द्वारा गठित न्यायमूर्ति जे. एस. वर्मा आयोग (2012) के रिपोर्ट का उल्लेख किया गया है। इस रिर्पोट के अनुसार अध्यापक शिक्षा के प्रति गंभीरता से प्रयास नहीं किया जा रहा है बल्कि इसके स्थान पर डिग्रियों को ऊंचे दामों पर बेचा जा रहा है। इस दिशा के किये गये प्रयास न तो भ्रष्टाचार को रोक पाये है और ना ही अध्यापक शिक्षा के गुणवत्ता के लिए निर्धारित मानकों को ही लागू कर पाए हैं। आयोग कहता है कि इस क्षेत्र में, इसकी नियामक प्रणालियों में महत्वपूर्ण कार्यवाहियों के द्वारा पुनरूद्धार की तात्कालिक आवश्यकता है जिससे गुणवता के उच्चतर मानकों को निर्धारित किया जा सकें और शिक्षक शिक्षाप्रणाली में अखंडता, विश्वसनीयता, प्रभाविकता और उच्चतर गुणवत्ता को स्थापित किया जा सकें । वर्ष 2030 तक केवल शैक्षिक रूप से सुदृढ़, बहु – विषयक और एकीकृत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम कार्यान्वित होंगें।

नयी शिक्षा नीति 2020 में यह निर्धारित किया गया है कि अध्यापक शिक्षा बहु – विषयक के साथ ही साथ उच्चतर गुणवत्तायुक्त विषयवस्तु और शैक्षिक प्रक्रियाओं की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए बहु – विषयक विश्वविद्यालयों सार्वजनिक विश्वविद्यालय और बहु – विषयक महाविद्यालय में उत्कृष्ट शिक्षा विभाग की तथा शिक्षा में अत्याधुनिक अनुसंधानों को अंजाम देने के साथ ही साथ मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, तंत्रिता विज्ञान, भारतीय भाषाओं, कला, संगीत, इतिहास और साहित्य के साथ – साथ विज्ञान और गणित जैसे अन्य विशिष्ट विषयों से संबंधित विभागों के सहयोग से भविष्य के शिक्षकों को शिक्षित करने के लिए बी. एड. कार्यक्रम संचालित करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसके साथ ही साथ वर्ष 2030 तक सभी एकल शिक्षक शिक्षा के संस्थानों को बहु – विषयक संस्थानों के रूप में बदलने की आवश्यकता होगी क्योंकि उन्हें भी 4 वर्षीय एकीकृत शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को संचालित करना होगा। वर्ष 2030 तक बहु – विषयक उच्चतर शिक्षण संस्थानों द्वारा प्रदान किया जाने वाला यह 4 वर्षीय एकीकृत बी. एड. कार्यक्रम स्कूली शिक्षकों के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता बन जाएगा। 4 वर्षीय एकीकृत बी. एड. प्रदान करने वाला प्रत्येक उच्चतर शिक्षण संस्थान पहले से स्नातक की डिग्री प्राप्त कर चुके विद्यार्थी के लिए दो वर्षीय बी. एड. कार्यक्रम भी डिजाइन कर सकते हैं तथा स्नाकोत्तर की डिग्री प्राप्त कर चुके विद्यार्थी के लिए एक वर्षीय बी. एड. कार्यक्रम भी डिजाइन कर सकते हैं। एक वर्षीय बी. एड. कार्यक्रमों के लिए उत्कृष्ट एवं मेधावी उम्मीदवारों के लिए छात्रवृत्तियों की स्थापना की जाएगी।

शिक्षा विभाग में संकाय सदस्यों की प्रोफाइल में विविधता होना एक आवश्यक लक्ष्य होगा। शिक्षण, फिल्ड शोध के अनुभवों को महत्ता प्रदान की जाएगी। सभी नए पीएच – डी. प्रवेशकर्ताओं से अपेक्षित होगा कि अपनी डॉक्टोरल प्रशिक्षण के दौरान उनके द्वारा चुने गए पीएच – डी. विषय संबंधित शिक्षा/अध्यापन/लेखन में क्रेडिट आधारित पाठ्यक्रम चनें। महाविद्यालय और विश्वविद्यालय के शिक्षकों के लिए सेवारत सतत् व्यवसायिक विकास का प्रशिक्षण मौजूदा संस्थागत व्यवस्था एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए मानकीकृत प्रशिक्षण कार्यक्रमों को कम समय के भीतर अधिक शिक्षकों को उपलब्ध कराया जा सकें।

शिक्षक शिक्षा से संबंधित सलाह के लिए एक राष्ट्रीय मिशन को स्थापित किया जाएगा जिसमें बडी संख्या में वरिष्ठ, सेवानिवृत उत्कृष्ट संकाय सदस्यों को जोड़ा जाएगा। इसमें वे संकाय सदस्य भी शामिल रहेंगे जिसमें भारतीय भाषाओं को पढ़ाने की क्षमता है। इस प्रकार नयी शिक्षा नीति 2020 में अध्यापक शिक्षा को गुणवत्तापूर्ण बनाने हेतु तथा भविष्य में योग्य एवं जागरूक अध्यापकों की पीढ़ी तैयार करने हेतु अध्यापक शिक्षा से संबंधित सभी समस्याओं पर ध्यान आकृष्ट किया गया है तथा समस्याओं के निराकरण हेतु उपाय भी सुझाए गये हैं। इसमें शिक्षकों का समाज में महत्व तथा समाज निर्माण में शिक्षकों की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते हुए शिक्षकों के लिए उच्चतर दर्जा और उनके प्रति आदर और सम्मान के भाव को पुनर्जीवित करने एवं शिक्षण व्यवसाय में बेहतर लोगों को शामिल करने हेतु उन्हें प्रेरित किया जा सकें, यह शिक्षा नीति 2020 में सम्मिलित किया गया है।

नयी शिक्षा नीति 2020 में अध्यापक शिक्षा के महत्व को रेखांकित करते हुए एवं समाज में शिक्षकों का सम्मान एवं प्रतिष्ठा को पुर्नस्थापित करने एवं शिक्षक व्यवसाय को व्यवसायिक प्रतिस्पर्धा में उच्चतर दर्जा प्रदान करने हेतु विभिन्न बिन्दुओं पर शिक्षा की समस्याओं एवं उसका समाधान को इंगित करते हुए इसकी रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है। साथ ही यह स्वीकार किया

गया है कि शिक्षक वास्तव में बच्चों के भविष्य को आकार देते हैं और राष्ट्र के भविष्य का निर्माण भी करते हैं तथा विद्यार्थियों को निर्धारित ज्ञान, कौशल और नैतिक मूल्य प्रदान करते है। अतः नयी शिक्षा नीति 2020 में यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है कि शिक्षण व्यवसाय को एक आकर्षक व्यवसाय के रूप में स्थापित किया जा सकें तथा इस व्यवसाय को चयन करने वाला व्यक्ति का आखिरी पसंद ना होकर शिक्षण कार्य करना इसका प्रथम पसंद के रूप में स्वीकार किया जा सके। यदि कोई अध्यापक, अध्यापक बनना चाहता है तो शिक्षक व्यवसाय को प्रारंभ से ही अपने व्यवसाय चयन के रूप में स्वीकार कर सकें। इस हेतु शिक्षण क्षेत्र में आ रही समस्याओं और चुनौनियों को ध्यान में रखते हुए तथा विभिन्न समस्याओं और उनके निराकरण तथा शिक्षण व्यवसाय को आकर्षक बनाने हेतु इसके स्वरूप को निर्धारित करते हुए अध्यापक शिक्षा की रूपरेखा प्रस्तुत किया गया है ।

शिक्षण कार्य एक ऐसा व्यवसाय है जिसके लिए उत्साह एवं समर्पण भाव की अधिक आवश्यकता पड़ती है, साथ ही साथ शिक्षण कार्य के लिए शिक्षण कौशलों के विकास के साथ – साथ बौद्धिक तैयारी की भी आवश्यकता पड़ती है। अतः शिक्षण व्यवसाय की प्रतिष्ठा को स्थापित करने के लिए आवश्यक नैतिक एवं विश्वसनीयता के स्तरों में सुधार सुनिश्चित करने और इसके द्वारा सफल विद्यालयी प्रणाली सुनिश्चित करने के लिए नियामक प्रणाली को उन निम्न स्तरीय गुणवत्ताविहीन और बेकार अध्यापक शिक्षा संस्थानों के खिलाफ नियमों के उलंघन के लिए एक वर्ष का समय दिये जाने के पश्चात् कठोर कार्यवाही करने का अधिकार होगा जो शैक्षिक मानदण्डों को पूरा नहीं पा रहें हैं।

अध्यापक शिक्षा के लिए बहु – विषयक के साथ – साथ उच्चतर गुणवत्तायुक्त विषयवस्तु और शैक्षिक प्रक्रियाओं की आवश्यकता होती है, अतः इसे ध्यान में रखते हुए सभी अध्यापक शिक्षा को बहु – विषयी संस्थानों में ही आयोजित किया जाना चाहिए। इसके लिए सभी बड़े बहु – विषयक विश्वविद्यालयों के साथ – साथ सभी सार्वजनिक विश्वविद्यालय और बहु – विषयक महाविद्यालयों का लक्ष्य होगा कि वे अपने यहां ऐसे उत्कृष्ट शिक्षा विभागों की स्थापना और विकास करें जो कि शिक्षा के क्षेत्र में अत्याधुनिक अनुसंधानों को अंजाम देने के साथ ही साथ मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र, समाजशास्त्र, भारतीय भाषाओं, कला, संगीत, इतिहास और साहित्य के साथ – साथ गणित जैसे अन्य विशिष्ट विषयों से संबंधित विभागों के सहयोग से भविष्य के शिक्षकों को शिक्षित करने के लिए बी. एड. कार्यक्रम भी संचालित करेंगें। इसके साथ ही साथ वर्ष 2030 तक सभी एकल शिक्षक शिक्षा के संस्थानों को बहु – विषयक संस्थानों के रूप में बदलने की आवश्यकता होगी क्योंकि उन्हें भी 4 वर्षीय एकीकृत शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को संचालित करने की अनुशंसा की गयी है।

नयी शिक्षा नीति के अनुसार वर्ष 2030 तक बहु – विषयक उच्चतर शिक्षण संस्थानों द्वारा प्रदान किया जाने वाला यह 4 वर्षीय एकीकृत बी. एड. कार्यक्रम स्कूली शिक्षकों के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता बन जाएगा। यह 4 वर्षीय एकीकृत बी. एड. शिक्षा और इसके साथ ही एक अन्य विशेष विषय जैसे भाषा, इतिहास, गणित, कम्प्यूटर विज्ञान, रसायन विज्ञान, अर्थशास्त्र, संगीत आदि में एक समग्र स्नातक डिग्री होगी। अत्याधुनिक शिक्षाशास्त्र के शिक्षण के साथ ही साथ शिक्षक शिक्षा में समाजशास्त्र, इतिहास, विज्ञान, मनोविज्ञान, प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा, बुनियादि साक्षरता और संख्याज्ञान, भारत से जुड़े ज्ञान और इसके मूल्यों, लोकाचार, कला, परंपराएं आदि शामिल होगा। 4 वर्षीय एकीकृत बी. एड. प्रदान करने वाला

प्रत्येक उच्चतर शिक्षण संस्थान, किसी एक विषय विशेष में पहले से ही स्नातक की डिग्री प्राप्त कर चुके उत्कृष्ट विद्यार्थियों के लिए 2 वर्षीय बी. एड. कार्यक्रम भी डिजाइन कर सकते हैं। किसी विशेष विषय में 4 वर्षीय स्नातक – स्नाकोत्तर डिग्री प्राप्त कर चुके विद्यार्थियों के लिए एक वर्षीय बी. एड. कार्यक्रम भी डिजाइन कर सकते हैं। इन 4 वर्षीय, 2 वर्षीय और 1 वर्षीय बी. एड. कार्यक्रमों में नामांकित उम्मीदवारों में से मेधावी विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तियों की स्थापन की जाएगी। अध्यापक शिक्षा प्रदान करने वाले उच्चतर शिक्षण संस्थान, शिक्षा और इससे संबंधित विषयों के साथ ही साथ विशेष विषयों में विशेषज्ञों की उपलब्धता को सुनिश्चित करेंगें। शिक्षक शिक्षा के लिए एक समान मानको को बनाए रखने के लिए पूर्व सेवा शिक्षक तैयारी कार्यक्रमों में प्रवेश राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी द्वारा आयोजित विषय और योग्यता परीक्षणों के माध्यम से होगा।

शिक्षा संकाय में नियुक्त अध्यापकों की प्रोफाइल में विविधता होना एक आवश्यक लक्ष्य होगा। परंतु शिक्षण तथा शोध के अनुभवों को महत्व प्रदान की जाएगी। सीधे – सीधे विद्यालयी शिक्षा से जुड़ने वाले सामाजिक विज्ञान के क्षेत्रों जैसे – मनोविज्ञान, बालविकास, भाषाविज्ञान, समाजशास्त्र, दर्शन, अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान से साथ ही साथ विज्ञान शिक्षा, गणित शिक्षा, सामाजिक विज्ञान शिक्षा और भाषा शिक्षा जैसे कार्यक्रमों से संबंधित विषयों में प्रशिक्षण प्राप्त संकाय सदस्यों को शिक्षक शिक्षा संस्थानों में नियुक्त किया जाएगा, जिसमें कि शिक्षकों की बहु – विषयी शिक्षा को और उनके अवधारणात्मक विकास को मजबूती प्रदान की जा सकें। पीएच – डी. छात्रों के लिए शिक्षक सहायक और अन्य साधनों के माध्यम से अर्जित किए गए वास्तविक शिक्षण अनुभव के न्यूनतम घंटे भी तय होंगें। देश भर के विश्वविद्यालयों में संचालित पीएच – डी. कार्यक्रमों का इस उद्देश्य के लिए पुनरून्मुखीकरण किया जाएगा ।

महाविद्यालय और विश्वविद्यालय के शिक्षकों के लिए सेवारत सतत् व्यवसायिक विकास का प्रशिक्षण मौजूदा संस्थागत व्यवस्था जारी रहेगा । शिक्षकों के ऑनलाइन प्रशिक्षण के लिए स्वंय/दीक्षा जैसे प्रौद्योगिकी प्लेटफार्मों के उपयोग को प्रोत्साहित किया जाएगाा ताकि मानकीकृत प्रशिक्षण कार्यक्रमों को कम समय के भीतर अधिक शिक्षकों को प्रशिक्षित किया जा सकें। सलाह (मेंटरिंग) के लिए राष्ट्रीय मिशन को स्थापित किया जाएगा जिसमें वरिष्ठ, सेवानिवृत्त, उत्कृष्ट संकाय सदस्यों को जोड़ा जाएगा, इनमें वे संकाय सदस्य भी शामिल होंगें जिनमें भारतीय भाषाओं में पढ़ाने की क्षमता है और जो विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षकों को लघु और दीर्घकालीन परामर्श, व्यवसायिक सहायता प्रदान करने के लिए तैयार होंगें ।

नई शिक्षा नीति में शिक्षकों की गुणवत्ता का स्तर और ऊपर उठाने के लिए कई प्रावधान किए गए हैं। नई व्यवस्था में शिक्षक पात्रता परीक्षा के स्वरूप में भी बदलाव होंगें। अभी तक टी. इ. टी. परीक्षा दो हिस्सों में बटी थी – कक्षा 1 से 5 के लिए तथा पार्ट 2 कक्षा 6 से 8 के लिए। परंतु अब स्कूली शिक्षा व्यवस्था को चार भागों में बांटा गया है – फाउंडेशन, प्रीपेरटरी, मिडिल, सेकेंडरी। इसके अनुसार शिक्षक पात्रता परीक्षा का पैटर्न भी निर्धारित होगा। सभी विषयों की परीक्षाएं और एक कॉमन एप्टीट्यूट टेस्ट का आयोजन नेशनल टेस्टिंग एजेंसी करेगा और जो उन्हे एक डेमोस्ट्रेशन या इंटरव्यू देकर स्थानीय भाषा में अपना ज्ञान का प्रदर्शन करेंगें, उन्ही को शिक्षक के रूप में नियुक्ति दिया जाएगा। नई शिक्षा नीति के अनुसार अब इंटरव्यू शिक्षक भर्ती प्रक्रिया का अभिन्न हिस्सा होगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में अध्यापक

की शिक्षा गुणवत्ता, भर्ती, पदस्थापना, सेवा शर्तो और शिक्षकों के अधिकारों की स्थिति पर विशेष ध्यान दिया गया है।

इस प्रकार 27 अक्टूबर 2021 को शिक्षा मंत्रालय 4 वर्षीय एकीकृत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम को अधिसूचित किया है, जो एक दोहरी प्रमुख समग्र स्नातक डिग्री है जिसके तहत बी. ए. बी. एड./बी.एस सी. बी.एड. और बी. कॉम बी.एड. पाठ्यक्रम पेश किया गया है, जो राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत अध्यापक शिक्षा से संबंधित किए गए प्रमुख प्रावधानों में से एक है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसार वर्ष 2030 से शिक्षकों की भर्ती केवल एकीकृत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम के माध्यम से होगी। इसे प्रारंभ में देश भर के लगभग 50 चयनित बहु – विषयक संस्थानों में पायलट मोड में प्रारंभ किया जाएगा।

शिक्षा मंत्रालय के तहत राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (एन.सी.टी. ई.) ने इस पाठ्यक्रम को इस तरह से तैयार किया है कि यह एक छात्र – शिक्षक को शिक्षा में डिग्री के साथ – साथ इतिहास, गणित, विज्ञान, कला, अर्थशास्त्र या वाणिज्य जैस विशेषीकृत विषयों में डिग्री प्राप्त करने में सक्षम बनाता है। एकीकृत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम न केवल अत्याधुनिक अध्यापन कला प्रदान करेगाा, बल्कि प्रारंभिक बाल देखभाल और शिक्षा, मूलभूल साक्षरता और संख्या ज्ञान, समावेशी शिक्षा और भारत तथा इसके मूल्यों/लोकाचार/कलाओं/परंपराओं व अन्य चीजों की समझ विकसित करने में आधार तैयार करने का काम करेगा। चार वर्षीय एकीकृत अध्यापका शिक्षा कार्यक्रम उन सभी छात्रों के लिए उपलब्ध होगा जो माध्यमिक शिक्षा के बाद शिक्षण को एक व्यवसाय के रूप में लेना चाहते हैं। इस एकीकृत पाठ्यक्रम से छात्रों को काफी लाभ होगा क्योंकि वे वर्तमान बी. एड. पाठ्यक्रम के लिए आवश्यक पांच साल के बजाय चार साल में ही इसे पूरा कर लेंगें, जिससे उनके एक साल की बचत होगी। राष्ट्रीय परीक्षा एजेंसी (एन.टी. ए.)द्वारा राष्ट्रीय सामान्य प्रवेश परीक्षा के माध्यम से इस पाठ्यक्रम में प्रवेश दिया जाएगा। यह पाठ्यक्रम बहु – विषयक संस्थाओं द्वारा प्रस्तुत किया जाएगा और यह स्कूली शिक्षकों के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता बन जाएगा।

अतः शिक्षा मंत्रालय ने यह विश्वास जताया है कि चार वर्षीय एकीकृत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के प्रमुख उद्देश्यों में से एक को पूरा करने में एक मील का पत्थर साबित होगा। यह पाठ्यक्रम पूरे अध्यापक शिक्षा क्षेत्र के पुनरोद्धार में महत्वपूर्ण योगदान देगा। भारतीय मूल्यों और परंपराओं के आधार पर तैयार बहु – विषयक वातावरण के माध्यम से इस पाठ्यक्रम में पढ़ने वाले भावी शिक्षकों को वैश्विक मानको पर 21 वीं सदी की जरूरतों के अनुसार शिक्षा दी जाएगी और इस प्रकार यह नए भारत के भविष्य को आकार देने में काफी हद तक सहायक होगा। अतः नई शिक्षा नीति 2020 का सर्वोच्च उद्देश्य शिक्षा व्यवस्था के प्रारूप को उत्कृष्ट बनाना और भारत को विश्व में वैश्विक ज्ञान महाशक्ति एवं विश्व गुरू के रूप में पुनः स्थापना करना है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

1. पाठक; पी० डी० : भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा – 2
2. पूनम मदान; गुरसरन दास त्यागीःसमसामयिक भारतीय समाज और शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा
3. पाठक; पी० डी० : समसामयिक भारतीय शिक्षा, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा – 2
4. चौबे; डॉ० सरयू प्रसाद : तुलनात्मक शिक्षा, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा – 2
5. डॉ० तिवारी; रविन्द्र नाथ : राष्ट्रीय शिक्षा नीति और शिक्षक
6. पाण्डेय; डॉ० रामशकल : भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा –2
7. पाण्डेय; डॉ० रामशकल : भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा
8. बलवन्त; राणा : उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा – 2
9. चौबे; डॉ० सरयू प्रसाद : शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा – 2
10. श्राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार
11. Gaur; Dr. A.K. : New Dimensions of Education, shri vinod pustak Mandir
12. Aggarwal; J.C. : Education policy in India 1992 and Review 2000 and 2005, Shipra publication, New Delhi
13. Aggarwal; J.C. : Development of Education system in India, shipra publicationNew Delhi
14. rashtriyashiksha.com

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

नई शिक्षा नीति 2020 में प्राथमिक शिक्षक

संजू रंजना होरो
सहायक प्राध्यपक, बी०एड० संकाय
डा०एस० राधाकृष्णन् शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय
बड़की लारी, रामगढ़, झारखण्ड़।

डॉ सर्वपल्ली राधाकृष्णन के अनुसार–
''शिक्ष व्यक्ति को ओर सामाजिक के सर्वतोन्मुखी/र्सवांगीन विकास की सशक्त प्रकिया है।''
सभी बालक/बालिकाओं के लिए स्कूली शिक्षा व्यवस्था हो, और उन्हें बेहतर एवं उचित शिक्षा प्राप्त हो सकें। इसके लिए भारत सरकार के द्वारा शिक्षा नीति का प्रावधान किया जाता है सबसे पहली शिक्षा नीति 1968 में बनायी गई थी, जिसमें राष्ट्रीय विकास के प्रति वचनबद्ध, चरित्रवान, तथा कार्य कुशल युवक–युवतियों को तैयार करने का लक्ष्य रखा गया था। फिर द्वितीय शिक्षा नीति 1986 में आई जिसका संशोधन 1991 में आया। जिससे प्रभावी शिक्षा नीति के रूप में स्वीकृत किया गया है जिसमें शिक्षा व्यवस्था में सुधार करते हुए 10+3+3+4 स्वरूप पर आधारित है। भारत में यह नई शिक्षा नीति लगभग 34 वर्ष के बाद तैयार किया गया है। जिससे अंतरिक्ष वैज्ञानिक के० कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली समिति ने 29/07/2020 को तैयार की गई। इस नई शिक्षा नीति के अंतर्गत स्कूली शिक्षा के साथ–साथ तकनीकी शिक्षा सहित उच्च शिक्षा में विभिन्न सुधारों का प्रस्ताव करती है। राष्ट्रीय शिक्षा 2020 में स्कूली शिक्षा के साथ–साथ उच्च शिक्षा में क्रियान्वयन के लिए कई गतिविधियों का उल्लेख किया गया है।
नई शिक्षा नीति का उद्देश्य भारत के युवाओं को समावेशी और सामान्य गुणवता वाली शिक्षा सुनिश्चित करना है वर्ष 2015 में भारत में संयुक्त राष्ट्र के वैश्विक शिक्षा विकास के चार एजेंडा को अपनाया है जिसके तहत भारत समावेशी और समान गुणवता शिक्षा को 2030 तक पूर्ण रूप से लागू करना चाह रहा है।
नई शिक्षा नीति 2020 के अंतर्गत 12वीं कक्षा तक की शिक्षा को चार स्तर में दिया जाएगा। सबसे पहले शिक्षा फांउडेशन स्तर फिर प्रिपरेटरी स्तर पर, उसके बाद मिडिल स्तर पर और अंतिम में सीनियर सेकेंडरी स्तर पर दी जाएगी।

फांउडेशन स्तर और कक्षा 1 एवं 2 तकः–

शुरूआत की पांच वर्ष फांउडेशन स्तर इसमें प्री–प्राइमरी की शिक्षा 3 साल तक तथा कक्षा 1 एवं 2 कक्षा की पढ़ाई होगी। जहां पहले सरकारी विद्यालयों में 6 वर्ष में दाखिला होता था अब 3 में ही नामांकन होगा। इसमें बालकों को पढ़ाया जाएगा, परंतु परीक्षाएं नहीं होगी। जिसे बालको के मन में परीक्षा का भय नही होगा।

प्रिपरेटरी स्तर (3 वर्ष) और कक्षा 3, 4 और 5 तकः–

प्रिपरेटरी स्तर में बालक तीसरी कक्षा में होगा। इसमें 3, 4, तथा कक्षा 5 तक की पढ़ाई होगी। इसमें मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा में शिक्षा प्रदान किया जायेगा। इसी स्तर से बच्चे परीक्षा देना शुरू करेंगे।

मिडिल स्तर(3 वर्ष) और कक्षा 6, 7 एवं 8 तक :–

कक्षा 5वीं के बाद बालक मिडिल स्टेज में आएगा। इसमें कक्षा 6, 7, एवं 8 तक रहेगा। इस में बालक को व्यवसायिक शिक्षा दिया जायेगा। जैसे कोडिंग, सिलाई कंप्यूटर इत्यादि। जिसकी पढ़ाई किसी भी भारतीय भाषा में दी जाएगी।

सीनियर सेकेंडरी (4 वर्ष) और कक्षा 9, 10, 11, 12 तकः–

इसमें बालक नवी से पांव तक रहेगा इस में बाल सि बीवी से मैं पढ़ाई करना चाहता है विषय रह सकता है साइंस कॉमर्स आर्ट्स की सभी ट्रेनिंग को हटा दिया जाएगा बहू विषय का प्रावधान है बालक जो भी विषय पढ़ना चाहता है जिससे सकता है इसपर इसपर नानी में भी बतलाओ किया गया है अब 9वी से 12वीं तक समस्त परीक्षा हो कीरत hm में एक सेमेस्टर परीक्षा होगी विदेशी भाषा की शिक्षा ही जाएगी।

प्राथमिक स्तर पर नई पाठ्यचर्या और शैक्षणिक संरचनाः–

प्राथमिक शिक्षा पर जो देश के साथ में बाल्यावस्था और शिक्षा के लिए एक राष्टीय पाठ्यचर्या और शैक्षणिक ढांचे को भी विकसित करेगा। इस पाठ्यचर्या और शैक्षणिक ढांचे में 6 वर्ष तक के बालकों को शामिल किया जाएगा। प्रांरभिक बचपन, दंखभाल, शिक्षा, आंगनबाड़ी और प्री स्कूल जैसे संस्थानों के व्यापक नेटवर्क के माध्यम से वितरित की जाएगी। शिक्षकों और आंगनबाड़ी कार्यकर्ताओं को ई०सी०सी०ई० में निवेश करने से इसकी पहुँच देश के सभी बच्चों तक हो सकती है जिससे सभी बच्चों को शैक्षिक प्रणाली में भाग लेने और तरक्की करने के समान अवसर मिल सकेंगे। ई०सी०सी०ई० संभवतया, समता स्थापित करने में सबसे शक्तिशाली माध्यम हो सकता है।

ई०सी०सी०ई० में मुख्य रू॰ से लचीली, बहुआयामी, बहु–स्तरीय, खेल–आधारित गतिविधि आधारित और खोज–आधारित शिक्षा को शमिल किया गया है। इस का उद्देश्य बच्चों का शारीरिक–भौतिक विकास संज्ञानात्मक विकास, समाज–संवेगात्मक–नैतिक विकास, सांस्कृतिक विकास, संवाद के लिए प्रांरभिक भाषा साक्षरता और संख्यात्मक ज्ञान के विकास में अधिकतम परिणामों को प्राप्त करना है।

एन०सी०ई0आर०टी० (राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद) द्वारा 8 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिए दो भागों में प्रांरभिक बाल्यावस्था की शिक्षा के लिए एक उत्कृष्ट पाठ्यक्रम और शैक्षणिक ढांचा विकसित किया जाएगा, अर्थात् 0–3 वर्ष के बच्चों के लिए एक सब–फ्रेमवर्क और 3–8 वर्ष के लिए एक अन्य सब–फ्रेमवर्क का विकास किया जाएगा। इस में उन प्रथाओं को जो भारत में कई शताब्दियों से बाल्यावस्था की शिक्षा के विकास के लिए समृद्ध है और वे स्थानीय परंपराओं में विकसित हुई है जिसमें कला, कहानियाँ कविता, खेल, गीत और बहुत कुछ शमिल है।

ई०सी०सी०ई० ने पिछडे जिलों और उन क्षेत्रों पर विशेष ध्यान और प्राथमिकता देनी होगी जो सामाजिक और आर्थिक रू॰ से पिछड़े है। विस्तृत और सशक्त ई०सी०सी०ई० संस्थानों द्वारा कुछ बातों को लागु किया जाएगा–

1. पहले से काफी विस्तृत और सशक्त रूप से अकेले चल रहे आंगनबाडियों के माध्यम से।
2. प्राथमिक विद्यालयों के साथ स्थित आंगनबाड़ियों के माध्यम से ।
3. पूर्व प्राथमिक विद्यालयों, जो कम से कम 5 से 6 वर्ष पूरा करेंगे और प्राथमिक विद्यालयों के साथ स्थित है।
4. सभी विद्यालय ई०सी०सी०ई० के पाठ्यक्रम और शिक्षण में प्रशिक्षित कर्मचारियों/शिक्षकों को भर्ती करेंगे

प्रांरभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा की सार्वभौमिक पहुँच के लिए, आंगनबाड़ी केंद्रों को उत्चतरगुणवत्ता के बुनियादी ढांचे, खेल के उपकरण एवं पूर्ण रू॰ से प्रशिक्षित आंगनबाड़ी शिक्षकों के साथ सशक्त बनाया जाएगा। इसमें बालकों को गतिविधि के आधार पर पढने की बात कहीं गई है। मूल्यांकन की प्रक्रिया में भी बदलाव किये है जो छात्रों को उचीत मार्गदर्शन एवं केरियर मैपिंग में मददगार साबित होगा।

प्राथामिक शिक्षकों की भूमिकाः– नई शिक्षा नीति 2020 में शिक्षकों को बहुत सी नई जानकारी एवं नई कार्यों को जोड़ा गया है ताकि बच्चों को बेहतर एवं गुणवक्ता युक्त शिक्षा दि जा सके।

1. हर बच्चे की विशिष्ट क्षमताओं की स्वीकृति, पहचान और उनके विकास हेतु प्रयास करना–
2. बुनियादी साक्षरता एवं संख्यातान को सर्वाधिक प्राथमिकता देना।
3. लचीलापन–
4. रचनात्मकता और तार्किक सोच–
5. बहु–भाषिकता–
6. नैतिकता, मानवीग और संवैधानिक मूल्य–
7. तकनीकी के यथा संभव उपयोग पर जोर–
8. विविधता और स्थानीय परिवेश के लिए एक सम्मान
9. शिक्षकों और संकाय को सीखने की प्रक्रिया का केन्द्र मानना
10. उत्कृष्ट स्वर का शोध
11. शिक्षा एक सार्वजनिक सेवा है।
12. भारतीय जड़ों और गौरव से बंधे रहना।

इसके अलाव भी अन्य कार्य होता हैः–

1. छात्रों के बीच सहयोग
2. आत्म–सम्मान और विरासत
3. जिज्ञासा को बढ़ावा देना
4. सत्यनिष्टा और सत्यनिष्ठा का जन्म
5. जिम्मेदारी लेना

निष्कर्षः–NPC-2020 में प्राथमिक शिक्षक छात्रों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शिक्षक की मूल बातें कक्षा में बच्चों को केवल ज्ञान प्रदान करना नहींळ। बल्कि बालकों की नैतिकता का विकास में सहायता करना।

संदर्भः–

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार
   Page-6, 7, 8, 9, 10
2. Ennai.com

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

ARTS IN TEACHER EDUCATION : CHALLENGES AND OPPORTUNITIES

Mr. Sonam Sinha
Assistant Professor
Dr. S. Radhakrishnan Teachers' Training College,
Sukrigarha, Lari

ABSTRACT

Making arts and integral part of B.ed Curriculum is positive map forward. It gives the future teacher and opportunities to connect with their students in artistic ways like through music, acting, Painting it entrances this skill as well as their personality . Curriculum reports creativity and expressions are entrance as students are inspired to thin out of the box art education enables the learner to be become aesthetically competent and professionally skilled Arts promotes and develops certain skills and characteristics Drama and Arts can be extremely helpful in the all round development of the students the arts and education can be seen in the three contents – as a means to build an appreciative and informed audience, as means to develop the professional arts practitionersand to prepare students to engage in a creative cultural life including the music, Dance, Drama and Fine Arts in Teacher Education enhances the Horizon of teachers educators as well as their students – teachers, which ultimately helps to helps to have a balanced & enriched life worth to look forward however, there are some hindrances, using cert like the defiance of being open to changes, No knowledge of any of the performing Art, Scarcity of resources etc. Buton the brighter side we have many ways for development of art skills& by adopting them we can improve the quality of education to benefit our present & future generation. This paper is above the meaning and advantages of arts in education and the difficulties is using art in education and few ways to overcome such difficulties

INTRODUCTION

Creativity is allowing yourself to make mistakes. Art is knowing which ones to keep Art and education effect each other and even have some common areas. The human being come to the world with an innate capacity to learn. Art and Art education helps a man to blossom like a perfect flower with all its color the beauty

Education is an effective and powerful tool for empowering people to lead a life of dignity and essential for achieving sustained high economic growth as well we live in the age where human knowledge is increasing exponentially and educational institution have to make an effort to remain on the frontiers of knowledge for India to be counted among the advanced nations as lvell Due to this the term art in considered as a more source of recreation and nothing more

Art is an anpression of all characteristics of the human mind aesthetically These characteristics, i.e. the varied human emdions, are known as 'RAS'.

It can be categorized in to nine sub – Readings a nakras Love, Humor, Pathos, anger, heroism, terror, disgust, wonder and sereniby are the navarasas or nine basic emotions which are fundamentals to all India aesthetics.

Human being have always made art of some or another because is satisfies a human need to communicate experience knowledge and ideas through aesthetic languages/symbols. It is classified into several overlapping categories, for instance performing, fine, visual , plastic, decorative and applied.

The performing art is a form of art in which artists we their voices and/or their bodies offer in relation to other objects to express his/her opinion, emotion, feelings by means of performances such as theatre music and public speech performing arts may include dance, music, opera, threatre and musical theatre, magic, illusion, mine, spoken word, puppetry, circus arts, performance arts recitation and public speaking. Performing art have immense effect on learning enhancement :-

- Speech and commemoration
- Motor Skills
- Social Skills
- Practicing emotional behavious
- Helps critical thinking
- Explore new ideas

The fine arts includes Drawing, Painting sculpture, printmaking design, crafts, photography, vicko, filmmaking, literature and architecture

The Plastic art are art forms which involves physical manipulation of plastic medium by moulding or modeling such as sculpture or ceramics. The term has also been applied more broadly to all visual arts (Such as painting , sculpture, film and photo graphy)

The decorative arts are arts or crafts concerned with the design and manufacture of beautiful object that are also functional it includes interior design but not asucelly architecture

The applied arts are the application of design and decoration to everyday objects to make them athetically pleasing.

Presently, all the part form are flourishing in the country. Several institution have been imparting training in these art forms for more tham fifty years A number of schools, colleges and universities in India have adopted these art forms as a part of their curriculum

Recently, Mumbai university included Drama and Art in B.Ed syllabus in the form of one subject ie EPC enhancing personal capacities previously, some teachers educators used to integrate Arts into classroom to make their teaching effective they used to take help of paintings, song and even make student teachess act in role – play, drama, puppet, shows, to make teaching learning effective.

Making performing art an integral part of B.Ed curriculum is positive step forward it gives the future teachers on opportunity to connect with their student in artistic ways like through music, acting, painting it enhances it their skills as well as their personality

Benefits of Arts :-

Art closely linked to almost everything that we as a nation say we want for our children and demand from our schools. Arts promotes and develops certain skills and characteristics. Drama and Arts can be extremely helpful in the all round – development of the students followings are the main benefits of Arts and drama in the teachers – education.

1. **Empathy and Compassion for others :-**
   The creativity involves in performing arts curtness to emotional creativity and can open students to new ways of seeing the world.
2. **Self reliance as well as collaboration :-**
   Arts help student teachers both self reliance as well as collaboration with others. The learn that they can teach in many different pathways to develop a skill.
3. **Teamwork :-**
   In group settings, their less of a focus on winning or losing and more about working together as a team towards a shared performance goals, as well as the childs individual journey of developments students teachers increased trust on each other.
   However, a part from these there are other benefits of using arts in teacher – education.
   i.) It develops reasoning and creative thinking of the student teachers.
   ii.) It motivates the students – teachers and make them concentrate toward their teaching.
   iii.) Art and drama keep the student teacher healthy.
   iv.) It improves balance and enhanced spatial awareness.
   v.) It helps in increasing the confictence.
   vi.) It develop students expressive musical, motor and auditory skills.
   vii.) It reduces social isolation and exclusion.
   viii.) Through the medium of music, the students – teachers can be inspired to develop interest in academics
   ix.) It fosters respect for and appreciation of the diverse cultural heritages and values of India and the world
   x.) It provides student teachers with pleasure enjoyment and a deepened awareness of themselves and their place in the environment, community and culture.
   xi.) It develops individual potential, social responsibility and cultural awareness.
   xii.) It improves student- teachers social skills behaviours.

B.Ed curriculum has drama and arts as a practical subjects many college don't appoint special art teacher to handle the subjects however there are the actual/difficulties/hindrance in handling this subject therefore the flow of knowledge keeps finding its way in to the pupil teacher's life.
Following are the hindrance of handelling Drama and Arts subjects in teachers education institutions.

1. **The defecince of being open to changes.**
   Negative attitude of some principals and teaching staff is the major hindrance in using performing art in teaching many teacher educators refuse to change their teaching style, as they do not suppose other teacher educators.

2. **No knowledge and training of any of the performing art:-**
   Some B.ED college do not appoint expert to handle this EPC-2 subject however the teacher educators, who so not have proper knowledge of performing arts have to handle this subject and they may provide limited subject and they may provide limited or wrong knowledge to the students.
   Such teachers do not assess art skills of their student-teacher properly.
3. **Scarcity of Resource**
   Many B.ED collage do not have proper rooms, equipments to handle Drama and Arts subjects. Until proper equipments are made available for most teacher educators we cannot be expected to utilize performing art based activities Lack of funding is other challenges.
4. **Negative attitude of some student teachers:**
   There are few student-teachers who are like book-worms. They don't show much interest in music, art and drama.
   They may not think that it is an effective subject. They don't like to perform and always feel that it is an wastage of time and money.
5. **Shy student**
   Some students-teachers are self-conscious they don't involves in the arts related activities easily. To enhance such skills among such student is big challenges.

Some ways of integrating of Arts in education.

Despite strong suppose and a growing body of research about the positive influence of dance, music theatre and visual arts learning on students and schools outcomes, the arts are too often marginal to education. Here are some ways of integrating of arts in education.

1. The teacher educator should allow students participation in workshops, seminars and short courses (in service and pre-service) that offers structured opportunities for acquision of advance performing art skills.
2. The teachers educators and student teacher participation in such programs should be awarded the certificates, which should be recognized by government as a teachers professional credit courses.
3. After preliminary exposure and practice, student could be given. 1st assignment. Assignments should be based on learner's prior experience, imagination and observation and curiosity.
4. Curriculum must provide opportunities for children with special educational need to show capabilities and independent achievements .
5. Art session should be broken down into smaller units to facilitate learning but they should be challenged to too to stretch their lend of activity.
6. While direct explanation seems the best approach to expedite learning any specific subjects it is well known that the ability to deeply absorb facts and concepts is greatly enhanced by placing them in a _____ context of relevance to the issues of everyday life

and to the larger goals of improvement of the quality of life and advancement to a more evolved society as a whole.

7. Teacher educators should b4e trained and positive towards performing arts.
8. It the number of students – teacher is more then divide them into small groups and conduct activities which enables the teacher educators to supervise then properly.
9. Books on art forms, artistic etc. and audio-visual material on various art forms should be there in the library
10. Take students to art and drama centers, theatre programs, music consorts.
11. Encourage the student – teacher to use music dance and drama in their internship program.
12. Student – teacher should be encouraged to decorate the classroom like and art room.
13. Student teachers should to be allowed to display Arts, parts and paintings etc at regular intervals
14. Organize the _____ with the performers artist and artisans should be arrangedin college.
15. Reward teacher educations who use performing art by providing etc as they show an increased interest and proficiency.

Conclusion :-

Arts in modern education help to stimulate creativity, inspire confidence, and fortes personal growth it is necessary part of any student education and should be encouraged at all B.Ed colleges.

Art learning can also improve. Mdivation, concentration, confidence and teamwork the arts and education can be seen in three contexts as a means to builds and appreciative and informed audience, as a means to develop the professional arts partitions and to prepare students to engage in creative cultural life.

Reference :-

1. Ms.MalavikaAhlawat (2017) “ART IN TEACHER EDUCATION” (PP. 53-58)
2. http://www.ncert.nic.in
3. http://en.m.wikipedia.org
4. http://.the manthanschool.co.in/blog/importance-art-inmodern-education/
5. https://.icn.unesco.org.(pdf) 6. https://www.nios.ac.in(pdf)

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 ISSN : 2249-7331
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

BLOCKCHAIN & CRYPTO-CURRENCY LAWS AND REGULATIONS IN INDIA

Rajendra Kumar Yadav
Research Scholar, Faculty of Law,
Banaras Hindu University, Varanasi

ABSTRACT: *Crypto-currencies are digital tokens used as a medium of exchange, secured and verified by cryptography. They are designed to be quicker, cheaper and more reliable than the regular government-issued money given the virtual nature of the token, and they allow the users to store, send and receive the currency without the aid of the government or any other intermediary in an affordable manner. At present, there is no legal framework governing crypto-currencies. Despite the vacuum in legislation, regulators such as the Reserve Bank of India (RBI) have issued various cautionary circulars deterring individuals from dealing in crypto-currencies. By contrast, regulators such as the Securities Exchange Board of India (SEBI) have remained silent on regulating crypto-currencies. In this article, the attempt of the author is to navigate through the global developments as regards crypto-currency and suitability to Indian money and capital market, thereafter examine the regulatory issues that are critical to the evolution and growth of crypto-currency in India.*

Keywords:, crypto-currency, crypto-assets, Bitcoin & Block chain etc.

I. INTRODUCTION: In broad terms, a crypto-currency is a virtual or digital money that takes the form of tokens or "coins." The prefix "crypto" owes its origin to complicated cryptography that allows for the creation and processing of digital currencies and their transactions across decentralized systems. Primarily, crypto-currencies are developed as code by teams who build in mechanisms for issuance through a process called "mining" and other controls. Over the last five years Bitcoin price has increased more than 700 times and there are at least 35 Bitcoin exchange markets where Bitcoin prices are quoted in standard currencies, each with the daily transaction volume above one million USD[1]. Currently, there are over 1,500 virtual currencies in existence,[1] all with differing properties, and their categorisation depends upon the nature of each.5 For instance, some are intended to be electronic cash (e.g., Bitcoin) and some are intended to be 'gas' for computer processing operations (e.g., Ether).

However Crypto-currencies are neither regulated nor prohibited. Individuals and entities are permitted to hold, invest in, and transact crypto-currencies, provided they comply with existing laws while doing so. Further, any bank or other entities regulated by RBI will need to carry out due diligence processes in line with existing laws and regulations. It will become difficult to create crypto-currencies. As of now, anyone with a working internet connection can make a crypto coin. The regulations may ensure that only those who fulfils certain criteria are able to create crypto. One important thing that remains

to be seen is who will regulate crypto-currencies. The Reserve Bank of India (RBI) seems to be the most logical option but has expressed intentions of introducing its own crypto. The other possible option among the existing organisations is SEBI. It won't be surprising if the government comes up with a new body altogether for regulating crypto.

II. CONCEPT OF CRYPTO-CURRENCY AND LEGAL STATUS OF CRYPTO-CURRENCY: Crypto-currency, sometimes called crypto-assets or crypto, is any form of currency that exists digitally or virtually and uses cryptography to secure transactions. Crypto-currencies don't have a central issuing or regulating authority, instead using a decentralized system to record transactions and issue new units**.** A crypto-currency is an encrypted data string that denotes a unit of currency. It is monitored and organized by a peer-to-peer network called a blockchain, which also serves as a secure ledger of transactions, e.g., buying, selling, and transferring. Unlike physical money, crypto-currencies are decentralized, which means they are not issued by governments or other financial institutions. Crypto-currencies are created (and secured) through cryptographic algorithms that are maintained and confirmed in a process called mining, where a network of computers or specialized hardware such as application-specific integrated circuits (ASICs) process and validate the transactions. Bitcoin, Ethereum, Litecoin, Ripple and Monero are popular crypto-currencies.

This is a very common question that whether it is legal to own or possess crypto currency, use crypto currency in commercial transactions and exchange crypto currency for local fiat currency in your jurisdiction? While there is ambiguity on the legality of crypto-currencies, pursuant to the RBI Circular (ie, restricting any RBI-regulated entity such as banks and financial institutions from dealing in crypto-currency), no exchange of crypto-currency for local fiat currency can be affected. Further, in the event that the Inter-ministerial Committee Report and Draft Bill on Virtual Currencies is enacted, no person can hold crypto-currency unless to use the underlying technology or process for experimental, research or educational purposes, provided that the crypto-currency is not used to make or receive payment in such activity.

III. ORIGIN AND CREATION OF CRYPTO –CURRENCY:

The most popular crypto-currency, bitcoin, was created in 2009 by one or more individuals under the pseudonym "Satoshi Nakamoto".[1] However, much before the creation of bitcoins, early work on crypto-currencies can be traced back to the 1980s when a David Chaum wrote extensively on cryptography and digital cash in his papers 'security without Oidentification[1]', 'blind signatures for untraceable payments'[1] and others. The idea was eventually executed and "DigiCash" was invented in 1994. However, ultimately, in 1998, DigiCash had to file for bankruptcy since ecommerce had not fully evolved. A few more quasi-crypto-currencies reared their heads. Dr. Adam Black created "Hashcash" in 1997, which was akin to Digicash, but with an anti-spam mechanism where cost was levied on users for sending emails, which prevented spamming. "B-money"[1] was created in 1998 by Wei Dai, a computer scientist, to serve as a medium of exchange and a way to enforce contracts between anonymous parties. His work has been referred to by Satoshi Nakamoto in his paper on bitcoins.

Nick Szabo, a computer scientist and a lawyer came up with a theory of collectives and proposed "bit gold" in the form of a digital collectible, in 2005[1]. However, bit gold was never implemented. Based on Nick Szabo's theory of collectibles, Hal Finney invented Reusable Proof-of-Work (RPOW)[1] as a prototype for digital cash[1]. Hal Finney was also the

first ever recipient of bitcoin[1]. Creators of crypto-currencies have been inspired by a perceived need for 'privacy', a desire to eliminate governmental intermediaries and central authorities and create a currency that is not subject to local pressures such as hyperinflation.

IV. COMPARATIVE STUDY OF THE LAWS REGULATING CRYPTO-CURRENCY: Over the past few years crypto-currency became more systemically important, and have emerged as estate assets. In this environment as there is no agreed upon definition of crypto-currency different countries have enacted different regulatory policies. Some countries like China have prohibited the use of any crypto-currencies entirely and some countries (Example Switzerland and Venezuela) have embraced the idea of crypto-currency to attract foreign investments, while the other have taken the "wait and watch policy".

a. **United State of America[1]:** In the United States, there is no separate regulatory framework for crypto-currencies. Though crypto-currencies are not legal tender in the United States, the trading activities are not entirely prohibited, though heavily monitored. They are regulated by different regulatory bodies under the existing legal framework. Currently, the Security and Exchange Commission (the SEC), the Commodity and Futures Trading Commission (the CFTC), the Federal Trade Commission (the FTC), and the Department of the Treasury regulate the crypto-currency related activities. The digital assets and the tokens are considered as an "investment contract". In 2019 The SEC also released a framework to determine when a digital token should be considered as securities.[1] A crypto-currency exchange and the administrator who has the authority to issue and redeem the crypto-currency is regulated by the Department of Treasury through the Financial Crimes Enforcement Network and prohibits any anonymous accounts. In 2019 a new legislation "Crypto-Currency Act of 2020" was brought into the congress aiming to create a robust regulatory framework with clear power and regulatory liability distinction.[1]

b. **United Kingdom:** Like the USA, the United Kingdom does not have any specific law to regulate the crypto-currency. All the crypto-currency-related activities are regulated through already existing law like Financial Services and Markets Act 2000, the Payment Services Regulation 2017, and Electronic Money Regulations 2011. The UK Crypto-assets Taskforce has defined crypto-currency as "a cryptographically secured digital representation of value or contractual rights that uses some distributed ledger technology and can be transferred stored or traded electronically."[1] Regulators in the country have been cautious about crypto-currency regulations. Thought in the country, there is no blanket prohibition on activities related to crypto-currencies, regulators have advised to restrain from crypto-currency investments and warned about the risk involved through repetitive public notice[1].

c. **Switzerland:** Since the beginning, the position of the government of Switzerland has been encouraging for the crypto-currency industry. The government of Switzerland is open to new development in this front. In December 2018, the Swiss Federal Council's report on the regulatory framework for crypto-currency had concluded that the existing laws provide a sufficient regulatory framework for crypto-currencies.[1] On March 22, 2019, the Swiss Authorities proposed a new law to regulate the crypto-currency. Currently, the Swiss Financial Market Supervisory Authority (FINMA) does not consider crypto-currencies as security; instead, it is a "medium of exchange" and

"storage of value." Though trading involving crypto-currencies constitute security, and those activities are regulated as normal trading activities like dealer license requirement, platform regulation, or prospectus requirements[1].

d. **Japan:** Though the Government of Japan and the Bank of Japan do not recognize any crypto-currency as security nor it treats it as "money," Japan is one of the first countries to embrace crypto-currencies. In February 2014, a Japanese company MTGOX Co, Ltd, started the crypto-currency exchange services between the crypto-currency and different legal tender. It quickly became the world's largest crypto-currency exchange, and soon more business came into existence. With the booming business environment in the country, Japan was one of the first countries to regulate the crypto-currencies and bring specific laws specific to crypto-currencies. According to the law of Japan, crypto-currency is a method of payment rather than currency. Crypto-currency is defined as "proprietary value that may be used to pay an unspecified person the price of any goods purchased or borrowed or any services provided and which may be sold to or purchased from an unspecified person and that may be transferred using an electronic data processing system."1 To stop financial crimes, illegal trade, and terror financing, it mandatory for any services dealing with crypto-currencies to register with the Financial Service Agency. Through different legislation, they have been empowered to regulate crypto-currency-related services. Failing to register is a criminal offense for any entity or individual1.

V. PRESENT LEGAL FRAMEWORK GOVERNING CRYPTO-CURRENCIES: At present, there is no legal framework governing crypto-assets or crypto-currencies (a term used interchangeably with terms such as 'virtual currencies'). Despite the vacuum in legislation, regulators such as the Reserve Bank of India (RBI) have issued various cautionary circulars deterring individuals from dealing in crypto-assets. In 2018, pursuant to its circular of 6 April 2018 (the RBI Circular), the RBI banned all RBI-regulated entities (eg, banks, financing institutions and non-banking financial institutions) from dealing in crypto-assets. While this circular does not ban crypto-assets per se, it has blocked any financial dealing contemplated by a buyer, seller or trader of crypto-assets.

Given the lack of certainty, market participants have filed several petitions before the Supreme Court of India challenging the constitutionality of the RBI Circular and seeking clarity on the government's stance on the legality of crypto-assets and crypto-currencies in India. In response to these petitions, in July 2019 the government released draft legislation (Banning of Crypto-currency and Regulation of Official Digital Currency Act 2019), which seeks to ban any person from 'mining, generating, holding, selling, dealing in, issuing, transferring, disposing of or using crypto-currency in the territory of India'.

In April 2017, Finance Minister Arun Jaitley formed an interdisciplinary committee to assist in drafting a regulatory framework for crypto-currency in India. The committee submitted their report in August 2017, and the government has stated their intention to publish proposed rules on crypto-currency in the near future, though have yet to stipulate a date. As early as 2013, the Reserve Bank of India (RBI) began cautioning Indians of the risks and potential misuses of crypto-currency. A lack of understanding about how crypto-currency works in India has given rise to fraudulent and predatory schemes. Moreover, the recent global ransomware attacks, which affected India as well,

where cyber-hijackers demanded bitcoin in payment, has added urgency to the need for a government policy on crypto-currency.

In response, the Indian government is allegedly mulling the creation of its own form of digital currency to compete with the bitcoin called 'Lakshmi' (named after the Hindu goddess of wealth and fortune). This would be a largely unproductive strategy, given that the appeal of crypto-currency is its independence from governments. Many observers assume that crypto-currency will come under the gambit of the RBI, though Digital Currency Exchanges may also have to register under the Securities and Exchange Board of India (SEBI). The Indian government will most likely make crypto-currency taxable and create guidelines for Initial Coin Offerings (ICO) in which crypto-currency ventures raise funds in bitcoin and other digital monies. A central concern for the Bitcoin community in India, however, is how the government will define crypto-currency. Though referred to in terms of currency, given its slow transaction times and volatile value, bitcoin operates more like an asset. A decision to classify it as a currency instead of an asset would necessitate a large regulatory apparatus – constituting a serious discouragement for bitcoin usage in India.

VI. GOVERNMENT'S GENERAL APPROACH TOWARDS THE REGULATION OF CRYPTO- CURRENCIES/ASSETS: Since the 2013 boom in crypto-asset trading on the open market, the RBI and the Income Tax Department have been swift to shut down business operations involving crypto-assets. However, the government has switched between a negative and an agnostic approach. In his 2018 budget speech the finance minister announced that 'the government does not consider crypto-currencies as legal tender or coin, and will take all measures to eliminate the use of crypto assets in financing illegitimate activities or as part of the payment system'. This approach is also reflected in the draft legislation before Parliament, which explicitly bans the use of crypto-assets. By contrast, in September 2019 a report released by a committee set up by the Ministry of Finance (Department of Economic Affairs) acknowledged that 'Blockchain and Initial Coin Offerings (ICOs), are revolutionizing the global fintech landscape' and distinguished categories of crypto-currency, specifically utility and security tokens. Notably, the report made no policy recommendations on crypto-currency or blockchain, unlike other aspects of fintech (eg, agritech and know your customer).

The following year, in 2020, the NITI Aayog, a public policy think-tank of the government of India, published the first of a two-part draft strategy paper titled *Blockchain: The India Strategy, towards Enabling Ease of Business, Ease of Living, and Ease of Governance* ("**Strategy Paper**").[1] The Strategy Paper proposed a roadmap for broad adoption of blockchain technology for application in and to resolve business and governance process inefficiencies. The Strategy Paper recognised cryptocurrencies as token(s) that form an essential component of most public blockchains, and as a unique asset class that could denote ownership of the network (like shares of a company) and also form the basic unit of value exchange.

Almost a year after the first part of the Strategy Paper was published, the Ministry of Electronics and Information Technology released its draft *National Strategy on Blockchain* in January 2021 ("**Draft Strategy**").[1] This Draft Strategy highlighted

regulatory gaps in the legacy system to the widespread adoption of crypto-currencies including: (i) the ambiguous nature of tokens; (ii) lack of Know-Your-Customer ("**KYC**") norms; (iii) non-inclusion in the digital signature framework; and (iv) adequate provisions to data protection (including the right to be forgotten and localization norms) as hurdles to mass adoption. It is expected that a Proposed Bill should address these matters particularly.

1. **Sales Regulation:** India does not prohibit the sale and exchange of crypto-currencies, and as noted above, there are also no specific laws enacted in India to regulate or prohibit the trade of crypto-currencies or VCs. However, pieces of legacy legislation that deal with subjects such as: (i) trading and issuance of securities; (ii) trading of commodities; (iii) the acquisition and sale of assets to and from persons resident outside India; and (iv) acceptance of deposits by companies, are triggered in certain circumstances. The nature of the crypto-currency and its features will determine the regulatory mechanism that will be applicable to it, based on its categorization as either an asset, commodity, security, store of value, etc.

   If a crypto-currency is used as a "store of value", e.g. Bitcoin, then these crypto-currencies are freely tradable by individuals within India without any reporting requirements. Companies incorporated in India, on the other hand, are required to report any holdings in crypto-currencies/VCs to the Ministry of Corporate Affairs as part of their annual returns. Such crypto-currencies may come to be seen as either a commodity or an asset, which, if purchased or sold by an Indian resident outside India, would attract exchange control norms notified under FEMA.
2. **Taxation:** Profits and gains arising from the sale and trade of crypto-currency would be eligible to tax in India. The Indian government collects tax revenue via both direct (Income Tax) and indirect (Goods and Services Tax or "GST") taxation[1].
   a) **Income Tax**: Presently, crypto-currency has not been categorized as an asset class or goods. Having said that, profits and gains from sale of crypto-currency are eligible to Income Tax in one of two ways: (a) the law in India recognizes software as "goods" and income arising out of sale of software can be considered business income and be taxed as such; and (b) the sale of any capital asset, in this case, crypto-currency, would attract Capital Gains Tax. This would be established by assessing the period of holding, frequency of trading, size of holding as well as treatment in books of accounts.
   b) **Goods and Service Tax**: The sale of goods in India is subject to GST at specified rates pertaining to the type of goods sold. Should crypto-currency be classified as "goods", each transaction would attract GST. A seller is typically required to charge the buyer/service recipient the prescribed GST and deposit the same with the revenue authorities. There is an additional onus on the parties to the transaction to seek registration as tax entities under the GST regime as well.
3. **Ownership and Licensing Requirements:** In India, the activities of investment advisors and fund managers are governed by SEBI though the SEBI (Investment Advisers)

Regulation, 2013 and SEBI (Portfolio Managers) Regulation, 2019. While there is no specific restriction in the said regulations on advising on and managing crypto assets, the list of commodities that managers and advisers can deal in has been notified by SEBI35 and does not include crypto-currencies/VCs. Therefore, any investment advisers or fund managers currently providing services related to crypto-currencies/VCs in India are doing so in their personal capacity and not as advisers or managers licensed by SEBI. However, investment advisory companies and wealth management companies in India would mandatorily need to disclose their holdings and ownership of crypto-currencies/VCs to the government of India from the current financial year onwards owing to the CA Amendment. This may not be applicable to individual advisers and fund managers.

a) **What can be allowed:** Investors will be allowed to buy and sell crypto-currencies from exchange platforms that follow certain guidelines. India's approach towards crypto-currencies seems to be 'protective'. Any measure included in the crypto bill is likely to be towards ensuring that investors' money is protected. So, anyone who has invested in crypto need not panic. There are multiple signs suggesting that crypto will be classified as an asset class rather than a currency. This means people will be able to invest and grow their money in crypto. The government may start levying tax on crypto-currencies. The new bill may provide better clarity on how the government plans to tax crypto-currencies. It is believed that the government is exploring ways to generate revenue from crypto-currencies[1].
b) **What may not be allowed:** It will become difficult to create crypto-currencies. As of now, anyone with a working internet connection can make a crypto coin. The regulations may ensure that only those who fulfils certain criteria are able to create crypto. Crypto will not become a legal tender. Earlier this year, a lot of people rallied behind the idea of crypto-currency replacing the rupee or co-existing with it as a legal tender. That is highly unlikely now. In simple words, you will not be able to use Bitcoin to purchase a burger or pizza. One important thing that remains to be seen is who will regulate crypto-currencies. The Reserve Bank of India (RBI) seems to be the most logical option but has expressed intentions of introducing its own crypto. The other possible option among the existing organizations is SEBI. It won't be surprising if the government comes up with a new body altogether for regulating crypto.[1]

Under the draft legislation, 'crypto-currency' means any information, code, number or token generated through cryptographic means or otherwise that provides a digital representation of value that (1) may be exchanged, with or without consideration, with the promise of having inherent value in a business activity; and (2) includes the risk of loss or expectation of profits or which functions as a store of value. The only exception carved out regarding crypto-currency is the use of its underlying technology for experimental, research or educational purposes, provided that the crypto-currency is not

used to make or receive payment. Violation of the draft legislation may result in up to 10 years' imprisonment. While Parliament has yet to enact the draft legislation, it is likely that any application of crypto-assets or crypto-currency to undertake financial activities or operations in the payment ecosystem are prohibited.

4. **Authorities to Regulate Crypto-Assets and Businesses Transacting with Crypto-Currencies:** No specific government authority regulates crypto-currencies/assets and businesses transacting in crypto-currencies/assets. However, the Ministry of Finance (Department of Economic Affairs), the Ministry of Electronics and Information Technology, the SEBI and the RBI have been instrumental in drafting the proposed legislation to ban crypto-currencies/assets. Accordingly, these government entities and regulators have the authority to regulate crypto-currencies/assets and businesses transacting with crypto-currencies/assets.
5. **Penalties can Regulators Impose for Violations Relating to Crypto-currencies /assets:** At present, any entity regulated by the RBI which deals in crypto-assets would be in contravention of the RBI Circular and thereby liable for financial penalties. Despite the vacuum in legislation, the Income Tax Department has in the past issued notice or initiated proceedings which have required businesses dealing in crypto-assets to shut down. Further, criminal prosecutions may be initiated under the Inter-ministerial Committee Report and Draft Bill on Virtual Currencies, which could lead to a maximum of 10 years' imprisonment and monetary penalties being imposed.
6. **Jurisdiction of Court over Disputes Involving Crypto-Assets:** No special court or tribunal exercises jurisdiction over disputes involving crypto-assets. Absent an express or implied bar and depending on the financial and territorial nature of a dispute (i.e, civil or criminal), courts and tribunals can exercise jurisdiction in addition to an appeal lying before the State High Court and Supreme Court of India.
7. **JUDICIARY'S APPROACH TO CRYPTOCURRENCY:** A three-judge bench of the Supreme Court quashed the VC Notification *in* *Internet & Mobile Association of India v. RBI*[1] and held that despite crypto-currencies not being legal tender, they function as a medium of exchange, units of account and stores of value, which make crypto-currency viable for use as consideration for goods or services and subject to RBI's purview. The VC Notification was held as a colourable, disproportionate and unreasonable exercise of power. The court further observed that the RBI failed to demonstrate the extent of damage caused to regulated entities like banks and financial institutions while pointing out the risks and the illegal purposes associated with crypto-currency. While analyzing existing regulatory frameworks for crypto-currency, the court noted that a similar structure can be implemented in India.

On March 04, 2020, the Supreme Court of India gave the verdict on RBI's prohibition for financial institutions to deal with any entity engaging in the crypto-currency-related activity[1]. In the verdict, the Apex Court told that RBI in some sense had violated Article 19(1)(g) of the Indian constitution, providing fundamental right to practice any profession. As the businesses involving crypto-currency is not illegal in India, RBI cannot deny any business dealing with crypto-currencies access to the formal financial infrastructure. In the verdict, the Apex Court has said the arguments made by RBI on financial crimes lacks empirical evidence and that RBI has not proposed any alternative

measures to mitigate those risks, though, the judgment also acknowledged that this verdict based upon article 19 (1)(g) and does not cover any individual as stated in the verdict "Persons who engage in buying and selling virtual currencies, just as a matter of hobby cannot pitch their claim on Article 19(1)(g), for what is covered therein are only profession, occupation, trade or business."

The Apex court has also acknowledged after going through all the definitions a significant number of regulators that though "VCs are not recognized as legal tender," "they are capable of performing some or most of the functions of real currency." According to the verdict, money has three primary functions; "*It provides, namely (1) a medium of exchange (2) a unit of account and (3) a store of value. Finally, a fourth function, namely that of being a final discharge of debt or standard of deferred payment, was also added"*. Any crypto-currency satisfies all but the fourth functionality, which is the conferment of the legal tender status by a Government/central authority. Thus, crypto-currency satisfies the functionality of currency, and the Reserve Bank of India has authority over any crypto-currency to regulate it. As per the Apex court, "the users and traders of virtual currencies carry on an activity that falls squarely within the purview of the Reserve Bank of India.[1]"

VIII. CONCLOSSION: A complete ban on crypto-currency use is neither feasible nor efficient, keeping in mind the ambitions of the nation. The significance of crypto-assets in relation to the growth of blockchain technology has been observed by National Association of Software and Service Companies, which proposed a regulatory sandbox to address the risks[1], and by the report of the Steering Committee on Fintech related issues, which has commented on the inevitable role of crypto-currencies and ICOs in transforming the global fintech landscape[1]. NITI Aayog, the policy think tank of the Government of India, published a discussion paper which recognized and analyzed the areas that can be greatly benefitted by the use of blockchain technology[1]. Part 2 of the discussion paper is set to explore specific recommendations that would enable the growth of the blockchain ecosystem in the country. That said, at present, the legal framework around blockchain and crypto-currency is still uncertain and needs to be resolved at the earliest, to ensure appropriate actions are taken.

Different regulators should work together and classify crypto-currency activities in order to bring them under regulatory purview. A security under the Securities Contracts (Regulation) Act 1956, includes "shares, scrips, stocks, bonds, debentures, debenture stock or other marketable securities of a like nature in or of any incorporated company or other body corporate."[1] There is an ambiguity as to whether crypto tokens and other crypto assets fit within this definition. These tokens may come under the control of SEBI if they are issued as ICOs or in collective investment schemes. Even with such uncertainty around crypto-currency-related instruments, the Income Tax Department, in some cases, has issued notice and initiated proceedings against businesses dealing with crypto-currencies. The chairman of the Central Board for Direct Taxes has stated that Bitcoin-related income will be taxed.[1] If the existing laws are applied without considering the challenges highlighted earlier, those who deal with crypto-assets may be taxed twice under the CGST Act, as there is a tax liability on the purchase of the asset and subsequently, at the time of exchange for other goods and services subject to GST.[1]

The Inter-Ministerial Committee recommended the ban due to the regulatory concerns surrounding VCs. These risks have been addressed by the international community at the G20 leaders' summit at Osaka, Japan in 2019, where world leaders of the group and India affirmed their commitment to the FATF standards.[1] One major recommendation has been "to manage and mitigate the risks emerging from virtual assets" by ensuring virtual asset service providers like crypto-currency exchanges are regulated through licensing and registration requirements, alongside effective monitoring systems for preventing money laundering and combating financing of terrorism. All G20 nations, while recognizing the risks associated with VCs have chosen not to put an outright ban on crypto-trading.[1] Countries like the USA and Japan have chosen to deal with these by extending their existing laws to crypto-currency related activities. Even China, which has taken a strict approach, issued severe restrictions on the use of VCs but none of these amount to an outright prohibition like the one recommended in the Draft Bill. Considering the economic and legal factors, a permissive approach seems like the most prudent model for India. It will not only facilitate economic growth but will ensure that illegal activities associated with the use of crypto-currencies are brought under regulatory purview.

In light of the Crypto-currency judgment and amidst reports of the RBI considering a review,[1] it is open to the government to either ban or regulate crypto-currencies in India. Reports[1] point to the fact that the government is in discussion with the RBI to bring out a regulatory framework.[1] The comparative study and analysis carried out in the previous sections indicate that it would be pragmatic for the Indian government to regulate crypto-currencies in a permissive manner, in order to realize the potential benefits of DLT in the financial sector while mitigating the acknowledged risks.

List of References

[*]*Research Scholar, Faculty of Law, Banaras Hindu University, rajendralaw.acs@gmail.com)*

1. Pichl, Lukas and Taisei Kaizoji (2019): "*Volatility Analysis of Bitcoin Price Time Series"*, Quantitative Finance and Economics, available at https://www.researchgate.net/publication/321827427_Volatility_Analysis_of_Bitcoin_Price_Time_Series.
2. available at https://coinmarketcap.com/all/views/all/ (2 August 2018).
3. Satoshi Nakamoto; *Bitcoin: A Peer-to-Peer Electronic Cash System*', available at https://bitcoin.org/bitcoin.pdf.
4. David Chaum; *Security without Identification Card Computers to make Big Brother Obsolete, Communications of the ACM (October 1985)*, available at https://www.chaum.com/publications/Security_Wthout_Identification.html.
5. David Chaum*, Blind Signature for Untraceable Payments (1982),* available at https://www.chaum.com/publications/Chaum-blind-signatures.PDF.
6. Wei Dai, B-Money, can be accessed at http://www.weidai.com/bmoney.txt.
7. Nick Szabo, Bit Gold (December 29, 2005), available at https://web.archive.org/web/20060329122942/http://unenumerated.blogspot.com/2005/12/bit- gold.html.
8. Hal Finney, Reusable Proof of Work (June 16, 2006), available at https://web.archive.org/web/20060616102653/http://rpow.net/.
9. available at https://nakamotoinstitute.org/finney/rpow/.
10. Available at https://www.alcor.org/cryonics/Cryonics2019-2.pdf.

11. Partha Ray; Soumik Roy*; 'Cryptocurrency and Indian Regulatory Environment: Generation Gap or Central Bank Dharma?' Indian Finance Association.* available at http://indiafa.org/cryptocurrency-and-indian-regulatory-environment-generation-gap-or-central-bank-dharma/ visited as on 23.09.2020.
12. Security Exchange Commission (the USA, 2019): "Framework for "Investment Contract" Analysis" available at: https://www.sec.gov/files/dlt-framework.pdf.
13. the draft version of "*Crypto-Currency Act 2020*" available at: https://www.crowdfundinsider.com/wp-content/uploads/2019/12/Draft-Crypto-Currency-Act-of-2020.pdf.
14. Cryptocurrency taskforce: Final Report available at https://assets.publishing.service.gov.uk/government/uploads/system/uploads/attachment_data/file/752070/cryptoassets_taskforce_final_report_final_web.pdf.
15. Partha Ray; Soumik Roy*; 'Cryptocurrency and Indian Regulatory Environment: Generation Gap or Central Bank Dharma?'* Indian Finance Association. available at http://indiafa.org/cryptocurrency-and-indian-regulatory-environment-generation-gap-or-central-bank-dharma/ visited as on 23.09.2020.
16. The Federal Council (Switzerland)(2018): "*Legal Framework for distributed ledger technology and blockchain in Switzerland*" available at: https://www3.unifr.ch/webnews/content/166/file/Attachments/Report%20Blockchain%20ICO.pdf.
17. *Ibid note 7.*
18. available at https://www.globallegalinsights.com/practice-areas/blockchain-laws-and-regulations/japan.
19. *Supra note 8*.
20. Draft Discussion Paper Blockchain: The India Strategy by NITI Ayog, available at https://www.niti.gov.in/sites/default/files/2020-01/Blockchain_The_India_Strategy_Part_I.pdf
21. Government of India Ministry of Electronics and Information Technology (MeitY), available at https://www.meity.gov.in/writereaddata/files/NationalStrategyBCT_%20Jan2021_final.pdf
22. Nishchal Anand, Pranay Agrawal, '*Blockchain & Cryptocurrency Laws and Regulations 2022 | India*' Global Legal Insight' available at https://www.globallegalinsights.com/practice-areas/blockchain-laws-and-regulations/india.
23. Manas Tiwari, '*Cryptocurrency regulations in India: Here is what can be allowed and what may not be', v*isites on 23/09/2020. available at https://www.indiatoday.in/technology/news/story/cryptocurrency-regulations-in-india-here-is-what-can-be-allowed-and-what-may-not-be-187803.
24. Manas Tiwari, "*Cryptocurrency regulations in India: Here is what can be allowed and what may not be*". visited on 23/09/2020. available at https://www.indiatoday.in/technology/news/story/cryptocurrency-regulations-in-india-here-is-what-can-be-allowed-and-what-may-not-be-1878031.
25. Writ Petition (Civil) No.528 of 2018.
26. Partha Ray and Soumik Roy, "*Cryptocurrency and Indian Regulatory Environment: Generation Gap or Central Bank Dharma?*" visited on 23/09/2020. available at Cryptocurrency and Indian Regulatory Environment: Generation Gap or Central Bank Dharma? - Indian Finance Association (indiafa.org).

27. Partha Ray and Soumik Roy, "*Cryptocurrency and Indian Regulatory Environment: Generation Gap or Central Bank Dharma?*" visited on 23/09/2020. available at Cryptocurrency and Indian Regulatory Environment: Generation Gap or Central Bank Dharma? - Indian Finance Association (indiafa.org).
28. Chawm Ganguly, '*Banning Cryptocurrencies is not the solution, a regulatory framework must be developed: NASSCOM*' Core Sector Communique (30 July 2019). https://www .corecommunique.com/banning-crypto-currencies-is-not-the-solution-a-regulatoryframework- must-be-developed-nasscom/. accessed 25 October 2020.
29. Subhash Chandra Garg and others, '*Report of the Steering Committee on Fintech Related Issues'* Department of Economic Affairs, Ministry of Finance, Government of India (2019). https://dea.gov.in/sites/default/files/Report%20of%20the%20Steering%20Committe e%20on%20Fintech_1.pdf. accessed 25 October 2020.
30. Arnab Kumar and others, '*Blockchain: The India Strategy - Towards Enabling Ease of Business, Ease of Living and Ease of Governance*' NITI Aayog (January 2020). https://niti.gov.in/sites/default/files/2020-01/Blockchain_The_India_Strategy_Part_I.pdf. accessed 25 October 2020.
31. SCRA Securities Contracts (Regulation) Act 1956 (n 93) s 2(h).
32. Bitcoin earnings to be taxed, investors to face action for hiding income, says CBDT chairman' Business Today (11 February 2018). https://www.businesstoday.in/curre nt/policy/bitcoin-investment-trade-earning-under-tax-income-virtaul-currency-tax-onbitcoin/ story/269981.html. accessed 25 October 2020.
33. Nishith Desai and others, '*Building a successful blockchain ecosystem in India: Regulatory approaches to cryptoassets*' Nishith Desai & Associates, (December 2018). https://www.nishithdesai.com/fileadmin/user_upload/pdfs/Research_Papers/Buildin g-a-Successful-Blockchain-Ecosystem-for-India.pdf. accessed 25 October 2020.
34. G20 Osaka Leaders' Declaration' European Council (29 June 2019). https://www.consilium.europa.eu/media/40124/final_g20_osaka_leaders_declaration.pdf . accessed 25 October 2020
35. Jaideep Reddy, '*The Case for regulating crypto-assets: a constitutional perspective'* (2019) 15(2) IJLT 417.
36. Saloni Shukla and Sachin Dave, '*RBI to seek review of Supreme Court order on cryptocurrency'* ET Prime (6 March 2020). https://economictimes.indiatimes.co m/news/economy/policy/rbi-to-seek-review-of-supreme-court-order-oncryptocurrency /articleshow/74503345.cms. accessed 25 October 2020.
37. Paddy Baker, '*India's Rumored Crypto Ban May Be Overblown, Say Industry Pros' Coindesk* (15 June 2020) https://www.coindesk.com/india-lawmakers-figuring-cryptoregulation. accessed 25 October 2020.
38. Kevin Helms, '*Indian Government Engages RBI to Discuss Cryptocurrency Regulation' Bitcoin.com (21 March 2020)*. https://news.bitcoin.com/indiancryptocurrency-regulation/#:~:text=The%20Indian%20government%20has% 20been, providing%20recommendations%20for%20the%20country. accessed 25

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

मलिन बस्ती की कार्योजित महिलाओं में आर्थिक सशक्तिकरण

डॉ0 अजय कुमार सोनकर
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग)
डी0ए0वी0 पी0जी0 कालेज, आजमगढ़।

सारांशः–

आज जब परम्परागत मूल्यों की श्रृंखला टूट रही है और सांस्कृतिक मूल्य बिखर रहे हैं ऐसे समय में महिलाएं दोहरी भूमिकाओं को निभाने के लिए विवश है इसमें एक पक्ष उनकी आर्थिक निर्भरता का आता है जो उन्हें हर समस्या से उबरने में सक्षम बनाता है दूसरी ओर सांस्कृतिक मूल्य उन्हें पारिवारिक समस्याओं से जूझने को विवश करते हैं। यदि हम महिला सशक्तिकरण की बात करते हैं तो सबसे पहले महिलाओं का आर्थिक रूप से सक्षम होना अत्यन्त आवश्यक है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए जौनपुर जिले की नगर स्थित दो मुहल्लों ढ़ालगर टोला, मधारे टोला की मलिन बस्ती की कार्योजित महिलाओं के आर्थिक रूप से स्वावलम्बी होने और उनकी पारिवार में स्थिति, उनकी निर्णय लेने की क्षमता तथा उन निर्णयों के महत्व का अध्ययन किया गया। उक्त अध्ययन में अनुसूची एवं साक्षात्कार जैसे उपकरणों का प्रयोग किया गया है तथ्यों के संकलन के उपरान्त उनका विश्लेषण और व्याख्या कर निष्कर्ष निकाले गये जो इस प्रकार है।

जो महिलायें आर्थिक रूप से सक्षम है उनकी परिवार में भागीदारी बढ़ी है अर्थात् उन्हें परिवार में अधिक महत्व मिलता है, उनके विचारों व भावनाओं का भी परिवार के सदस्य ध्यान में रखते हैं। उक्त अध्ययन में यह भी देखने में आया है कि यदि परिस्थितियाँ विपरीत है तो आर्थिक रूप से सक्षम कार्योजित महिलाओं में उनसे निपटने की ताकत भी आ गयी है। इस प्रकार से मलिन बस्ती की या सभी तरह की महिलाओं को सशक्त करने का माध्यम उनका आर्थिक सशक्तिकरण है।

शब्द कुंजीः– मलिन बस्ती, आर्थिक, सशक्तिकरण, कार्योजित, महिलायें।

प्रस्तावनाः–

किसी भी महिला को सामाजिक रूप से या राजनैतिक रूप से सक्षम बनाना महिला सशक्तिकरण है, महिला सशक्तिकरण का सबसे व्यापक तत्व है महिलाओं को सामाजिक न्याय प्रतिष्ठा और पद प्रदान कराना महिला सशक्तिकरण के प्रमुख लक्षण है, महिलाओं को शिक्षा, सामाजिक असमानता और सामाजिक स्थिति, बेहतर स्वास्थ्य आर्थिक अथवा वित्तीय सुदृढ़ता और राजनैतिक सहभागिता महिला सशक्तिकरण की दिशा में अत्यन्त आवश्यक है, किन्तु हम मलिन बस्तियों की कार्योजित महिलाओं की बात करते हैं तो वे आर्थिक रूप से आत्म निर्भर तो होती है परन्तु उनके हांथ में किसी भी प्रकार के अधिकार नहीं होते यहाँ तक की उनके द्वारा अर्जित धन को भी उन्हें खर्च करने का अधिकार तक नहीं होता, उनकी आय पर उनके पति या परिवार के अन्य पुरूषों का अधिकार होता है, यहाँ तक वे जब काम कर के घर आती है तो परिवार के लोग उनकी अवहेलना और उनपर अत्याचार भी करते हैं इस प्रकार महिलाओं का वास्तविक आर्थिक सशक्तिकरण तभी होगा जब वे प्राप्त अधिकारों का लाभ उठा सके।

अतः प्रस्तुत शोध पत्र में मलिन बस्तियों की कार्योजित महिलाओं का आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने तथा परिवार में उनकी स्थिति के सन्दर्भ में अध्ययन किया गया है।

शोध प्रविधिः–

प्रस्तुत शोध पत्र में शोध अध्ययन के लिए निम्नलिखित प्रविधि का प्रयोग किया गया है।

(1) **निदर्शन पद्धति–** प्रस्तुत अध्ययन के लिए उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति का प्रयोग किया गया है।

(2) **अध्ययन का समग्र–** प्रस्तुत शोध पत्र के अध्ययन हेतु जौनपुर जिले के नगर में स्थित दो मोहल्लों मधारेटोला, ढ़ालगर टोला की मलिन बस्ती की 30 उन महिलाओं का अध्ययन किया गया है, जो घर से बाहर जाकर काम करती है। प्रत्येक मोहल्ले से 15–15 काम करने वाली महिलाओं का चयन किया गया है।

अध्ययन की इकाई–

उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति द्वारा चयनित कार्योजित महिलायें।

तथ्य संकलनः–

तथ्यों का संकलन प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनो प्रविधियों के माध्यम से किया गया है।

(1) प्राथमिक स्रोत में साक्षात्कार एवं अनुसूची का प्रयोग किया जायेगा।

(2) द्वितीयक स्रोत में, लेख, प्रलेख, शोध पत्र, पुस्तकें, इण्टरनेट आदि।

अध्ययन का उद्देश्यः–

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य मलिन बस्ती की कार्योजित महिलाओं में आत्म निर्भरता के साथ–साथ विपरीत परिस्थितियों से उबरने में सक्षम हुई है या नहीं की जानकारी प्राप्त करना है।

प्राकल्पनाः–

मलिन बस्ती की कार्योजित महिलायें आर्थिक रूप से निर्भर होती है परन्तु सामाजिक आर्थिक व पारिवारिक फैसलों में महिलाओं की राय नहीं ली जाती है।

तथ्यों का विश्लेषण एवं व्याख्याः–

30 सूचनादात्रियों से साक्षात्कार एवं अनुसूची के माध्यम से सूचना एकत्रित किया गया है।

सारणी संख्या : 1.1

सूचनादात्रियों के कार्य का स्तर

क्रमांक	सूचनादात्रियों के कार्य स्तर–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	व्यवसायी	28	93
2	गृहणी	02	07
	योग–	**30.00**	**100.00**

किसी भी व्यक्ति के विचारों में आर्थिक स्तर का प्रभाव पड़ता है, इसलिए सूचनादात्रियों के आर्थिक स्तर के सन्दर्भ में एकत्रित की गयी जिसमें 30 में से सर्वाधिक 28 अर्थात् 93 प्रतिशत उत्तरदात्री व्यवसायी हैं जबकि 02 प्रतिशत गृहणी हैं।

सारणी संख्या : 1.2

सूचनादात्रियों की व्यवसायिक स्थिति

क्रमांक	सूचनादात्रियों की व्यवसायिक स्थिति–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	कम्पनी	07	23.33
2	सिलाई	04	13.34
3	मजदूरी	**09**	**30.00**
4	स्वयं का व्यवसाय	**03**	**10.00**
5	गृहणी	**02**	**7**
6	अन्य	**05**	**16**
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.2 में उत्तरदात्रियों के व्यवसायिक स्थिति को जानने का प्रयास किया गया है जिसमें अधिकांश 23.33 प्रतिशत उत्तरदात्रियां किसी कम्पनी में काम करती है। जबकि 13.34 प्रतिशत सिलाई, 30 प्रतिशत मजदूरी, 10 प्रतिशत स्वयं का व्यवसाय, 7 प्रतिशत गृहणी व 16 प्रतिशत अन्य कार्य करती है।

सारणी संख्या : 1.3

उत्तरदात्रियों की मासिक आय

क्रमांक	उत्तरदात्रियों की मासिक आय–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	1000–3000	09	30
2	3001–5000	11	36.66
3	5001 से अधिक	10	33.33
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.3 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकतम 36 प्रतिशत उत्तरदात्रियों की मासिक आय 3000–5000 तक है जबकि 30 प्रतिशत उत्तरदात्री 1000–3000 तक मासिक आय की है, 5001 से अधिक आय के उत्तरदात्रियों की संख्या 33 प्रतिशत है।

सारणी संख्या : 1.4

समान कार्य समान वेतन (स्त्री–पुरूष) के प्रति उत्तरदात्रियों का दृष्टिकोण

क्रमांक	समान कार्य समान वेतन (स्त्री–पुरूष) के प्रति–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	28	93.00
2	न्हीं	02	7.00
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.4 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकतम 93 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का मत है कि समान कार्य के लिये समान वेतन मिलना चाहिये जबकि 02 प्रतिशत उत्तरदात्रियों ने इसके विपक्ष में तर्क दिया है।

सारणी संख्या : 1.5

नौकरी या व्यवसाय द्वारा प्राप्त धन को खर्च करनें के प्रति उत्तरदात्रियों का दृष्टिकोण

क्रमांक	नौकरी या व्यवसाय द्वारा प्राप्त धन–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	23	76.67
2	नहीं	07	23.33
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.5 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकतम 76.97 प्रतिशत उत्तरदात्री नौकरी या व्यवसाय से प्राप्त धन को खर्च कर लेती है जबकि 23.33 प्रतिशत उत्तरदात्री नौकरी या व्यवसाय से प्राप्त धन को खर्च नहीं कर पाती है।

सारणी संख्या : 1.6

घर से बाहर जाकर नौकरी या व्यवसाय करने के प्रति उत्तरदात्रियों का दृष्टिकोण

क्रमांक	घर से बाहर जाकर नौकरी या व्यवसाय–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	20	66.67
2	नहीं	10	33.33
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.6 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकतम 66.97 प्रतिशत उत्तरदात्रियां मलिन बस्ती से बाहर जाकर नौकरी या व्यवसाय करना चाहती है जबकि 33.33 प्रतिशत उत्तरदात्रियां मलिन बस्ती से बाहर जाकर नौकरी या व्यवसाय नहीं करना चाहती है।

सारणी संख्या : 1.7

मलिन बस्ती से बाहर जाकर क्यों महिलायें व्यवसाय या नौकरी करना चाहती हैं।

क्रमांक	मलिन बस्ती से बाहर क्यों–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अधिक आय अर्जित करने के लिए	15	50.33
2	घर से बाहर समय बिताने के लिये	09	30
3	आत्म संतुष्टि के लिए	02	6.67
4	कुछ नया सीखने के लिए	04	13.67
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.7 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकतम 50.33 प्रतिशत उत्तरदात्री अधिक आय अर्जित करने के लिए मलिन बस्ती से बाहर जाकर नौकरी या व्यवसाय करती है। 30 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का मत है कि वे घर से बाहर जाकर समय बिताने के लिए बस्ती से बाहर नौकरी या व्यवसाय करती है, 6.67 प्रतिशत उत्तरदात्री आत्मसंतुष्टि के लिए और 13.67 प्रतिशत उत्तरदात्री कुछ नया सीखने के लिए मलिन बस्ती से बाहर जाकर नौकरी या व्यवसाय करना चाहती है।

सारणी संख्या : 1.8

नौकरी या व्यवसाय करने करने वाली महिलायें अपनी पारिवारिक जिम्मेदारी पूर्ण रूप से निभान के सन्दर्भ में–

क्रमांक	नौकरी या व्यवसाय करने करने वाली महिलायें–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	26	86.67
2	न्हीं	04	13.33
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.8 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकतम 86.67 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का मानना है कि नौकरी या व्यवसाय करने वाली महिलायें अपनी पारिवारिक जिम्मेदारी पूर्ण रूप से निभा रही हैं। जबकि 13.33 प्रतिशत उत्तरदात्रियां अपनी पारिवारिक भूमिका नहीं निभा रही है।

सारणी संख्या : 1.9

पारिवारिक फैसलों में भागीदारी करने के सन्दर्भ में–

क्रमांक	पारिवारिक फैसलों में भागीदारी करने–	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	27	90
2	नहीं	03	10
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.9 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि 90 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का मत है कि मलिन बस्ती की महिलायें पारिवारिक फैसलों में भागीदारी करने लगी हैं जबकि 10 प्रतिशत महिलायें पारिवारिक फैसलों में भागीदारी नहीं कर पा रही है।

सारणी संख्या : 1.10

आर्थिक रूप से सशक्त महिलायें आत्म निर्भर हुई हैं।

क्रमांक	**आर्थिक रूप से सशक्त महिलायें–**	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	25	83.33
2	नहीं	05	16.67
	योग–	**30.00**	**100.00**

सारणी संख्याः 1.10 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकतम 83.33 प्रतिशत मलिन बस्ती की आर्थिक रूप से सशक्त महिलायें आत्म निर्भर हुई हैं जबकि 16.67 प्रतिशत महिलायें आर्थिक रूप से सशक्त महिलायें आत्म निर्भर नहीं है।

निष्कर्षः–

1. मलिन बस्ती में 93 प्रतिशत सूचनादात्री व्यवसायी है अर्थात या तो वे नौकरी कर रही है या स्वयं का व्यवसाय कर रही है।
2. मलिन बस्ती में सर्वाधिक 30 प्रतिशत सूचनादात्री मजदूरी का कार्य कर रही है जबकि केवल 10 प्रतिशत स्वयं का व्यवसाय कर रही है।
3. सूचनादात्रिओं की मासिक आय के सम्बन्ध में जानकारी एकत्रित की गयी जिनमें सर्वाधिक 36.66 प्रतिशत सूचनादात्री की मासिक आय 3000–5000 तक है एवं 30 प्रतिशत सूचनादात्री की मासिक आय 1000–3001 के बीच है।
4. स्त्री–पुरूषों को समान कार्य के लिए समान वेतन देना उचित है इसके सन्दर्भ में आंकड़े एकत्रित किये गए जिनमें 28 प्रतिशत सूचनादात्रियों का मानना है कि समान कार्य के लिए समान वेतन दिया जाना उचित है।
5. मलिन बस्ती में सर्वाधिक 76 प्रतिशत सूचनादात्री नौकरी/व्यवसाय से अर्जित धन का उपयोग स्वयं करती है जबकि मात्र 23.33 प्रतिशत सूचनादात्री नौकरी/व्यवसाय से अर्जित धन का उपयोग स्वयं नहीं करती है।
6. मलिन बस्ती के बाहर जाकर नौकरी/व्यवसाय करने के सन्दर्भ में सर्वाधिक 66.67 प्रतिशत सूचनादात्रियो ने बताया कि वे बस्ती से बाहर जाकर नौकरी/व्यवसाय करना चाहती है जबकि 33. 33 प्रतिशत ने इस सम्बन्ध में नहीं में जवाब दिया, कहा जा सकता है कि मलिन बस्ती की महिलाओं को काम करने के लिए बस्ती के बाहर जाने की स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है।
7. मलिन बस्ती की महिलाएं बस्ती से बाहर जाकर नौकरी/व्यवसाय क्यों करना चाहती है इसके सम्बन्ध में 50 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने कहा कि वे अधिक आय अर्जित करने के लिए बस्ती के बाहर जाकर नौकरी/ व्यवसाय करना चाहती है जबकि 30 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने कहा कि वे घर से बाहर समय बिताने के लिए बस्ती के बाहर जाकर नौकरी/ व्यवसाय करना चाहती है।
8. सूचनादात्रियों से इस सम्बन्ध में जानकारी एकत्रित की गई क्या व्यवसाय या नौकरी पेशा वाली महिलाएं कार्य के साथ अपनी पारिवारिक जिम्मेदारी अच्छे से निभा पाती है, सर्वाधिक 86.67 प्रतिशत ने कहा कि वे व्यवसाय या नौकरी के साथ अपनी पारिवारिक जिम्मेदारी अच्छे से निभा पाती है जबकि केवल 13.66 प्रतिशत ने कहा वे अपनी जिम्मेदारी नहीं निभा पाती है अधिकांश उत्तरदात्रियाँ यही मानती हैं कि महिलायें व्यवसाय या नौकरी के साथ पारिवारिक जिम्मेदारी भी अच्छे से निभा लेती हैं।
9. मलिन बस्ती की महिलाओं की पारिवारिक निर्णय में भागी के सन्दर्भ मे जानकारी एकत्रित की गयी जिनमें सर्वाधिक 90 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने कहा कि उनकी पारिवारिक निर्णय में भागीदारी है एवं उनके परिवार के किसी भी निर्णय में सबकी सलाह ली जाती है एवं उसे माना जाता है जबकि 10 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने कहा कि कभी–कभी वे अपने पारिवारिक निर्णय में भागीदारी नहीं कर पाती है।

10. मलिन बस्ती की महिलाएं क्या आर्थिक रूप से सशक्त होने के बाद आत्मनिर्भर हुई हैं इसके सम्बन्ध में सर्वाधिक 83.33 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने बताया कि आर्थिक रूप से सशक्त होने के बाद बस्ती की महिलायें आत्मनिर्भर हुई हैं जबकि 10 प्रतिशत सूचनादात्रियों ने बताया कि आर्थिक रूप से सशक्त होने के बाद भी बस्ती की महिलाएं आत्म निर्भर नहीं हुई हैं।

सुझावः–

1. मलिन बस्ती की महिलाओं का आर्थिक स्तर सुधारने के लिए सरकार द्वारा संचालित हो रही योजनाओं का क्रियान्वयन सही तरीके से होना चाहिए।
2. मलिन बस्ती के आस–पास या अन्दर रोजगार की व्यवस्था की जानी चाहिए।
3. मलिन बस्ती के अन्दर या आस–पास सस्ती और अच्छी शिक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।
4. महिलाओं के कौशल का विकास करने के लिए प्रशिक्षण केन्द्र खोले जाना चाहिए।
5. कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा की एवं उनके बच्चों की देखभाल की व्यवस्था की जानी चाहिए।
6. कामकाजी महिलाओं को बचत के बेहतर उपायों के प्रति जागरूक करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रतियोगिता दर्पण पत्रिका–सितम्बर, 2022
2. गन्दी बस्ती क्षेत्र (सुधार एवं उन्मूलन) अधिनियम–1956, भारत सरकार
3. कपूर प्रमिला, भारत में मध्यमवर्गीय महिलाएं, इण्डिया विकास पब्लिकेशन हॉउस, नई दिल्ली 1976
4. बोहरा आशारानी–भारतीय नारी, दशा और दिशा, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1982
5. तिवारी आर.पी., शुक्ला डी.वी.–भारतीय नारी वर्तमान समस्यायें और उनके समाधान
6. रोहेला सत्यपाल–सामाजिक सर्वेक्षण एवं अनुसंधान
7. योजना पत्रिका–जून, 2022
8. आहूजा राम–सामाजिक शोध
9. आप्टे प्रभा–भारतीय समाज में नारी, क्लासिक पब्लिशिंग हॉउस, जयपुर 1996
10. बैताई आंद्रे–एम्पावरमेन्ट इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, 1990

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

महिलाओं की प्रस्थिति के बदलते प्रतिमान

कृष्णानन्द पाण्डेय
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग)
डी0ए0वी0 पी0जी0 कालेज, आजमगढ़।

सारांशः–

किसी भी समाज की आधी आबादी महिलाओं की होती है और जो समाज महिलाओं को उपेक्षा की दृष्टि से देखता है उस समाज का विकास नहीं हो सकता है जहाँ तक भारत देश की बात रही है यह अनादि काल से पुरूष प्रधान देश रहा है, यहाँ पर महिलाओं की प्रस्थिति समय एवं परिस्थितियों के अनुसार निरन्तर परिवर्तित होती रही है शास्त्रों में जहाँ इन्हें अर्द्धांगिनी का स्थान प्रदान किया गया है, वहीं आज भी समाज में इन्हें पुरूषों की तुलना में उचित व सम्मानजनक स्थान प्राप्त नहीं हो सका। स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय समाज का उन्नयन एवं विकास परम्परागत ढाँचे से धीरे–धीरे नये आयामों की ओर गतिशील हुआ है जिसमें महिलाओं की प्रस्थिति में भी नवीन परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं।

शब्द कुंजीः– महिला, प्रस्थिति, प्रतिमान, उन्नयन, गतिशीलता।

प्रस्तावनाः–

महिलाओं की सम्मान एवं सन्तोषजनक प्रस्थिति की समस्या न केवल भारतीय समाज की है अपितु सम्पूर्ण विश्व की है विश्व के लगभग सभी समाजों में महिलाओं की प्रस्थिति पुरूषों के समान नहीं है। वर्तमान सामाजिक संरचना में पुरूषों को स्त्रियों से अधिक अधिकार, संसाधन एवं निर्णय लेने की शक्ति प्राप्त है और महिलाओं को परम्परागत भूमिकाएं ही अधिक सौंपी गयी है वह घर के अन्दर खाना बनाने से लेकर घर के बाहर बीज रोपण, खाद छींटना व पौधरोपण, सिंचाई करना, फसल की कटाई आदि का कार्य भी करती है फिर भी इन्हें कृषक की श्रेणी में नहीं रखा जाता है एक समान कार्य के लिए महिलाओं को पुरूषों की अपेक्षा कम मजदूरी दिये जाने की प्रवृत्ति हमारे भारतीय समाज में आज भी विद्यमान है। शास्त्रों में भी पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं को अधिकार कम दिये गए हैं यहाँ तक की पिता का अन्तिम संस्कार तक का भी इन्हें अधिकार नहीं दिया गया है। ये सारे सामाजिक अधिकार पुरूषों को दिये गये हैं जो कि पुरूष की प्रधानता के द्योतक है जबकि एक महिला जीवन पर्यंत अपने माता–पिता की सेवा करती है और विवाह के बाद अपने पति के माता–पिता की सेवा समर्पित भाव से करती है फिर भी भारतीय समाज में वर्तमान परिवार के महत्वपूर्ण व अन्तिम निर्णय लेने का अधिकार पुरूष वर्ग को ही है।

देश को स्वतन्त्र होने के पश्चात भारत सरकार ने महिलाओं की प्रस्थिति उन्नयन हेतु कई प्रयास किये, जिससे परम्परागत आयामों में परिवर्तन दिखने लगे, और वर्तमान समय में सरकारी सेवाओं में भी महिलाओं की सहभागिता बढ़ रही है। वर्तमान में महिलाओं की शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक सभी तरह की प्रस्थिति में परिवर्तन आया है।

सरकार द्वारा महिलाओं की प्रस्थिति में सुधार हेतु किये गए प्रयासः–

स्वतन्त्रता के पश्चात से ही संविधान निर्माताओं का ध्यान महिलाओं की प्रस्थिति की तरफ आकृष्ट हुआ और महिलाओं की प्रस्थिति को सुदृढ़ बनाने के लिए अनुच्छेद 14, 15(4), 16, 21, 51A व 73, 74वाँ संविधान के तहत विभिन्न उपबंध सृजित किये गए। इस दिशा में महिलाओं की प्रस्थिति को ऊँचा व विकास हेतु विशिष्ट प्रावधान किये जाने की शक्ति भारतीय संविधान द्वारा प्रदान किया गया है, संविधान का अनुच्छेद 14 महिलाओं और पुरूषों को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक क्षेत्रों में समान अधिकार और अवसर

प्रदान करता है। इसी प्रकार से अनुच्छेद 15 महिलाओं को समानता का अधिकार प्रदान करता है और अनुच्छेद 15(4) महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधार किये जाने के लिए सरकार को विशिष्ट उपबन्ध बनाने की शक्ति प्रदान करता है।

संविधान का अनुच्छेद 16 रोजगार में सभी नागरिकों को लिंग के आधार पर विभेद के बिना समान अवसर प्रदान करता है इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 39 के अन्तर्गत महिलाओं एवं पुरूषों को समान कार्य के लिए समान वेतन दिये जाने का उपबन्ध किया गया है।

इन सब के अतिरिक्त मानवाधिकार की अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा–1946 के तहत भी महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षित व सुदृढ़ करने हेतु विशिष्ट प्रावधान किये गए हैं।

महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक प्रस्थिति को अधिक सशक्त करने के लिए केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा समय–समय पर अनेक योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाता रहा है

<u>महिलाओं की प्रस्थिति उन्नयन हेतु राज्यों द्वारा किये गये प्रयासः–</u>

(1) कामधेनु योजना
(2) किशोरी बालिका योजना
(3) स्वास्थ्य सखी योजना
(4) अपनी बेटी अपना धन योजना
(5) बालिका संरक्षण योजना
(6) पंचधारा योजना
(7) बालिका समृद्धि योजना

इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार द्वारा भी कुछ प्रयास किये गए हैं, जो निम्नलिखित हैं।

(1) सबला योजना
(2) प्रियदर्शिनी योजना
(3) महिला अधिकारिता हेतु राष्ट्रीय मिशन
(4) इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना
(5) महिला स्वयं सिद्ध योजना
(6) किशोरी शक्ति योजना
(7) जननी सुरक्षा योजना
(8) किशोरी पोषण योजना

इन योजनाओं से भारत सरकार महिलाओं की प्रस्थिति को बदलने का प्रयास कर रही है तथा महिलायें भी इससे लाभान्वित हो रही हैं इस प्रकार महिलाओं में जागरूकता आई है और उनकी प्रस्थिति में परिवर्तन हो रहा है।

निष्कर्षः–

किसी भी समाज का विकास महिलाओं के विकास के बिना नहीं हो सकता, जिस समाज में महिलाओं की उपेक्षा की गयी है वह समाज विकास की दौड़ में पिछड़ गया, परम्परागत भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी, उन्हें किसी भी प्रकार का सामाजिक अधिकार प्राप्त नहीं था, किन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात भारत सरकार ने महिलाओं की प्रस्थिति को ऊँचा उठाने का काफी प्रयास किया जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं की प्रस्थिति में परिवर्तन हो रहा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Gangrade K.D., "Adult suffrage and social change: chining status of a depressed castes : social change (March-June 1976) p.3.
2. Beteille, A. (1972). Inequality and Social Change, Delhi : Oxford University Press.
3. Tandia im oteurtured change in Indian sncietv". New York: Publishing.
4. Heath, A. (1981) Social Mobility, Lodon: Fontana Paperbacks.: Kumar, S. (1968) Social Mobility in Industrial Society, Jaipur: Rawat Publications.
5. Aggarwal, J.C. (2001). Development and Planning of Modern Indian Education, New Delhi : Vikash Publishing House.
6. Culture and Society : 1780-1950, New York: Columbia University Press.
7. Lynch OM, "The politics of Untouchability: A case from Agra, India, in structured change in India Society, New York: Publishing Co. 1968.

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

ग्रामीण विकास योजनाओं का अनुसूचित जातियों की महिलाओं पर प्रभाव

डॉ0 कंचन
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र
हेमवती नन्दन बहुगुणा राजकीय पी.जी. कालेज
नैनी, प्रयागराज

डॉ0 सतीश चन्द्र जैसल
असिस्टेंट प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार,
उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,
प्रयागराज

सारांश

भारत सरकार एवं राज्य या संघ सरकार ने विभिन्न योजनाओं का संचालन करते हुए वर्तमान में मनरेगा, खाद्य सुरक्षा अधिनियम, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, आवास विकास योजनाएँ, एवं फेलोशिप डॉ0 अम्बेडकर ग्रामीण विकास योजना, उज्जवला एवं बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ इत्यादि अध्ययन पर प्रकाश डाला गया है। उपर्युक्त योजनाओं के माध्यम से गरीबी, बेरोजगारी, भरण पोषण, स्वास्थ्य, आवास, शिक्षा इत्यादि समस्याओं को दूर करने के लिए सरकारी प्रयास किया गया। मनरेगा में कार्य के दौरान 100 दिन के रोजगार की शुलभता के साथ उपलब्ध है जिससे गाँवों में विकास एवं परिवर्तन की प्रक्रिया स्पष्ट रूप से परिलक्षित है, मनरेगा से ग्रामीण महिलाओं में बेरोजगारी, गरीबी एवं रोजगार हेतु प्रयास में कमी आयी है। राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के स्वास्थ्य से सम्बन्धी समस्त सुविधाएं ग्रामीण महिलाओं को प्राप्त हो रही है।

मुख्य शब्द– मनरेगा, खाद्य सुरक्षा अधिनियम, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, आवास विकास योजनाएँ, फेलोशिप डॉ0 अम्बेडकर ग्रामीण विकास योजना उज्जवला, बेटी बचाओ – बेटी पढ़ाओ।

अनुसूचित जाति की ग्रामीण महिलाएं

अनुसूचित जातियॉ भारतीय समाज व्यवस्था की ऐसी जातियाँ है जिनका स्थान श्रेणीक्रम में निम्न सोपानक्रम पर व्यवस्थित है इन्हें विविध नामों से सम्बोधित किया गया है– अस्पृश्य अथवा अछूत, दलित, बाहरी जाति, हरिजन इत्यादि। सन् 1935 में अनुसूचित जातियों के कल्याण हेतु उनके उत्थान के क्रमबद्ध विकास के लिए भारतीय अधिनियम (1935) में इन दलित जातियों को कुछ विशेष सुविधाएँ प्रदान करने के लिए इन जातियों की एक अनुसूची तैयार की गयी, एवं इस अनुसूची में शामिल जातियों को वैधानिक दृष्टि से अनुसूचित जाति कहा गया।

अनुसूचित जातियों की महिलाओं से तात्पर्य अन्य वर्ग की महिलाओं से भिन्नता से है। अर्थात् भारतीय सामाजिक व्यवस्था में सामान्य एवं अन्य पिछड़े वर्ग के महिलाओं की तुलना में निम्न है। अनुसूचित जातियों की महिलाएँ अभावों में जीवन यापन करती हैं। संवैधानिक प्रावधानों में उनके लिए वे सभी अधिकार प्राप्त है जो अनुसूचित जातियों के लोगों को प्राप्त है। साथ ही अनुसूचित जातियों की महिलाओं का कुछ क्षेत्रों में विशेष अधिकार प्राप्त है। जैसे पंचायती राज में विशेष प्रावधान है। 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 के लागू होने के साथ ही देश के संघीय लोकतान्त्रिक ढांचे में एक नये युग का सूत्रपात हुआ। संविधान के भाग 1 को पुनः स्थापित कर 16 नये अनुच्छेद और 11वीं अनुसूची जोड़ी गयी। अनुच्छेद 242 के तहत

पंचायतों के लिए आरक्षण का प्राविधान किया गया है इसमें से 1/3 भाग इन वर्गों की महिलाओं के लिए आरक्षित होगा।

नारीवादी विचारधारा

नारीवादी विचारधारा को तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया हैं, जो दर्शाती हैं कि नारी का शोषण किस–किस तरह विभिन्न काल खण्डों में समाज में प्रचलित सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था के तहत किया गया। ''जैसा कि सर्वविदित है, फेमिनिज्म की तीन मूल प्रवृत्तियां हैं :

1. जेन्डर एक सामाजिक अवधारणा हैं;
2. पितृसत्तात्मक व्यवस्था में आचार–संहिताएं चूंकि पुरूषों की बनाई होती हैं, इसीलिए स्त्रियों की तुलना में पुरूषों के प्रति इनका रवैया पक्षपातपूर्ण होता है– स्त्रियों को विकास के समान अवसर भी 'कृपापूर्वक' ही दिए जाते हैं
3. भविष्य का जो शोषण–मुक्त समाज होगा, उसके निर्माण में कार्यक्षेत्र, प्रेम, प्रजन आदि विशेष अनुभव मूलक वृत्तांत और उनकी भाषा तथा शिल्प से स्वतंत्र व्यक्तित्व का विकास बहुत निर्णायक सिद्ध होंगे।

इस प्रकार, फेमिनिज्म के दो दायित्व हो जाते हैं– पहला, जेण्डर स्टीरियोटाइप पर प्रहार तथा दूसरा, स्त्री मन और शरीर की सही समझ का विकास करना। जेण्डर एवं सेक्स विभेद के आधार पर देखा जाय तो प्रकृति का सेक्स से वही सम्बन्ध है जो संस्कृति से जेण्डर का। सेक्स एवं जेण्डर के आधार पर महिलाओं की स्थिति को परिभाषित करते हुए सिमॉन द बुआ ने अपने पुस्तक 'द सेकेण्ड सेक्स 1953' में कहा ''औरते पैदा नहीं होती बल्कि बनायी जाती हैं।'' एलिसन जैग्गर का मानना है कि सेक्स और जेण्डर एक दूसरे के साथ दण्डात्मक अभिभाज्य के रूप से सम्बन्धित हैं। मानव शरीर, भौतिक वातारण, प्रौद्योगिकी तथा समाज के बीच अवस्था में बेहद जटिल अन्तर है इसलिए एलिसन जैग्गर कहती हैं कि इंसान का हाथ श्रम का औजार ही नहीं वरन श्रम की उपज भी है।

मार्क्सवादी नारीवाद

वास्तविक रूप में समाजवादी चिन्तन का आरम्भ कार्ल मार्क्स के द्वारा हुआ, मार्क्स वह प्रथम दार्शनिक हैं, जो आर्थिक–सामाजिक घटनाओं को भावनावादी आधार पर नहीं देखते हैं। उन्होंने सामाजिक घटनाओं का अध्ययन वैज्ञानिक दृष्टि से किया। उनका सम्पूर्ण सिद्धान्त ऐतिहासिक भौतिकवाद और द्वंद्वात्मक भौतिकवाद पर आधारित हैं। मारिस कॉनफोर्थ समाजवाद के लिए लिखते हैं, ''समाजवाद सम्पूर्ण समाज की भौतिक तथा सांस्कृतिक आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने के लिए उत्पादन के साधनों के सामाजिक स्वामित्व और उनके उपयोग की व्यवस्था है, क्योंकि समाज के आर्थिक आधार के ऐसे बुनियादी रूपान्तरण से ही पूंजीवाद से उत्पन्न दोषों को समाप्त किया जा सकता है और नई शक्तिशाली तकनीक का भरपूर उपयोग किया जा सकता है।'

डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर का दृष्टिकोण

डॉ0 अम्बेडकर का समानता का अधिकार दिलाना मुख्य उद्देश्य था। उनका कहना था कि दलित समुदाय स्वयं उठकर अपनी स्थिति पर विचार नहीं करते, उनकी स्थितियों में बदलाव तब तक नहीं हो सकता है जब तक स्वयं के प्रयास नहीं करेंगे वे विशेषकर शिक्षा पर विशेष ध्यान नहीं देंगे। तबतक समुचित विकास नहीं होगा। भारतीय समाज व्यवस्था में असमानता एवं भेदभाव की स्थिति देखें तो उनमें आत्मचेतना जागृत होना आवश्यक है। इसी के प्रेरणा से उनके अन्दर ऊर्जा का संचार हुआ एक नारा समाज में गूँजा शिक्षित बनो, संगठित बनो एवं संघर्ष करो। बाबा साहब डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर के समता, समानता एवं बंधुत्व के विचारों ने दलित समाज में नई चेतना विकसित करने में अतुलनीय योगदान दिया है।

सरकार द्वारा संचालित ग्रामीण विकास की प्रमुख योजनाऐं –

भारत सरकार तथा विभिन्न प्रदेशों की सरकारों द्वारा ग्रामीण विकास हेतु चलायी जा रही विभिन्न विकास योजनाओं तथा उनके प्रबन्धन का विवरण निम्नवत् है–

1. आदर्श ग्राम योजना– वर्ष 1903 में सर डेनियल हेमिल्टन ने सहकारिता के आधार पर ग्रामीण विकास की एक योजना बनाकर मद्रास के निकट **सुन्दरम ग्राम** में लागू की। इस योजना में ग्रामीण क्षेत्र के बेरोजगार युवक–युवतियों एवं कृषकों को प्रशिक्षण देकर आत्मनिर्भर बनाने पर बल दिया गया।

2. राष्ट्रीय प्रदर्शन योजना– सामान्य प्रदर्शन विधि को प्रभावशाली और योजनाबद्ध ढंग से प्रयोग करने के उद्देश्य से भारतीय कृषि अनुसन्धान–परिषद् (I.C.A.R.) द्वारा वर्ष 1965 में प्रारम्भ की गई। ये प्रदर्शन विषय–विशेषज्ञों द्वारा लगभग एक एकड़ भूमि पर किया जाता है। भारत सरकार ने वर्ष 2000–2001 से प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना के पाँच घटकों (प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य, ग्रामीण आवास, ग्रामीण पेयजल और पोषाहार) में से ग्रामीण पेयजल घटक को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

3. सर्व शिक्षा अभियान– सर्व शिक्षा अभियान नामक प्रारम्भिक शिक्षा का नया कार्यक्रम देश के 26 राज्यों और केन्द्रशासित प्रदेशों के 214 जिलों में शुरु कर दिया गया है। इस अभियान के तहत आरम्भिक तैयारियों के लिए केन्द्र सरकार ने धनराशि जारी किये है। इस अभियान को मार्च 2002 तक देश के सभी 593 जिलों में चलाया गया था। इस अभियान के तहत 2003 तक 6 वर्ष से 14 वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों को विद्यालय या वैकल्पिक विद्यालय की परिधि में लाने, 2007 तक पाँच वर्ष की प्राथमिक शिक्षा देने और 2010 तक आठ वर्ष की प्रारम्भिक शिक्षा देने की व्यवस्था रही। इस कार्यक्रम में विद्यालय के भवनों का निर्माण, अध्यापकों की नियुक्ति और उनके प्रशिक्षण और जिस गाँवों में शिक्षा सुविधाएँ नहीं है वहाँ विद्यालयों और वैकल्पिक विद्यालयों के लिए धन उपलब्ध कराया गया था। सभी अध्यापकों एवं विद्यालयों को निश्चित अनुदान राशि का आवंटन किया गया था।

4. निर्मल ग्राम पुरस्कार– सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान के क्रियान्वयन में तेजी लाने के लिए भारत सरकार ने पूर्णतः स्वच्छ और खुले में मल त्याग विहीन ग्राम पंचायतों, ब्लॉकों और जिलों के लिए 'निर्मल ग्राम पुरस्कार' योजना प्रारम्भ की गयी।

5. प्रधानमन्त्री रोजगार योजना– यह योजना शिक्षित बेरोजगार युवाओं के लिए 2 अक्टूबर, 1993 से प्रारम्भ की गई। इसके लिए चुने हुए आठवीं कक्षा उत्तीर्ण शिक्षित बेरोजगारों, जिनकी आयु 18 से 35 वर्ष के बीच है तथा जिनकी पारिवारिक आय 40000 रूपये वार्षिक से कम हो एवं जो उस क्षेत्र में पिछले तीन वर्षों से निवास कर रहे हैं, को व्यापारिक कारोबार के लिए एक लाख रूपये तक तथा अन्य गतिविधियों के लिए दो लाख रूपये तक तथा दो या दो से अधिक लोगों की भागीदारी वाली परियोजनाओं के लिए दस लाख रूपये तक का ऋण दिये जाने का प्रावधान है।

6. प्रधानमन्त्री ग्राम सड़क योजना (PMGSY)– दिसम्बर 2000 से 100 प्रतिशत केन्द्रीय प्रायोजित योजना के रूप में शुरू की गई पी0एम0जी0एस0वाई का उद्देश्य दसवीं योजनावधि के अन्त तक ग्रामीण क्षेत्रों में 500 या अधिक की जनसंख्या वाली सम्पर्क रहित बस्तियों को ग्रामीण सम्पर्क–सुविधा उपलब्ध कराना लक्षित है।

7. ग्रामीण आवास ऋण– **सह–अनुदान योजना**– यह योजना 1 अप्रैल, 1999 से आरम्भ की गई और इसमें 32000 रूपये तक की वार्षिक आय वाले ग्रामीण परिवारों को लक्षित लाभार्थियों में सम्मिलित करने का प्रावधान है। इस योजना में अधिकतम 10000 रूपये तक की सब्सिडी और 40000 तक का अधिकतम ऋण देने का प्रावधान है। इस योजना में सब्सिडी राशि में केन्द्र एवं राज्यों की हिस्सेदारी क्रमशः 75 : 25 प्रतिशत है।

8. राजीव गाँधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना– इस योजना का प्रारम्भ अगले पाँच वर्षों में देश के सभी गाँवों और निवास स्थलों का विद्युतीकरण करने, सभी आवासों को विद्युत उपलब्ध कराने तथा निर्धनता रेखा से नीचे (BPL) के परिवारों को निःशुल्क विद्युत कनेक्शन उपलब्ध कराने के उद्देश्य से योजना लागू की गई जो तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ0 मनमोहन सिंह द्वारा 4 अप्रैल, 2005 को लागू किया गया।

9. बन्धक ऋण गारण्टी योजना– ग्रामीण क्षेत्रों में आवासों की उपलब्धता बढ़ाने के अहम् उद्देश्यों को लेकर वर्ष 2002–2003 के बजट में सरकार द्वारा इस योजना को प्रारम्भ करने की घोषणा की गई। योजना को राष्ट्रीय आवास बैंक के माध्यम से संचालित किये जाने का प्रावधान रहा है। इस योजना के अन्तर्गत आवास ऋण प्राप्त करना सरल हो गया।

10. राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम– इस कार्यक्रम को शुरू करने का उद्देश्य गरीब परिवारों की वृद्धि में कमी लाने, परिवार के कमाऊ सदस्य की मृत्यु की दशा में सहायता तथा प्रसूता को सामाजिक सहायता का लाभ देना है। यह कार्यक्रम राज्य सरकारों के जन कल्याणकारी कार्यक्रमों की पूर्ति करता है ताकि सामाजिक भलाई व सहायता के न्यूनतम राष्ट्रीय स्तर के उद्देश्यों की प्राप्ति हो सके।

11. किसान क्रेडिट कार्य योजना– किसान क्रेडिट कार्ड योजना वर्ष 1998–99 में वाणिज्यिक बैंको, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों तथा सहकारी बैकों से देय ऋण को सुसाध्य बनाने के लिए प्रारम्भ की गई। 500 रुपये अथवा उससे अधिक उत्पादन ऋण के लिए पात्र, किसान, किसान क्रेडिट कार्ड प्राप्त करने के हकदार हैं। यह कार्ड किसानों को उनकी भूमि के आधार पर जारी किए जाते हैं। किसान क्रेडिट कार्ड का उपयोग किसान खेती के लिए बीज, उर्वरक और कीटनाशक आदि जरूरत की वस्तुओं को खरीदने के लिए करते हैं। वार्षिक समीक्षा की शर्त पर किसान क्रेडिट कार्ड 3 वर्ष के लिए वैध होता है। प्रत्येक आहरण का भुगतान 12 महीने में करना होता है। प्राकृतिक आपदाओं के कारण खराब हुई फसलों के मामले में ऋण को बदलते/पुनर्निर्माण करने की भी अनुमति होती है। लागत वृद्धि तथा फसल पैटर्न में परिवर्तन होने पर ऋण की सीमा को बढ़ाया जा सकता है। भारतीय रिजर्व बैंक के मानदण्डो के अनुसार ब्याज की दर में परिवर्तन भी किया जा सकता है।

12. सांसद आदर्श ग्राम योजना– प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने 11 अक्टूबर, 2014 को लोकनायक जयप्रकाश नारायण की जयंती की पूर्व संध्या पर सांसद आदर्श ग्राम योजना की शुरूआत की। इस योजना में यह अनुबन्धित है कि संसद के प्रत्येक सदस्य/सांसद को अपने संसदीय निर्वाचन क्षेत्र के एक गाँव को गोद लेना होगा और उसे एक वर्ष के भीतर आदर्श गाँव के रूप में विकसित करना होगा। लोकसभा का सदस्य मैदानी क्षेत्रों में 3000–5000 और पर्वतीय में 1000–3000 की आबादी वाले किसी भी गाँव का चयन कर सकता है।

13. महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना (मनरेगा) यह योजना 7 सितम्बर 2005 को भारत सरकार द्वारा अधिसूचित की गयी। आन्ध्र प्रदेश के अनंतपुर जिले से 2 फरवरी 2006 को इस योजना की शुरूआत हुई। यह योजना प्रारम्भ में 27 प्रदेशों के 200 जिलों में लागू की गयी। बाद में जिसके नाम में परिवर्तन किया गया जो पूर्व में 'राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम या नरेगा' था। 2 अक्टूबर 2009 महात्मा गाँधी की 140वीं जयन्ती पर इसका नाम' 'महात्मा गाँधी राष्ट्रीय रोजगार गारन्टी अधिनियम (मनरेगा)' से जाना जाने लगा। जिसके अन्तर्गत प्रत्येक ग्रामीण परिवार के वयस्क सदस्यों को एक वित्त वर्ष में 100 दिन का अकुशल श्रम के रोजगार की गारन्टी देता है जिसमें महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण दिये जाने का प्राविधान है।

14. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन–यह योजना बारहवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत 2013 में प्रारम्भ हुई जो ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों को स्वास्थ्य सेवाएं प्रदान कराती हैं। जिसके अन्तर्गत जननी सुरक्षा योजना एवं जननी शिशु सुरक्षा कार्यक्रम से जुड़ी योजनाएं संचालित हो रही है।

'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन ग्रामीण आबादी के लिए प्रभावी स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने के उद्देश्य से 12 अप्रैल, 2008 में तत्कालीन माननीय प्रधानमंत्री द्वारा शुरू किया गया था और महिलाओं और उनके स्वास्थ्य में सुधार सहित बच्चों के स्वास्थ्य के लिए वंचित समूहों, सार्वजनिक स्वास्थ्य को मजबूत बनाने में सामुदायिक स्वास्थ्य को सक्षम बनाने में सेवा वितरण की कुशलता को बढ़ाने के लिए किया गया था। इसके साथ इक्विटी और जवाबदेही को बढ़ावा देने व विकेंद्रीकरण के लिए 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन' सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली को मजबूत बनाने के लिए और इस तरह प्रमुख स्वास्थ्य संकेतकों में सुधार की चुनौती है उन 18 राज्यों पर विशेष ध्यान देने के साथ पूरे देश को शामिल किया गया।

15 आवास योजनाएं–यह ग्रामीण आवासीय कार्यक्रम का एक भाग है, इस योजना का उद्देश्य अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजाति एवं ग्रामीण निर्धन परिवार के लोगों को आवास प्रदान करना है। इन्दिरा आवास योजना एवं जवाहर रोजगार योजना आगे चलकर 1 जनवरी 1996 से एक दूसरे पर निर्भर होकर संचालित होने लगी।

16. खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2005 – सार्वजनिक वितरण प्रणाली का प्रारम्भ 1 जून 1997 में प्रारम्भ की गयी। भारत सरकार के निर्देशानुसार दिनांक 01 मई 1990 में नवीनीकृत सार्वजनिक वितरण प्रणाली का शुभारम्भ किया गया, जिसके अन्तर्गत अत्यन्त पिछड़े इलाके में रहने वाले परिवार एवं गरीब उपभोक्ताओं को नियंत्रित दरों से अपेक्षाकृत कम दरों पर खाद्यान्न उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई। भारत सरकार द्वारा योजना में परिवर्तन के फलस्वरूप सार्वजनिक वितरण प्रणाली एवं नवीनीकृत सार्वजनिक वितरण प्रणाली को समाप्त करते हुए 01 जून 1997 से परिलक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली लागू की गयी। जिसके अन्तर्गत बी0पी0एल0, अत्योदय, अन्न योजना, अन्नपूर्णा तथा ए0 पी0एल0 योजनाओं को सम्मिलित किया गया।

17 डॉ0 अम्बेडकर समग्र ग्रामीण विकास योजना– भीमराव अम्बेडकर के जन्म दिवस पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा वर्ष 1991 में गाँवों के सर्वांगीण विकास के लिए अम्बेडकर ग्राम्य विकास योजना शुरु किया गया। इस योजना का मूल उद्देश्य अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के बाहुल्यता वाले गाँवों को सभी मूलभूत सुविधाएँ प्रदान करना है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामों का विद्युतीकरण करना खड़ंजा एवं नाली का निर्माण कराना, स्वच्छ शौचालय का निर्माण कराना, इंदिरा आवास का निर्माण कराना, पेयजल सुविधा उपलब्ध कराना, प्राथमिक स्कूल भवन का निर्माण कराना, निःशुल्क बोरिंग, वृद्धावस्था पेंशन व विधवा पेंशन स्वीकृत कराना एवं आई0आर0डी0पी0 के अन्तर्गत रोजगार उपलब्ध कराना सम्मिलित है। मुख्यतः यह योजना उस गाँव में चलायी गई जिसमें दलित आबादी अधिक थी। जो दलित समाज के सामाजिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि में परिवर्तन के नये आयामों से जुड़ी हुई है।

18 छात्रवृत्ति योजनाएँ–यह योजना निम्न वर्गों के शैक्षिक विकास के तहत सर्वांगीण विकास के लिए संचालित हो रही है, जो अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं आर्थिक रूप से पिछड़े हुए वर्गों के विद्यार्थियों, दशम् एवं दशमोत्तर तथा व्यवसायिक पाठक्रमों में अध्ययनरत छात्राओं को दशमोत्तर छात्रवृत्ति योजना के तहत इंजीनियरिंग कॉलेज, मेडिकल कॉलेज, तथा प्रबन्ध संस्थाओं एवं महाविद्यालय/विश्वविद्यालय में अध्ययनरत अनुसूचित जाति के छात्राओं के शुल्क उनके विद्यालयों/संस्थाओं को सीधे विभाग द्वारा शुल्क की प्रतिपूर्ति किये जाने की योजना संचालित होती है।

19.उज्जवला योजना– महिलाओं को चूल्हों के धुएं से मुक्ति दिलाने और खाना पकाने में सुविधा पहुंचाने के लिए उज्ज्वला योजना के अंतर्गत 3.8 करोड़ महिलाओं को रसोई गैस के कनेक्शन दिए गए। इस कार्यक्रम में महिलाओं को एलपीजी कनेक्शन देने का लक्ष्य सरकार द्वारा बढ़ाकर 8 करोड़ कर दिया गया।

20. बेटी बचाओं, बेटी पढ़ाओं–महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक कदम आगे बढ़ते हुए यह योजना शुरू की गई। इस योजना से 104 जिलों में जन्म के समय लड़का–लड़की अनुपात में सुधार हुआ है; गर्भ की प्रथम तिमाही के दौरान पंजीकरण में 119 जिलों में बढ़ोत्तरी दर्ज हुई; माध्यमिक स्कूलों में लड़कियों के दाखिलों में भी बढ़ोत्तरी हुई है। सरकार ने बालिकाओं की शिक्षा के लिए अनेक छात्रवृत्तियां भी शुरू की हैं।

भारतीय समाज के विकास में महिलाओं की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है बल्कि इनकी बड़ी अहम् बहु–आयामी भूमिका रही है। इस प्रकार यद्यपि कृषि विकास ग्रामीण विकास का ह्रदय स्थल है लेकिन उसका समग्र रुप नहीं है। यह उससे कही अधिक विशिष्ट एवं व्यापक है क्योंकि गरीबी एवं असमानता पर इसमें अधिक बल दिया जाता है तथा आय एवं रोजगार के अवसरों का सृजन सम्पत्ति एवं सेवाओं की असमानता में कमी तथा गरीबी उन्मूलन इसके प्रमुख उद्देश्य है।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट होता है कि व्यापक सन्दर्भ में ग्रामीण विकास की संकल्पना जीवनोत्कर्ष हेतु ग्रामीण परिवेश का समग्र एवं व्यापक रुपान्तरण है जो स्वयं में एक बहुआयामी एवं बहुउद्देशीय अनवरत प्रक्रिया है जिसके निरन्तरता के द्वारा महिलाओं एवं समाज में पीछे छूट गये लोगों का उत्थान व कल्याण किया जाना सम्भव हो सकेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

- जार्ज, कोरेथ, (2017) ''ग्रामीण महिला सशक्तिकरण, उपलब्धि अभिप्रेरणा के माध्यम से सूक्ष्म–उद्यम'', सेज पब्लिकेशन नई दिल्ली,
- सिंह, कटार, (2011) ''ग्रामीण विकास सिद्धान्त, नीतियाँ एवं प्रबन्ध'', रावत पब्लिकेशन जयपुर,
- यादव सुबह, सिंह यादव सत्यभान, (1997) ''ग्रामीण विकास का आधुनिक दर्शन'', सबलाइय पब्किेशन्स, जयपुर,
- मोरावेत्जा, ई0 (1977) ''टवेन्टी फाइव इयर्स ऑफ इकोनॉमिक डेवलपमेंट'', फाइनेन्स एण्ड डेबलपमेंट,
- पावर, एन0 डी0 : डेवलपमेन्ट दि नीड फार इफैक्टिव डाइलाग, फाइलांग, फाइनेस्स एण्ड डेवलपमेन्ट,
- लवानिया, एम0एम0, भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र, रिसर्च, पब्लिकेशन, जयपुर
- सिंह, एन0वी0, सिंहज जनमेजय (2013) नारीवाद, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर,
- अनामिका (2001), स्त्रीत्व का मानचित्र, सारांश प्रकाशन, दिल्ली,
- सरला माहेश्वरी (1998), नारी प्रश्न, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,
- अम्बेडकर, बी0 आर0, बाबा साहब (2011), अछूत कौन और कैसे? सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली।
- ओमवेट, गेल (2015), 'दलित और प्रजातान्त्रिक क्रान्ति',उपनिवेशीय भारत में डॉ0 अम्बेडकर एवं दलित आन्दोलन सेज प्रभा पब्लिकेशन, दिल्ली।

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

भारतीय लोकतंत्र के सशक्तिकरण में डिजिटल इण्डिया की भूमिका

डॉ0 दीक्षा मिश्रा
पूर्व शोध छात्रा
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी

सारांश :
डिजिटल इण्डिया के रूप में एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम का आरम्भ दिल्ली के इंदिरा गांधी इंडोर स्टेडियम में 1 जुलाई 2015 को हुआ था। डिजिटल इण्डिया कार्यक्रम देश को डिजिटल रूप से सशक्त बनाने के लिये भारत सरकार द्वारा लिया गया एक बड़ा कदम है। देशभर में डिजिटल संरचना का निर्माण, डिजिटल साक्षरता, डिजिटल तरीके से सेवा प्रदान करना जैसे डिजिटल इण्डिया के महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। डिजिटल इंडिया देश में डिजिटल तरीके से सेवाएँ उपलब्ध कराने के लिये आवश्यक डिजिटल आधारभूत ढ़ाचा खड़ा करते हुये डिजिटल सशक्तिकरण का माध्यम बन रहा है। एक ऐसे विश्व में जहाँ अब भौगोलिक दूरियाँ बेहतर भविष्य के निर्माण में कोई बाँधा नहीं रह गई, भारत हर क्षेत्र में डिजिटल नवाचार का सशक्त केन्द्र बन चुका है। आप्टिकल फाइबर से जुड़े एक लाख से अधिक गाँव, 121 करोड़ मोबाइल फोन, 100 करोड़ आधार और 50 करोड़ इंटरनेट सेवा का उपयोग करने वाले लोगों के साथ भारत अब दुनिया में प्रौद्योगिकी के साथ सहजता से जुड़ी सबसे आबादी वाला देश है।

मुख्य शब्द : लोकतंत्र, सशक्तिकरण, सोशलमीडिया, सकारात्मक प्रभाव, नकारात्मक प्रभाव, वर्तमान समय में मीडिया की स्थिति।

प्रस्तावना :

लोकतांत्रिक, जनसांख्यिकीय और भौगोलिक रूप में विश्व के सबसे बड़े देश के रूप में भारत अपने नागरिकों को सशक्त बनाने के लिये और समग्र आर्थिक विकास के लिये (विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में) ई–गवर्नेस के अनुप्रयोग में एक बड़ी चुनौती का सामना कर रहा है। डिजिटलीकरण के दौर में इंटरनेट संचार और सूचना प्राप्ति का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण जरिया बन गया है। दशकों पूर्व इंटरनेट तक पहुँच को विलासिता का सूचक माना जाता था, परन्तु वर्तमान में इंटरनेट सभी की जरूरत बन गया है। कोविड–19 जैसी वैश्विक महामारी से विश्व के सभी देशों की अर्थव्यवस्थाएँ बुरी तरह से प्रभावित हुयी है, इस दौरान लोगों तक प्रशासनिक मदद व खाद्य सामग्री पहुँचाने का मार्ग प्रभावी रूप से डिजिटल माध्यम के द्वारा किया जा रहा था। ऐसी विकट परिस्थिति में जब अर्थव्यवस्था के लगभग सभी क्षेत्र प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुये तब डिजिटल सेवाओं का क्षेत्र ऐसा है जिसे सकारात्मक प्रदर्शन किया है। जिस गति से लोग डिजिटल प्रौद्योगिकी को अपना रहे हैं वह आयु, शिक्षा, भाषा तथा हमारी रूढ़िवादी सोच को ललकार रहा है। **प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के शब्दों में** ''मैं प्रौद्योगिकी को सशक्त करने के एक ऐसे माध्यम के रूप में देखता हूँ जो आशा और अवसर के बीच की दूरी को खत्म कर रहा है।'' उनके मतानुसार डिजिटल इण्डिया भारत से बदलाव का एक उद्यम है और सोशल मीडिया सामाजिक बाधाओं को कम कर रहा है। अभी हाल में बीत वर्ष 2022 में **राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्म ने** 7 श्रेणियों में 22 डिजिटल इण्डिया पुरस्कार विजेता को सम्मानित किया जिन्होंने जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर सकारात्मक बदलाव किये है। नागरिक सशक्तिकरण और डेटा शेयरिंग मंच से लेकर 'ईज ऑफ डुइंग बिजनेस' तक लोगों को लाभ पहुँचाने में मदद मिल रही है।

डिजिटल इंडिया अभिधान के तीन मुख्य दृष्टिगत क्षेत्र है– प्रथमतः, भारतीय लोगों के लिये एक जनोपयोगी सेवा की तरह पूरे देश में डिजिटल का होना क्योंकि ये तेज गति की इंटरनेट सेवा उपलब्ध इससे सभी की सरकारी सेवाओं तक पहुँच आसान हो जायेगी। इस प्रकार नागरिकों को जीवनपर्यन्त आनलाइन तथा प्रमाणिक पहचान उपलब्ध होगी। यह किसी भी आनलाइन सेवा जैसे बैंक खाता, वित्त प्रबन्धन, शिक्षा, सुरक्षित व सुनिश्चित साईबर स्पेस आदि के लिये कारगार साबित होगा। **द्वितीय,** डिजिटल साक्षरता को सम्भव बनाना। नागरिकों के डिजिटल सशक्तिकरण तथा डिजिटल संसाधनों की वैश्विक पहुँच को संभव करना। **तृतीय** आनलाइन सेवा डिजिटलाइजेशन के द्वारा सभी सेवाओं को तुरन्त उपलब्ध करना। डिजिटल इण्डिया कार्यक्रम का सबसे प्रमुख उद्देश्य तकनीकी के माध्यम से आम लोगों का जीवन सरल करना है।

लोकतन्त्र पर सोशल मीडिया का सकारात्मक प्रभाव : डिजिटलीकरण के कारण लोकतंत्र का भी सशक्तिकरण हुआ है इंटरनेट की ताकत ने भौगोलिक, क्षेत्रीय, धर्म, जाति तथा भाषा की कई मानव निर्मित दीवारों को तोड़ दिया है। डिजिटलीकरण की सबसे बड़ी उपलब्धि प्रभावी शासन तथा लोगों का सशक्तिकरण है। सरकार के डिजिटल इण्डिया कार्यक्रम का प्रमुख स्तम्भ **'कनेक्टिविटी'** है। भारतीय लोकतंत्र के सशक्तिकरण में सोशल मीडिया का सकारात्मक प्रभाव निम्नवत है–

- **डिजिटल लोकतंत्र :** लोकतांत्रिक मूल्य तभी विकसित हो सकते हैं जब लोगों के प्राप्त अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता हो। इस तरह सोशल मीडिया स्वतंत्रता के इन मंत्रों के माध्यम से डिजिटल लोकतंत्र की अवधारणा भी मजबूत करता है।
- **जवाबदेही तय करना :** सोशल मीडिया एक ऐसे प्लेटफार्म के रूप में कार्य करता है जहाँ अजेय प्रतीत होने वाली सरकारों पर भी सवाल उठाया जा सकता है, उनकी जवाबदेही तय कर सकता है एवं लोगों के एक–एक वोट द्वारा परिवर्तन ला सकता है।
- **लोगो की आवाज को मजबूत करना :** सोशल मीडिया में लोगों तक सूचना पहुँचाने की शक्ति है। ह्यूनीशिया जैसे देशों में मीडिया ने 'अरब स्प्रिंग' में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसे मुक्ति पाने के लिये एक तकनीक के रूप में इस्तेमाल किया गया था।
- **नागरिकों का एक–दूसरे से जुड़ाव :** नागरिक जुड़ाव के लिये सोशल मीडिया के निहतार्थ बहुत गहरे हैं क्योंकि बहुत से लोग इन प्लेटफार्मो पर समाचारों पर चर्चा एवं समकालीन मुद्दों पर बहस करते हैं। इस तरह लोग अपने तरह के लोगों से जुड़ते हैं एवं उनमें एक समुदाय की भावना मजबूत होती है।
- **राजनीतिक ध्रुवीकरण :** सोशल मीडिया की सबसे आम आलोचनाओं में से एक यह है कि यह 'ईको चेम्बर' बनाता है जहाँ लोग केवल उन दृष्टिकोणों से चीजों एवं घटनाओं को देखते हैं, जिनसे वे सहमत होते है और जिनसे असहमत होते है उन्हें सिर से खारिज कर देते हैं। चूंकि अभूतपूर्व संख्या में लोग अपनी राजनीति ऊर्जा को इस माध्यम से प्रसारित करते हैं, इसके उपयोग से अप्रायशित तरीकों से ऐसे सामाजिक परिणाम सामने आ रहे हैं जिनकी उम्मीद नहीं की गयी थीं।
- **प्रोपेगैड़ा फैलाना :** गूगल ट्रांसपेरेंसी के अनुसार 66 राजनीतिक दलों ने पिछले दो सालों में ज्यादातर चुनावी विज्ञापनों पर करीब 80 करोड़ डॉलर (59000 करोड़ रू0) खर्च किये है। इसके जरिये नफरत एवं सम्प्रदायिकता से भरे भाषणों को आसानी से फैलाया जा सकता है।
- **विदेशी हस्तक्षेप :** ऐसा माना जाता है कि वर्ष 2016 में अमेरिकी के चुनाव के दौरान रूसी संस्थाओं ने सोशल मीडिया को सूचना के हथियार के रूप में उपयोग किया एवं सार्वजनिक रूप से लोगों में

उपयोग किया एवं सावर्जनिक रूप से लोगों की भावनाओं को प्रभावित करने के लिये फेसबुक पर नकली पेज बनाकर प्रचार किया। इस तरह सोशल मीडिया को राष्ट्र, राज्य एवं समाज को विभाजित करने के इरादे से साइबर युद्ध के लिये उपयोग किया जा सकता है।

- **फेक न्यूज :** सोशल मीडिया लोगों को अपनी बात रखने का पर्याप्त मौका देता है। कभी–कभी जिसका इस्तेमाल किसी के द्वारा अफवाह फैलाने और गलत सूचना फैलाने के लिये किया जा सकता है।
- **असमान भागीदारी :** सोशल मीडिया नीति निर्माताओं की जनमत के बारे में धारणा को प्रभावित करता है, ऐसा इसलिये है क्योंकि ऐसा माना जाता है कि सोशल मीडिया प्लेटफार्म जीवन के हर क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं, लेकिन हर कोई इस प्लेटफार्म का समान रूप से उपयोग नहीं कर रहा है।

अतः स्पष्ट है कि लोकतंत्र के सशक्तिकरण में सोशल मीडिया के प्रभाव काल मानवीय गुणों, सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों गुणों को बढ़ावा देता है। अपने सबसे अच्छे रूप में यह हमें खुद को व्यक्त करने और खुद को बेहतर बनाने का मौका देता है। सबसे बुरी स्थिति में यह लोगों को गलत सूचना फैलाने और लोकतंत्र के मूल्यों को नष्ट करने के रास्ते खोलता है।

लोकतंत्र के सशक्तिकरण में डिजिटल इण्डिया के समक्ष चुनौतियाँ : लोकतंत्र के सशक्तिकरण के मध्य डिजिटल इण्डिया के समक्ष निम्नलिखित चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है–

1. विगत कुछ वर्षों में कई निजी और सरकारी सेवाओं को डिजिटल रूप प्रदान किया गया है और जिनके कारण उन लोगों को असमानता का सामना करना पड़ रहा है जो डिजिटली निरक्षर है।

2. किसी व्यक्ति के पास मोबाइल फोन का होना 'डिजिटल' होने का प्रमाण नहीं है। यहाँ तक कि यदि कोई व्यक्ति स्मार्टफोन का उपयोगकर्ता है, तो भी वह स्वयं को 'डिजिटल सेवी' नहीं कह सकता है जब तक कि उसके पास इंटरनेट कनेक्टिविटी न हो और वह इंटरनेट पर प्रासंगिक और समय पर जानकारी प्राप्त करना न जानता हो।

3. एसोचैम की एक रिपोर्ट के अनुसार, ''नीतियों में अस्पष्टता व ढ़ांचागत कठिनाइयों के चलते महत्त्वाकांक्षी डिजिटल इंडिया परियोजना का सफल कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के मामले में चुनौतियाँ हैं इसके अलावा बार–बार नेटवर्क कनेक्टिविटि टूट जाना या फिर सर्वर का ठप होना भी कठिनाई पैदा करता है।

4. भारत के अधिकांश मोबाइल व इंटरनेट उपयोगकर्त्ता शहरी क्षेत्र में निवास करते हैं, जबकि हम जानते हैं कि भारत की कुल आबादी का 67 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है।

5. डिजिटल इंण्डिया कार्यक्रम के सामने सबसे बुड़ी चुनौती ढ़ांचागत विकास में हो रही देरी है। एक अनुमान के अनुसार, भारत को बेहतर इंटरनेट कनेक्टिविटी के लिये 80 लाख से अधिक वाई–फाई हॉस्पॉट की जरूरत होगी, जबकि इस समय उनकी उपलब्धता बहुत कम है।

6. टैक्सेशन व अन्य नियामकिय दिशा–निर्देशों से जुड़े कुछ मुद्दे भी डिजिटल इण्डिया की राह में बाधा बन जाते हैं। कुछ सामान्य नीतिगत बाधाओं में से एक FDI नीति में स्पष्टता का अभाव भी है जिससे ई–कॉमर्स सेक्अर के विकास को प्रभावित किया है। नीतिगत ढ़ांचे में अस्पष्टता के कारण ही उबर और ओला जैसी परिवहन सेवा कंपनियों का बार–बार स्थानीय सरकारों से विवाद होता है।

7. भारत का मौजूदा सूचना प्रौद्योगिकी कानून साइबर अपराधों को रोकने के लिहाज से बहुत प्रभावी नहीं है। ए0टी0एम0 कार्ड की क्लोनिंग के अलावा, बैंक अकाउंट का हैक हो जाना, आपका डेटा और गोपनीय

जानकारी हैकर्स तक पहुँच जाने की शिकायत समय पर सामने आती रहती है। ऐसे में जब तक डिजिटल इण्डिया को वह रफ्तार नहीं मिल जायेगी, जो अनुपेक्षित है।

अतः देश के लोगों की इंटरनेट तक पहुँच ही पर्याप्त नहीं है बल्कि यह जो आर्थिक अवसर उपलब्ध है, लोगों को उसका लाभ उठाने में भी सक्षम होना चाहिये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. पाण्डे, डॉ0 जयनारायण (1905) भारत का संविधान, केन्द्रीय कानून एजेंसी।
2. गुप्ता विराग (2007) डिजिटल इण्डिया और भारत, अनव्य प्रकाशन।
3. शुक्ल रविन्द्र, (2008), सूचना प्रौद्योगिकी और समाचार पत्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. कोठारी चन्द्र गुलाब (11 नवम्बर, 2013) राजस्थान पत्रिका, संपादकीय लेख।
5. कुमार, अजय (2019), डिजिटल इण्डिया, प्रभात प्रकाशन, अली रोड, नई दिल्ली।
6. सेठ वितिन (1 जनवरी 2023), डिजिटल युग में सफलता, मंजुल पब्लिकेशन हाउस, भोपाल।
7. गुप्ता विराग (2023) डिजिटल कानूनों से समृद्ध भारत, प्रभात प्रकाशन प्रा0लि0, नई दिल्ली।

*****

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

कुचबँधिया समुदाय का सीमांतीकरण : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

(विशेषकर बुंदेलखण्ड में निवासरत घुमन्तू समुदाय कुचबँधिया पर आधारित)

सौरभ पाल
शोध छात्र, समाजशास्त्र विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

सारांश–

आज भारत आजादी के 75 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में अमृत महोत्सव मना रहा है, तब यह बात बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाती है कि इन अमृत की बूँदों से कुछ समुदाय क्यों वंचित है। विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र होने का अभिमान महसूस करने वाला देश क्यों इन सीमांत समूहों को मजबूती प्रदान नही कर पा रहा है। घुमंतू समुदाय जैसे नट, कंजर, कुचबँधिया, सपेरा, बंजारा आदि ऐसे ही सीमांत समूहों में सम्मिलित है। जिनकी देश के स्वतंत्रता के संघर्ष में निर्णायक भूमिका रही है, लेकिन ऐसा लगता है कि भारत के विकास में उन्हें उनकी भागीदारी से वंचित रखा गया है। उनकी अपनी विशिष्ट संस्कृति, उत्पादन के भिन्न तरीके, जीवन जीने की शैली, आधुनिकीकरण से दूरी तथा आर्थिक दृष्टिकोण में उनके स्थान का निर्धारित न हो पाना उनके सीमांतीकरण के लिये प्रमुख कारण है। आजादी के इतने वर्षों बाद भी ये समुदाय अत्याचार, हिंसा और बहिष्करण का शिकार है तथा उस मानवीय सम्मान को प्राप्त नही कर पाये जिसके ये हकदार है। ये अपनी अस्मिता को बनाये रखने के लिये संघर्षरत है। लोकतंत्र में इनकी आवाज कहीं गुम हो गई है, जिससे कि वे मूक बने हुये हैं। इन समुदायों की कोई सशक्त राजनीतिक भागीदारी नही है, न ही ये मजबूत दबाव समूह के रुप में उभर पाये हैं, जिससे कि ये राष्ट्रीय विमर्श को प्रभावित कर पाये।

प्रस्तुत अध्ययन बुंदेलखण्ड में निवासरत घुमन्तू समुदाय कुचबँधिया पर आधारित है। अकादमिक विमर्शों में उत्तर प्रदेश के बुंदेलखण्ड क्षेत्र में घुमन्तू समुदायों पर गम्भीर चिंतन का अभाव रहा है। यह अध्ययन मुख्य रुप से गहन क्षेत्रीय कार्य पर निर्भर है जिसमें यह देखने का प्रयास किया गया है कि बुंदेलखण्ड क्षेत्र में कुचबँधिया समुदाय किन कारणों से सीमांतता पर है।

कुंजी शब्द–बुंदेलखंड, कुचबँधिया समुदाय, सीमांतीकरण, पहचान संकट, कलंकीकरण, बहिष्करण।

प्रस्तावना

घुंमतू समुदाय का नाम लेते ही हमारे सामने एक ऐसे समाज की छवि उभरती है, जिनकी एक विशेष रंग बिरंगी जीवन शैली, खास तरीके का लोकगीत एवं परम्परांए और जो निरन्त गतिशील रहते हैं। इन समुदायों का काम महज खेल तमाशा और करतब दिखाना नही है बल्कि देश की विरासत को संजोने में अहम योगदान रहा है। इनके पास शिक्षा की कोई डिग्री या पद नही था, लेकिन इनके द्वारा किया गया काम हमारे द्वारा सृजित ज्ञान की अथाह पूँजी है। ऐसा ही एक समुदाय कुचबँधिया है जो बुंदेलखण्ड के बाँदा जिले के कई स्थानों पर निवासरत है। यह समुदाय कंजर जाति की एक उपजाति है। प्राचीन काल में इस समुदाय के सदस्य जुलाहों के लिये कूँच का निर्माण करते थे, जिसके कारण इन्हें कुचबँधिया नाम से सम्बोधित किया जाने लगा। रसल और हीरालाल (1975) के अनु सार '' कुचबँधिया, कंजर जाति के बहुत ही प्रतिनिधित्वपूर्ण भाग है। यह सामुदायिक रुप से अपराधी नहीं है या वह दूसरे से किसी स्तर से कम नही है।'' ये समुदाय अपने आपको राजपूत मानते है तथा महाराणा प्रताप से अपना सम्बन्ध जोड़ते है, इसलिये घुरिये (1975:28) इन्हें पिछड़े हुये हिन्दू कहते है। ये अपने आपको माना का उपासक मानते है।

उत्तर प्रदेश में, 1981 की जनगणना के अनुसार, इस समुदाय के लोगों की संख्या 50,752 थी। इनको उत्तर प्रदेश के बुंदेलखण्ड क्षेत्र में गिहार, पथरकट, सिर्किपाल (खस घास से चटाई बनाने वाले), कुचबँधिया (ब्रश बनाने वाले) और रेचबंध (कछुए पकड़ने वाले) के नाम से भी जाना जाता है (माता प्रसाद, 2007)।

अध्ययन क्षेत्र

बुंदेलखण्ड सूखे से ग्रसित एक पठारी क्षेत्र है जिसमें उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के 13 जिले सम्मिलित है। प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश के बुंदेलखण्ड क्षेत्र के बाँदा, जनपद में किया गया, जो महर्षि वामदेव की तपोभूमि है और यमुना की सहायक नदी केन के किनारे स्थित है। इस जनपद के अन्तर्गत पाँच तहसीलें बाँदा सदर, अतर्रा, नरैनी, बबेरु और पैलानी है। इस जनपद के अतर्रा तहसील के मूसानगर में नहर के समीप और बाँदा तहसील के सिकन्दरपुर तिंदवारी में हीरो एंजेसी के बगल में निवासरत कुचबँधिया डेरे में मैने अपना अध्ययन जनवरी 2022 से अप्रैल 2022 के दौरान किया। इन दोनों डेरे में लगभग 29 परिवार निवासरत है, जिनकी जनसंख्या लगभग 99 है।

कुचबँधिया समुदाय का सीमांतीकरण

सीमांतीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति या समूह को एक समाज में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक या राजनीतिक सत्ता के महत्वपूर्ण पदों और प्रतीकों को हासिल करने से रोका जाता है। इसको परिवर्तन की एक नकारात्मक प्रक्रिया माना जाता है। जब विकास के प्रयत्नों के बावजूद दोषपूर्ण नीतियों की वजह से या दुर्बल समूहों की स्वंय की असमर्थताओं के चलते वे विकास का लाभ पाने से वंचित हो जाते है और अभावपूर्ण व तिरस्कृत जीवन जीने के लिये बाध्य हो जाते है, तब इसी स्थिति को सीमान्तीकरण कहा जाता है।

सीमान्तीकरण की अवधारणा को सीमान्त व्यक्ति के अर्थ के संदर्भ में सरलता से समझा जा सकता है। रॉबर्ट ई0 पार्क ने समाजशास्त्र में सबसे पहले सीमान्त व्यक्ति की अवधारणा को व्यवस्थित रुप से प्रस्तुत किया। उनके शब्दों में, ''जो व्यक्ति दुविधा में उलझे होने के कारण अपने बारे में स्वंय कोई निर्णय लेने में असमर्थ होता है, उसे हम सीमान्त व्यक्ति कहते हैं'' (राबर्ट ई0 पार्क 1928:3)।

सैद्धान्तिक स्तर पर सीमांतीकरण को दो रुपों में समझा जा सकता है–सामाजिक सीमांतता तथा स्थानिक सीमांतता। सामाजिक सीमांतता की व्याख्या सामाजिक स्थिति के आधार पर की जाती है। इसमें जो असमानता होती है उसे मुख्यधारा से बहिष्करण का परिणाम माना जाता है। स्थानिक सीमांतता मुख्यतः भौगोलिक कारणों का परिणाम होती है। प्रमुख आर्थिक स्थान से दूरी के कारण यहाँ उपयुक्त बुनियादी ढाँचा का अभाव होता है जिससे यह मुख्यधारा में हुये विकास की तुलना में पीछे रह जाते है। बुंदेलखण्ड क्षेत्र में कुचबँधिया समुदाय दोहरा सीमांतीकरण सह रहे है। पहला बुंदेलखण्ड सूखे से प्रभावित क्षेत्र है। दूसरा इस समुदाय के समक्ष आजीविका के सीमित विकल्प उपलब्ध है।

सामाजिक – आर्थिक स्थिति

सन् 1901 की जनगणना में इन्हें कंजर की उपजाति मानते हुये हिन्दू सामाजिक संस्तरण के पाँचवे वर्ग में रखा गया है। इस वर्ग में कुल 23 समुदाय थे, जिनमें कंजर का स्थान नौवें स्थान पर है (सेन्सज ऑफ इॅण्डिया, 1901:209–210)। अर्थात् कुचबँधिया समुदाय भी इसी स्तर पर है। प्राचीन समय में ये समुदाय गधों के ऊपर अपना सामान लादकर एक गाँव से दूसरे गाँव दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुओं को बेचकर जीविकोपार्जन करते थे। फिर आधुनिकीकरण और बाजारीकरण के ग्रामीण अंचलों में प्रवेश के कारण इनकी पारंपरिकता पीछे छूटते चली गई, जिसके कारण ग्रामीण समुदाय के साथ जो इनकी जुगलबंदी थी वह भी समाप्त होती चली गई। ग्रामीण समुदाय के साथ जुगलबंदी टूटने के कारण यह समुदाय सीमांतता पर आ गये। अध्ययन किये हुये दोनों क्षेत्रों में निवासरत् कुचबँधिया समुदायों ने अभी स्थाई जीवनशैली को

नही अपनाया है। इन दोनो क्षेत्रों में किसी भी सदस्य के पास स्थाई आवास नही है। इनके आवास ज्यादातर पन्नी के बने हुये है। दोनो डेरों के ज्यादातर सदस्य अशिक्षित है। इन दोनों डेरों के पास एक भी प्राइमरी स्कूल नहीं है। बिजली, पानी, सड़क जैसी आधारभूत सुविधाओं से इनके डेरे पूरी तरह से उपेक्षित है। दोनो डेरों के ज्यादातर सदस्य जीविकोपार्जन हेतु आस–पास के गाँव में कपड़ों की फेरी, सिलबट्ट टाँकने या कूड़े बीनने का काम करते हैं। मूसानगर डेरे के एक सदस्य चुनवाद बताते है कि ''बरसात के महीनों में सबसे ज्यादा समस्या होती है जबकि त्यौहारों के समय इनकी अच्छी बिक्री हो जाती है।'' दोनों डेरों के अधिकांश सदस्यों की अब यही इच्छा है कि अब इन्हें भी आवास, शौचालय आदि योजनाओं का लाभ मिले। ऐसी आकांक्षा और मांग का जन्म इनके अंदर इसलिये है क्योंकि दूसरी दलित जातियाँ ये सब लाभ लेकर बहुत आगे निकल गयी है। अब ये लोग भी स्थायित्व चाहते है। इनकी आकांक्षा है कि इनके बच्चे भी इन उच्च दलित जातियों के बच्चों की भाँति सरकारी नौकरी प्राप्त करें। परन्तु ये समुदाय सीमांतता पर है क्योंकि ये लोग संगठित नही है न ही ये संख्याबल में इतने है कि स्थानीय स्तर या राज्य स्तर पर वोट बैंक की राजनीति में अपनी किसी भी तरह की उपस्थिति दर्ज कर पाये। जितेंद्र सिंह (2018,153) के अनुसार ''इस समुदाय के बारे में लोगों के दिमाग में एक पूर्वाग्रह बना हुआ है कि ये बहुत आलसी और कामचोर है। ये कुछ भी बचाते नही है। दिन में कमाते है, रात को उड़ा देते हैं। ये लोग अपने खाली समय का लुत्फ उठाते हैं। इनमें अपनी संपत्ति और स्वतंत्रता को सँभालने की योग्यता नही है। इस प्रकार, उच्च दलित जातियों ने इनको दोषी करार देकर सीमान्त पर धकेल दिया है।''

पहचान एवं सूचीकरण की समस्या

घुमंतू समुदायों की पहचान और उनका सूचीकरण प्रत्येक राज्य में एक समान नही है। बालकृष्ण रेणके की अध्यक्षता में गठित नेशनल कमीशन फार डीनोटिफाइड, नोमैडिक ऐंड सेमी नोमैडिक ट्राइब्ज (2008) की रपट के अनुसार उत्तर प्रदेश में 38 समुदाय घुंमतू के रुप में और 57 समुदाय विमुक्त समुदाय के रुप में दर्ज किये गये हैं। परन्तु इस रपट में उत्तर प्रदेश के घुमन्तू समुदाय की श्रेणी में कुचबँधिया समुदाय को सम्मिलित नही किया गया है जबकि वहीं दूसरी ओर मध्य प्रदेश की घुमन्तू समुदाय की श्रेणी के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है। उत्तर प्रदेश में समुदाय के सदस्यों को 'कुचबँधिया जाति' के स्थान पर 'कंजड जाति' के नाम से जाति प्रमाण–पत्र निर्गत किया जा रहा है जबकि मध्य प्रदेश में 'कुचबँधिया जाति' के नाम से। सन् 2000 से पहले जब उत्तर प्रदेश का विभाजन नही हुआ था, तब समुदाय को 'भोटिया जनजाति' के नाम से प्रमाण–पत्र निर्गत किये जाते थे (बी0के0लोधी, 2020:274)। इस समुदाय के सदस्य कंजड जाति के नाम से पहचान नहीं चाहते क्योंकि वे कंजड जाति के तरह अपराधिक कार्यों में संलग्न नही रहते इसलिये इन्होंने अपने को कंजड समुदाय से पूरी तरह से पृथक कर लिया है। दोनों ही डेरों के लगभग 98 प्रतिशत लोग गिहारा के नाम से पहचान प्राप्त करना चाहते है क्योंकि ज्यादातर सदस्यों का मानना है कि कुचबँधिया या कंजड के नाम से पहचान मिलने पर इन्हें समाज में सम्मानजनक तरीके से नही देखा जाता है। वर्तमान में यह समुदाय कंजड और कुचबँधिया के बीच में झूल रहा है।

कलंकीकरण

ब्रिटिश औपनिवेशिक शासनकाल में बहुत से समुदायों को शक के आधार पर आपराधिक जनजाति अधिनियम 1871 के तहत सूचीबद्ध किया गया। इनमें से एक कुचबँधिया समुदाय भी था। आजादी के बाद सन् 1952 में इसे समाप्त कर दिया गया लेकिन ये समुदाय आज भी इस कलंक से छुटकारा नही पा सके है। आज भी मुख्यधारा का समाज इन्हें शक की नजर से देखता है। वे नही चाहते है कि ये लोग उनके आस–पड़ोस में बसे। मूसानगर डेरे के सदस्यों ने बताया कि गाँव के प्रभुत्वशाली व्यक्ति ने कई बार इनको यहाँ से छोड़ कर चले जाने हेतु धमकाया है। ये लोग नही चाहते है कि हम यहाँ पर बसे। हमारे बच्चे

अगर उनकी बस्ती के बच्चों के साथ खेलने के लिये जाते है तो उन्हें गालियाँ या मारपीट कर भगा दिया जाता है। दोनों ही डेरों के सदस्यों ने बताया कि जब वे वहाँ पर बसे थे तो नजदीकी पुलिस थाने से पुलिस आई और उनसे उनके पहचान पत्र थाने में जमा कराने के लिये बोला और यदि वे ऐसा नही करेंगे तो आस–पास चोरी होने पर उन्हें शक की नजर से देखा जायेगा।

बहिष्करण

इस समुदाय के सदस्य जीविकोपार्जन हेतु छोटे–मोटे काम करते हैं जो कि ज्यादातर जातिगत परम्परा से संचालित है। उनकी यही आर्थिक गतिविधियाँ ही उनके आस–पास के गाँवों के सदस्यों के साथ बातचीत का एक मात्र स्त्रोत है, भले ही भूतपूर्व अपराधी जनजाति होने के नाते उनके साथ भेदभाव किया जाता है। लॉकडाउन के समय इस समुदाय के सदस्यों को और भी अधिक भेदभाव का सामना करना पड़ा। जब वे अक्सर गाँव में अपनी आजीविका कमाने के लिये जाते थे तो उन्हें लोगों से शत्रुता का सामना करना पड़ा। मूसानगर डेरे के एक सदस्य 'राजू' उस समय की स्थिति को बताते–बताते रो पड़े। उनके शब्दों में ''यदि पुलिस वाले हमको खाना नही पहुँचाते तो हम–हमारे बच्चे भूख से मर जाते है। वे आगे बताते हुये कहते है कि गाँव के एक सदस्य के दरवाजे के सामने सरकारी हैण्डपम्प लगा हुआ था, उन लोगों ने उस हैण्डपम्प की चैन खींच ली ताकि हम पानी लेने उनके दरवाजे के पास न आ जाये। हम लोगों ने नहर का पानी ही पीकर अपनी प्यास बुझाई।''

सिकन्दरपुर डेरे की एक महिला 'भूरी' लॉकडाउन के समय को याद करके बताती है कि ''हम लोग बैर को बीन–बीन कर खाये। हम लोगों ने तेरह वाले के खेतों से हरे चने को खेत से तोड़कर सिलबट्टे में पीस–पीस कर उसकी रोटी बनाकर अपने बच्चों को खिलाकर जिलाया। आगे बोलते–बोलते वे रो पड़ती है और कहती है कि भगवान न करे कि ऐसे दिन किसी को देखने पड़े।''

उपसंहार

लोकतंत्र सही मायनों में तभी स्थापित होगा, जब सभी समुदायों की संसाधनों तक पहुँच हो और सभी को सम्मानजनक जीवन जीने का अधिकार मिल सके। आज जरुरत है इन सीमांत समूहों की वास्तविक समस्याओं को समझकर उनकी जरुरतों के मुताबिक योजनाओं को बनाने की जिससे इन अदृश्य और मूक समुदायों की आवाज लोकतंत्र में मुखरित हो सके। इनके विकास के लिये हमें सामूहिक प्रसास की जरुरत है। जिससे इतने वर्षों के शोषण, वंचना के बाद भी हमें ह्रदय से स्वीकार कर सकें। साथ ही सरकार को ऐसे कौशल विकास योजनाओं का निर्माण करना चाहिये, जिससे इनके हुनर को संरक्षित और उचित सम्मान प्राप्त हो सके। ये समुदाय कोई एकाएक सीमांतीकरण का शिकार हुये हो ऐसा नही है। इनकी अपवंचना का एक लम्बा इतिहास रहा है। अकादमिक जगत ने इन पर ज्यादा ध्यान नही दिया। आज जरुरत है इन सीमांत समूहों की समस्याओं को सामने लाने की, जिससे इन समुदायों के दर्द, कलंक और अपवंचना को समझा जा सके। हमें यह आशा है कि तभी हम लोकतंत्र के साथ सीमांत पर स्थित इन समुदायों का सबलीकरण कर पायेंगे।

संदर्भ सूची–

1. Census of India (1991). *Central Provinces Report.* Part-1. Vol-8. Chapter-9.
2. Ghurye. G.S. (1975). *Caste and Class in India*. Bombay : Popular Book Depot.
3. Lodhi, B.K. (2020). "Kuchbandiyas of Bundelkhand : Still a Stigmatized Community," Aryavart Shodh Vikas Patrika, Vol.13, No. 11, issues.17.
4. मेरवाल, भगवानदास. (2008). *रेत कंजर समुदाय के सामाजिक तानेबाने के अर्न्तकथा.* नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन.
5. Park, Robert Ezra. (1928). "Human Migration and the Marginal Man," *American Journal of Sociology*.
6. प्रसाद, माता (2007). *उत्तरांचल सहित उत्तर प्रदेश की दलित जातियों का दस्तावेज.* नई दिल्ली : सम्यक् प्रकाशन.
7. Russell, R.V. and Hiralal (1975). *Tribes and Caste of the Central Provences of India*. Vol.3. Delhi : Rajdhani Book Center.
8. सिंह, जितेन्द्र (2018). ''बुंदेलखण्ड के सीमांत पर स्थित एक समुदाय का गुणात्मक अध्ययन'', *सामाजिक विमर्श,* सेज प्रकाशन, नई दिल्ली, अंक. 1(2)

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

दक्षिण पूर्व ऐशिया और अंतराष्ट्रीय व्यापार का ऐतिहासिक व समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. धर्मेन्द्र कुमार बघेल
गोविन्द गुरू जनजातिय विश्वविद्यालय,
जिला बांसवाड़ा राजस्थान 327001 से सम्बद्ध
माँ भारती महाविद्यालय कुशलगढ़, राजस्थान

प्रत्येक देश में भारतीय अल्पसंख्यकों की उपस्थिति, समकालीन दक्षिण पूर्व एशिया की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। यहां भारतीय मूल के व्यक्तियों की कुल जनंसख्या का अनुमान करीब 20 लाख के आसपास लगाया जाता है। भारत तथा दक्षिण पूर्व एशिया के देशों के मध्य पहले के व्यापारिक एवं आर्थिक गठबन्धनों के कारण भारतीयों के इस क्षेत्र में बसने की शुरूआत हुई। भौगोलिक निकटता, व्यापारिक दृष्टि से इस क्षेत्र की अनुकूल स्थिति एवं गर्म मसालों जैसी वस्तुओं की उपलब्धता कुछ ऐसे कारणा थे जिन्होंने भारतीय व्यापारियों एवं सौदागरों को इस क्षेत्र में आकर्षित किया। व्यापार के साथ ही भारतीय संस्कृति एवं बौद्ध धर्म इस क्षेत्र में पहुँचा। भारतीय संस्कृति ने वहां की स्वदेशी सांस्कृति मान्यताओं को उखाड़े बिना वहां के व्यक्तियों, कला, साहित्य एवं वस्तुकला पर गहरा प्रभाव डाला, परन्तु वियतनाम के जहां चीनी संस्कृति का अधिक गहरा प्रभाव था कोई प्रभाव न डाल सका।[1]

19वी सदी में इस क्षेत्र में भारतीयों का उत्प्रवासन काफी बड़े पैमाने पर हुआ था जब अंग्रेज (जिन्होंने भारतीय उपमहाद्वीप के साथ–साथ वर्मा एवं माले प्रायद्वीप को भी उपनिवेश बना लिया था)

भारतीयों को इस क्षेत्र में काफी बड़ी संख्या में ले गये। भारतीयों के रूप में उनको उस क्षेत्र के साधनों के शोषण हेतु कड़ी मेहनत करने वाले सस्ते मजदूर प्राप्त हुए और उन्होंने उनके सैनिक प्रशासन में नीचे के स्तरों पर काम करके उनकी सेना को भी काफी सहायता दिया था।

दूसरे विश्व युद्ध के बाद के काल में औपनिवैशिक प्रणाली का समाना हुआ और क्षेत्र के स्वतंत्र राज्यों का उदय हुआ। इससे भारतीय उत्प्रवासियों को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ा और उन्हें अपनी सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक भूमिकाओं और स्थितियों की सीमाओं का पुनः निर्धारित करना पड़ा। विशेषतौर से वर्मा एवं मलेशिया में समाज के बहुलवादी वर्ग ने भारतीय मूल के निवासियों के सामने गंभीर तथ विराट चुनौतियां पेश कर दी थी।

उत्प्रवासन के मूल स्थान और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :–

भारतीयों के दक्षिण पूर्व एशिया में आरंभिक आवासो का उल्लेख छठी सदी ई. पूर्व से भारतीय साहित्य में देखने को मिलता है। भारत के महान ग्रंथ रामायण में स्वर्ण द्वीप एवं यावा द्वीप का उल्लेख है। द्वीप 'संस्कृत' में दोंनो तरफ पानी के बीच की भूमि को कहते है अर्थात प्रायद्वीप या टापू, जबकि स्वर्ण का मतलब सोना एवं यावा का मतलव था होता है। पुराणों में मलाया का उल्लेख द्वीप एवं यावा द्वीप के रूप में किया गया है। हालांकि "इन नामों के स्थानों की सही स्थिति के बारे में जानना कठिन है परन्तु हम यह निश्चित रूप से कह सकते है कि ये दक्षिण पूर्व एशिया में है जहां के यावा द्वीप की मुख्य भूमि एवं टापुओं ने भारतीयों व व्यापारियों के सोने की तलाश में यहां आने के लिए आकर्षित किया।"[2]

भारत के पूर्वी तट के समुद्र यात्रा करने वाले व्यक्तियों के बीच में वर्मा देश का नीचे का भू–भाग एवं माले प्रायद्वीप सोने की भूमि के रूप में जाने जाते थें और यह निश्चित प्रतीत होता है कि कम से कम छठवी सदी ई.पू. के बाद से सोने एवं टीन की खोज में भारतीय व्यापारी इन भूमियों एवं प्रायद्वीपों की समुद्र से यात्रा करते रहते थे। तीसरी सदी ई.पूर्व में सम्राट अशोक ने स्वर्णभूमि शायद आधुनिक वर्मा का निचला भाग पर बौद्ध मत के प्रचारक भेजे। जातको यानि बुद्ध के जन्म की कहानियों में जो प्राचीन भारत की लोक कथाओं में प्रतिष्ठित है, प्रायः स्वर्णभूमि की यात्रा के बारे में बताया गया है।

इसके अलावा "कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दिये गये एक विवरण द्वारा राजा को किसी दूसरे के क्षेत्र पर कब्जा करने या अपनी अधिशेष जनसंख्या को वहां भेजकर नया देश बनाने की सलाह यह जाहिर करती है कि ईसाई संवत के पूर्व दक्षिण पूर्व ऐशिया में भारतीय प्रवासियों की एक लहर उठी थी।"[3]

19वी सदी के आखिरी चरण में दक्षिण पूर्व एशिया की सभ्यतागत प्राचीनताओं का अध्ययन कर रहे यूरोपीय विद्वानों ने जब वहां के धर्म, कला, एवं वास्तुकता पर संस्कृत के प्रभाव की महत्ता को पहचाना तो उन्होंने यह माना कि ये सब पूर्व की तरफ भारतीय विस्तारीकरण के अभियानों के फलस्वरूप हुआ है।

जब हम दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीयों के उत्प्रवासन की शुरू की लहर के स्पष्टीकरण हेतु भारतीय इतिहास की खोज कराते है तो निम्न कारण सामने आते हैं।

सर्वप्रथम यह समस्या, भारत की उस समय की अस्त व्यस्त परिस्थितियों की बजह से पैदा हुई जिसके कारण काफी संख्या में शरणाथियों को समुद्र के पार नये घर बसाने का प्रयत्न किया। कुछ विद्वानों का मत है कि तीसरी सदी ई.पू. में मौर्य सम्राट अशोक ने खून की नदी बहाकर कलिंग पर जो विजय प्राप्त की थी, वह भी इस बाहिर्गमन का करण हो सकती है। दूसरा मत है कि "पहली सदी ई. में उत्प्रवासन एवं वर्हिगमन समुद्रगुप्त के अभियानो के फलस्वरूप हुआ जो उसी काल में हुए थे जब दक्षिण पूर्व एशिया पर भारतीय प्रभाव पड़ना शुरू हुआ था।"[4]

दूसरे इतिहासकार "बिर्यान हेरीसन ने अपनी सुविख्यात पुस्तक" दक्षिण पूर्व एशिया एक लघु इतिहास में यह मत प्रकट किया है कि दक्षिण पूर्व ऐशिया पर भारतीय प्रभाव मूल रूप से व्यापारिक प्रभाव था–भारतीय व्यापारियों की तुलनात्मक प्रतिज्ञा एवं संपन्नता के फलस्वरूप इस क्षेत्र के अनेक भागों में भारतीय संस्कृति ने अपनी जड़े मजबूती से जमाई है।"[5] प्रारम्भ की चार सदियों के दौरान भारतीय प्रभाव एवं बौद्ध धर्म प्रचारकों के आगमन का और अधिक प्रामाणिक प्रमाण दूसरी एवं तीसरी सदी की बुल की प्रतिमाओं से प्राप्त होता है। जिन्हें सिआम (आइलैण्ड) चम्पा, (कम्बोडिया), सुमात्रा, जावा एवं सेलीहोस (इन्डोनेशिया) में पाया जाता है।

इस प्रकार के प्रमाणो से सारे दक्षिण पूर्व एशिया में भारतीय संस्कृति के फैलाव का एवं अनेक अलग क्षेत्रों में भारतीय आवासों एवं उनके शासन का आभास होता है।

एशिया पूर्व एशिया के व्यक्तियों के लिए, विशेष तौर से शासकों के लिए भारतीय प्रभाव का मतलब संस्कृत भाषा साहित्य एवं लिखने की कला पर आधारित एवं विकसित संस्कृति, ब्राह्मण एवं बौद्ध, धर्म, हिन्दू पौराणिक कथाओं, विशेष, कलात्मक, पद्धतियों एवं तकनीकों, एवं तंत्र के बारे में हिन्दू विचारधारा, नियम संहिता एवं प्रशासन के तरीकों का प्रभाव था।

शनै–शनै ईरान संस्कृति का प्रस्तुतीकरण एवं प्रचार धीमी गति से हुआ। बहुत लम्बे समय तक राजमहलो, एवं कुछ अल्पसंख्यक भारतीय कर्मचारियों के अलावा, दक्षिण पूर्व एशिया के लोग नई विदेशी संस्कृति के प्रभाव से मुक्त रहे होंगे और जीववाद, पूर्वजों की पूजा और अपने ग्रामीण धर्मकृत्यों जैसे प्राचीन रिवाजों को मानते रहे होगे। धार्मिक रूप से राजा को देवता स्वरूप मानने को लेकर ब्राह्मणवाद को विशेषकर से एक कुलीन वर्ग का धर्म माना जाता था।

इस प्रकार एकसाथ ऐसे दो प्रमुख कारण थे जिनकी वजह से भारतीयों का दक्षिण पूर्व एशिया के लोगों के साथ संपर्क स्थापित हुआ और भारतीयों का दक्षिण पूर्व एशियाई क्षेत्र में उत्प्रवासन भी शुरू हुआ।

देखाजाय तो आधुनिक काल में भारतीयों का उत्प्रवासन 19वी सदी के प्रारंभ में अंग्रेजी औपनिवेशिक शासन के दौरान भारतीयों के दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में बड़ी संख्या में उत्प्रवासन भी प्रक्रिया की शुरूआत हुई। मलेसिया, वर्मा, इत्यादि दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में बहुसंख्या में पाये जाने वाले प्रागैहासिक संस्थानो का शोषण करने हेतु। रबर, चाय जैसी फसलों की खेती एवं उत्पादन का कार्य करने हेतु औपनिवेशिक सत्ता को मजबूत करने की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार वर्मा में भारतीय प्रवासियों का संगठन खेतिहर एवं गैर खेतिहर, दोनों प्रकार का था। इनमें तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश के छोटी जाति के मजदूर थे। प्रान्तीय सरकार में ब्राह्मणों एवं कायस्थों की संख्या अधिक थी। अंग्रेजी फौज एवं पुलिस दल में राजपूतों एवं सिखो की प्रमुखता थी।

सन् 1931 से 1937 में वर्मा भारत से अलग हो गया तथा स्थानीय वर्मा जनसमुदाय के भारतीय प्रवासियों के प्रति बढ़ते हुये अत्याचार और सन् 1939–42 में वर्मा सरकार द्वारा बनाई गई है फिर भी भारतीय मूल के निवासी खुद से हुए व्यवसायों में संलग्न थे। इसलिए व्यापार एवं व्यवसाय में उनका कम योगदान था। सन् 1954 के जेनेबा समझौते के फलस्वरूप इन्हें चीन के राज्यों से फ्रांन्सिसियों के वापस हो जाने के बाद और इन्हें चीन के पहले युद्ध के शुरू हो जाने से भारतीय प्रवासियों की स्थिति बिल्कुल आस्थिर हो गई। इस प्रकार निष्कर्ष हम यह देख पाते है कि– भारत एवं दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के बीच व्यावसायिक एवं सांस्कृतिक गठबंधन यदि पहले से नहीं तो ईसाई में पाया जाता है। भारतीय व्यापारियों के साथ जो ब्राह्मण एवं बौद्धधर्म प्रचारक या वहां गये थे उनका दक्षिण पूर्व एशियाई क्षेत्र के शासक वर्ग ने स्वागत एवं सम्मान किया। इसका कारण था कि अप्रवासी एवं स्थानीय जनसमुदाय, दोनों ही उपनिवेशवाद के अधीन थे और उनको किसी प्रकार की स्वतंत्रता नहीं प्राप्त थी। परन्तु स्वदेशी जन समुदाय में भीतर असंतोष बढ़ रहा था। जैसे ही उपनिवेसवाद समाप्त होना शुरू हुआ। भारतीय अप्रवासियों एवं एकीकरण की चुनौती का सामना विशेषतौर से उन देशों में करना पड़ा जहां उनकी संख्या सामान्य रूप से मजबूत थी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. चक्रवर्ती एन.आर., वर्मा में भारतीय अल्पसंख्यक, प्रकाशन आक्सफोर्ड विशविद्यालय लन्दन, संस्करण 1970, पृ. 72

2. मेक मिलन, दक्षिण–पूर्व एशिया का इतिहास, प्रकाशन आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय, संस्करण 1955, पृ. 140

3. उमाशंकर, वर्मा एवं भारत, राजकमल प्रकाशन जयपुर, संस्करण 1978, पृ. 80

4. आरसारतनाय एस. मलेसिया एवं सिंगापुर में भारतीय प्रकाशन आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय (लन्दन) संस्करण 1970, पृ. 140

5. ह्मून, बट वृक्ष, लन्दन (आक्सफोर्ड), संस्करण 1977, पृ. 84

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

संवेदनाओं के आधार पर बिम्ब का वर्गीकरण

डॉ0 चेतना सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर हिन्दी
फेंकू सिंह पी0जी0 कालेज,
चेवार, आजमगढ़

भूमिका–

बिम्ब कवि के मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाली एवज या रूप है। इस एवज या रूप का निर्माण कवि के ऐन्द्रिय तत्वों के माध्यम से होता है। ''जब कोई पदार्थ हमारी दृष्टि के समक्ष आता है, तो उस पदार्थ के प्रशिक्षित प्रकाश के द्वारा हमारी अक्षितंत्रिकाओं में अनेक प्रकार के संवेदन उत्पन्न हो जाते हैं। ये अक्षितंत्रिकाएं मस्तिष्क से सम्बद्ध है। अतः इनके माध्यम से उक्त संवेदन धाराएं मस्तिष्क में आ जाती है, जहां ये परस्पर सम्बद्ध वर्गीकृत और संश्लिष्ट होकर रूप या आकार धारण कर बोध या प्रत्य विज्ञान का विषय बन जाती है। यही पदार्थ का प्रत्यक्ष ज्ञान है, जो ऐन्द्रिए बिम्ब के रूप में हमारी चेतना में उपस्थित होता है।''

कवि की प्रत्यक्षानुभूति में जिस इन्द्रिय का सर्वाधिक सहयोग या भाग होता है, उसी का प्राचुर्य उसके काव्य में भी दिखायी देता है।

इन्द्रिय बोध के आधार पर निम्न प्रकार के बिम्बों का निर्माण होता है–

चाक्षुष बिम्ब–

सूर में यों तो सभी इन्द्रियों से सम्बन्धित बिम्बों का रूप मिलता है, पर उसमें प्राचूर्य और प्राधान्य रूप बिम्बों का ही कहा जायेगा। ऐसा लगता है कि उनकी प्रत्यक्षानुभूति में नेत्रों का सर्वाधिक सहयोग था। उन चीजों को उनके नेत्र अनुभूत कर चुके थे। वही अनुभूति उनके मस्तिष्क में बिम्ब रूप में जाकर एकत्रित हो गयी थी। शायद इसीलिए नैन समय, ऑख समय पर अलग से पदों की नियोजना की है। उनके चाक्षुष बिम्ब एक प्रकार का चित्र हमारे सामने उपस्थित करते है। ''यह चित्र रूप सौन्दर्य को लेकर शुरू होता है। और भाव सौन्दर्य पर जाकर विश्राम लेता है।''

खीझत जात माखन खात।
असन लोचन, मौह टेढ़ी, बार–बार जमात।
कबहुँ रूनझुन चलत घुटकनि, घूरि, घूसर गात।
कबहुँ झूकि कै अलख खैंचत, नैन जल भरि जात।
कबहुँ भीतर बोल बोलत, कबहुँ बोलत तात।
सूर हरि की निरखि सोभा, निमिष तजत न मात।।

सूर के ये चाक्षुष क्रियात्मकता अथवा लीलात्मकता को लेकर विकसित हुए है। सीधी सरल भाषा में लिखे सूर के ये चाक्षुष बिम्ब कहीं बालसुलभ मुद्रा अंकित करते है, तो कहीं नृत्यमय भांगिमा। कहीं चोरी के प्रसंग मे चित्र खींचा गया है तो कहीं वंशी धारण किये सौन्दर्य की मूर्ति चित्रित की गयी है।

ध्वनि बिम्ब–

ध्वनि संवेदनाओं, संवेदना का सूक्ष्म स्तर है सूर के काल्य में ध्वनि बिम्ब प्रचूर मात्रा में मिलते है–

स्थान कर मुरली अतिहिं विराजति।
परसति अधर सुधारस बरर्सात, मधुर–मधुर सुर बजति।

टाटकत मुकुट मौंह छवि भटकति, नैन सैन अति राजति।
ग्रीवनवाई अटकि बंसी पर कोटि मदन दवि लाजति।।

उपर्युक्त पद में प्रयुक्त मुरली, वंशी शब्द ध्वनि के प्रतीकात्मक शब्द हे। इन प्रतीकात्मक शब्दों पर आश्रित बिम्ब, छान्दसलय तुकान्त और अनुप्रास आदि भी नाद या श्रव्य बिम्बों का निर्माण करते हैं। सूर ने उपर्युक्त पद में बिराजति बाजति, राजति, त्वाजति, शब्द तुकान्त और अन्त्यानुप्रासिक प्रयोग किया है उनमे हम भावों के अनुसार वाणी का उतार–चढ़ाव देखते है, जो ध्वनि, बिम्बों की सृष्टि में सहायक होते है। ध्वनि बिम्बों का स्वतंत्र प्रयोग भी उनमें मिलता है। उन्होंने मुरली की सुबीली, धनु मेघ की बिजली की चमक, वर्षा की फुहार और आभूषणों की झंकार के माध्यम से ध्वनि, बिम्ब प्रस्तुत किये है।

स्वाद्य बिम्ब–

नाद बिम्ब ही नहीं स्पर्श, स्वाद विम्बों को यदि देखा जाय तो वह रूप बिम्बों अथवा चाक्षुष बिम्बों पर ही आश्रित है, उनसे विलग नहीं। उदाहरण के लिए सौन्दर्य का अस्वाद एक प्रकार से स्वाद् का ही अनुभव है जिस प्रकार पेय पदार्थ या खाद्य पदार्थ के ग्रहण करने से आनन्द अथवा रस की प्राप्ति होती है, उसी प्रकार सौन्दर्य का पान करने से भी एक आनन्द की प्राप्ति होती है, जिसे सौन्दर्य का आस्वादन रना कहते है। यह आस्वादन चाहे लौकिक सौन्दर्य का हो अथवा अलौकिक। रूप का आस्वाद ही कहा जायेगा सूर के नेत्र अपने प्रभु के रूप पर मुग्ध होकर उसका आस्वाद किस प्रकार करते हैं–

नैना निपट विकट छवि अटकै।
टेढ़ी कटि, टेढ़ी कर मुरकी, टेढ़ी पाग टार लटकै।
देखि रूप रस सोभा रीझे, फेरे फिरत न छटके।
पारत बचन कमल दल लोचन, लाल के मोदनि अटकै।
मंद–मंद मुसकात साखिनि में रहत नकाहूँ हटकै।
सूरदास प्रभु रूप लुभाने, ये गुन नागर नटकै।।

रूप के आस्वाद्य के अतिरिक्त सूर में जहां स्वतंत्र रूप से स्वाद्य बिम्बों का रूप दिया है, वहां भी सौन्दर्य भावनासंवलित स्वाद्य बिम्बों का निर्माण हुआ है। माखन चोरी प्रसंग में कृष्ण चोरी करने के लिए ग्वालिन के घर जाते है, वहां जाकर वह दही खाने लगते है, गोपी यह जानते हुए भी कि कृष्ण चोरी कर रहे है, वह अपनी सरवी को मौन रहने का संकेत करती है। यहां कृष्ण माखन का अस्वाद ले रहे है और गोपी उनके रूप का अस्वाद कर रही है। प्रस्तुत पद में भी आस्वाद्य परक उपकरणों और विभिन्न क्रिया कौतुकों से जो आनन्दानुभूति होती है, आस्वाद बिम्बों का निर्माण करती है।

स्पर्श बिम्ब–

स्पर्श बिम्ब भी चाक्षुष बिम्ब के साथ ही साथ परिलक्षित होते है। माखर चोरी प्रसंग में कृष्ण माखन चोरी से लेकर माखन खाने तक की सारी क्रिया–कलापों में स्पर्श बिम्ब के साथ चाक्षुष बिम्ब का भी दृश्य उपस्थित होता है इसी प्रकार वंशी धारण में भी स्पर्श बिम्ब दृष्टिगोचर होता है।

स्थान कर मुरली अविहि विराजति।
परसति अधर सुधारस बरसति, मधुर मधुर सुन बजति।।
लटकत मुकुट, भौंह छवि मस्कति, नैन सैन अति रजति।।

इस प्रकार स्पर्श बिम्ब के साथ ही ध्वनि बिम्ब की संगति भी दिखाई पड़ती है।

गन्ध बिम्ब–

मधुर स्वादो और मधुर ध्वनियों के अतिरिक्त मधुर गन्धों का भी बिम्ब सूर में मिल जाता है। तेल और उबटन के बिम्ब इसी तरह गन्धों के बिम्ब है। सूर चूंकि माधूर्य के प्रेमी है, अतः उन्होंने सर्वत्र माधुर्य की ही नियोजना की है।

अनुबिम्ब–

''बिम्ब चूंकि मस्तिष्क की उपज है, मस्तिष्क में मनुष्य को कभी–कभी किसी विशेष उत्तेजना और ज्ञनिन्द्रियों के सन्निकर्ष के समाप्त हो जाने के पश्चात् भी उस उत्तेजना की अनुभूति होती रहती है, जिसे मनोविज्ञान में अनुबिम्ब कहा जाता है।''रूप सौन्दर्य के पदों में गोपियां कृष्ण के रूप का दर्शन करने के पश्चात् भी उनके रूप सौन्दर्य से अभिभूत रहती है। उनसे विलग हो जाने पर ही उनका सौन्दर्य गोपियों की उत्तेजना का कारण बना रहता है। कृष्ण के सौन्दर्य रस का पान कर उनके नेत्र उनके में नहीं है। न वह किसी प्रकार के बन्धन में ही रह सकते है। कृष्ण के सौन्दर्य का जो अनुबिम्ब उनके मस्तिष्क में बन गया है, वह कृष्ण के मथुरा चले जाने पर भी अनुभूति का विषय बना रहता है। गोपियां अपने पूर्णानुभूत सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहती है–

नैननि उहै रूप जौ देखों।
तौ अधौ यह जीवन जग को, सॉच सुफल करि लेखों।
लोचन चपल चारू खंजन, मन रंजन हृदय हमारे।
सुरंग कमल मृग मीन मनोहर, सेत अरून अरू कारे।

बिम्ब गति व ध्वनि का भी हो सकता है। उन्हें कृष्ण की वह चितवन, वह मनोहर चाल और मंद ध्वनि से गाना याद आता है। मुरली की मधुर ध्वनि उन पर जो अपना अनुबिम्ब छोड़ गयी है, उस मधुर ध्वनि को फिर सुनने के लिए गोपियां उत्सुक है। उस मधुर रूप के दर्शन के लिए फिर से लालयित है–

हरि दरसन कौ तलफत नैन।
अरू जौ चाहत भुजा मिलन कौ, श्रवन सुनन कौ बैन।
जिय तलफत है बन बिहरन कौ, तुम मिलि अरू सब साखियॉ।।
जब तै तुम हरि बिछुरे हम हैं, निसिबासर नहि चैन।
सूरदास प्रभु तुम्हारे दरस कौ, काग उड़ावति नैन।।

''मानव मस्तिष्क माल निष्क्रिय सफेद स्लेट ही नहीं है, अपितु वह सक्रिय सचेतन है, जो वाह्य जगत से प्राप्त यथार्थपरक स्मृति बिम्बो को अपनी सृजनात्मक कल्पना शक्ति से नया रूप देता है, जिससे भाव गर्भित मानसिक प्रतिछवि बन कर एक संशिष्ट बिम्ब को उभारता है।

स्मृटि और कल्पना में अन्तर यह है कि '' स्मृति जहां पुर्वानुभव को प्रायः यथावत पुनरूद्बद्ध करती है, वहां कल्पना उसका पुनः सृजन करती है, वहां कल्पना उसका पुनः सृजन करती है अर्थात् कल्पना मन की सृजनात्मक शक्ति है।'' सूर ने उपमेय के सहज सौन्दर्य की प्रतीति कराने के लिए सौन्दर्य के विभिन्न प्रतीकों, अपने आलम्बन कृष्ण के रूप तथा अवयवों पर घटित कर कल्पनात्मक प्रयोग किया है। एक ही उपमान को लेकर उन्होंने भाव के अनुरूप उसका भिन्न–भिन्न रूप में प्रयोग किया है।

उदाहरण–

किलकत कान्ह घुटुरूवनि आवत।
मनिमय कनक मन्द कै ऑगन बिम्ब पकरिबै घावत।।
कबहु निरखि हरि आयु छॉह कौ कर सौ पकरन चाहत।
किलकि हॅसत राजत दै दंतिया पुनि–पुनि हतिहिं अवगाहत।

जब हरि मुरली अधर धरत।
थिर चर–चर थिर पवन थकित रहै जमुना जल न बहत

ध्वनि बिम्ब

जसुदा कह लौ कीजे कानि।
दिन प्रति कैसे सहि परति है दूध दही की हानि।।
अपने या बालक की करनी जौ तुम देखौ आनि।
गोरस खाद् खवावै लरिकानि माजत भाजन भानि।।

स्वाद्य बिम्ब

काहू की गाकरी ढ़रकावै काहू की हंडुरी फरकावै।
काहू की गगरी घर फोरै काहू के चितवत चित चोर।।

स्पर्श बिम्ब

राधा सो माखन हरि मॉगत।
और न की मटकी को रवायौ तुमरौ कैसे लागत।।

ध्वनि बिम्ब

निष्कर्ष–

इस प्रकार काव्य बिम्ब मानस का एक सजीव सुन्दर और सरस चित्र होता है जिसमें, कवि की भावना अनुभूति और कल्पना मूर्त रूप धारण करती है। इस मानस चित्र को इन आंखों से न देखकर मन की आंखों से ही देखा जा सकता है। बिम्ब विधान कवि के व्यक्तित्व संस्कार, अनुभव अध्ययन आदि से अत्यन्त प्रभावित होता है, इसीलिए प्रत्येक कवि का बिम्ब निजी विशेषताओं से युक्त रहता है। बिम्ब के रूप में सामान्य जाति व समूह की अभिव्यक्ति सम्भव नहीं है। इसलिए बिम्ब जिस विशेष रूप आकार निर्मित करता है। वह सामान्य का ही प्रतिनिधि होता है।

काव्य बिम्ब के निर्माण में अलंकार शब्द शक्तियाँ प्रतीक आदि अत्यन्त सहायक होते है यह काव्य में स्वाभाविक रूप से विषय वस्तु को बिना किसी वाहय द्रव्य या अलंकरण के आकर्षक बनाता है तथा अभिधा, लक्षणा, व्यंजना तीनों शक्तियों की सहायता से सौन्दर्य की सृष्टि करता है। इस प्रकार काव्य बिम्ब मानस का एक सजीव, सुन्दर और सरस चित्र होता है। जिसमें कवि की भावना अनुभूति और कल्पना मूर्त रूप धारण करती है इस मानस चित्र को इन आंखों से न देखकर मन की आंखों से ही देखा जा सकता है बिम्ब–विधान कवि के व्यक्तित्व, संस्कार, अनुभव, अध्ययन आदि से अत्यन्त प्रभावित होता है। इसीलिए प्रत्येक कवि का बिम्ब निजी विशेषताओं से युक्त रहता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1. डॉ0 सत्येन्द्र, शिवपाल अग्रवाल1956, सूर की झांकी, ए0क0 लि0 आगरा
2. डॉ0 मुंशीराम शर्मा, आचार्य शुक्ल, 2002, भारतीय साधना और सूर साहित्य– साधना मंदिर, कानपुर
3. आचार्य शुक्ल, 2006. रस मीमांसा– नागरी प्रचारिणी सभा काशी
4. डॉ0 हरवंशलाल शर्मा, 1954 सूर और उनका साहित्य, भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ़
5. डॉ0 मुंशीराम शर्मा,1965, सूरदास का काव्य वैभव, प्रथम कानुपर
6. साहित्य लहरी– टीका, श्री महादेव प्रसाद, पु0मं0 लहेरियासराय, 1996
7. डॉ0 जगदीश नारायण त्रिपाठी, आधुनिक हिन्दी कविता में अलंकार विधान

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

मौर्यकाल एवं उसके बाद सामाजिक गतिशीलता

रमेश कुमार
शोधछात्र–प्राचीन इतिहास
डॉ. राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या
प्रोफेसर उपमा वर्मा
विभागाध्यक्ष : प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग
का.सु. साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या

सारांश

ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में जितने भी शुंग शासक हुए वे विलासी एवं स्त्री प्रेमी थे। जिसके कारण शासक कमजोर माने गये। इसके बाद कण्व और सातवाहन वंश के शासकों ने वैदिक धर्म को आगे बढ़ाया। खुदाई के दौरान पश्चिम एवं दक्षिण भारत में कुछ ऐसी मुद्राएँ मिली हैं, जिसमें सातवाहनों के विषय में कुछ सूचनाएँ मिलती हैं। इस समय सामाजिक स्तरीकरण एवं गतिशीलता दिखलायी देती है। राज्य सम्बन्धी अवधारणा तथा व्यवहार उत्तरी भारत में प्रचलित धारणा से अलग नहीं है। सातवाहन शासकों ने विदेशी शक्तियों से लोहा लिया, जिसमें उन्हें सफलता प्राप्त हुई। भारत पर यूनानी साहित्य का प्रभाव पड़ा। कुषाण वंश भी परिवर्तन का काल माना जाता है।

इस काल में सामाजिक गतिशीलता के चलते लोगों के रहन–सहन तथा पोषाक में परिवर्तन होता रहा। सामाजिक स्तरीकरण को देखते हुए जनता खान–पान में रुचि लेने लगी, लोग पौष्टिक भोजन को अपना लिये। मांसाहारी एवं शाकाहारी दोनों प्रकार का भोजन किया जाने लगा। इस समय की सामाजिक स्थिति में सुधार ने यह प्रमाणित कर दिया कि लोग घरेलू नौकर रखने लगे। समाज में शान्ति व्यवस्था की स्थिति थी और भय का वातावरण समाप्त हो गया था।

मुख्य शब्द– गतिशीलता, सामाजिक स्तरीकरण, सामाजिक कार्य, आत्मसंयम, कीर्तिस्तम्भ, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, भय, वातावरण।

सामाजिक स्तरीकरण एवं गतिशीलता की प्रक्रिया तीसरी शताब्दी ई.पू. में भी जारी रही। मौर्यवंश के संस्थापक चन्द्रगुप्त मौर्य ने जिस सामाजिक व्यवस्था की नींव रखी थी उसे मौर्य वंश के अन्य शासक भी आगे बढ़ाने में कोई कमी नहीं छोड़े। चन्द्रगुप्त मौर्य के बाद बिन्दुसार (299–74 ई. पूर्व) और अशोक (273 ई. पूर्व से 236 ई. पूर्व) की गणना शक्तिशाली सम्राटों में की जाती है। अशोक एक महान शासक था। कलिंग युद्ध (261 ई. पूर्व) की विजय तथा उसके अन्य धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों ने उसको और प्रभावशाली तथा महान बना दिया।[1] अशोक के शिलालेख से मौर्य वंश के शासन की जानकारी हमें मिलती है। अशोक के समय मौर्यवंश का राज्य विस्तार हुआ, जिसका प्रमाण हमें शिलालेखों, कीर्तिस्तम्भों, लेखों तथा अन्य प्रकार के ऐतिहासिक साहित्य से मिलता है।[2] ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि अशोक के उत्तराधिकारी योग्य नहीं निकले, जिसके कारण मौर्य वंश का पतन हो गया। अशोक के उत्तराधिकारी सुयशस, दशरथ, संगत, शालिशूक, शोमशर्मा, शतधन्वन और वृहद्रथ थे।[3] मौर्य वंश के पतन की प्रक्रिया सम्राट अशोक की मृत्यु के बाद प्रारम्भ होकर वृहद्रथ की हत्या के साथ समाप्त हुई।

अधिकांश विद्वानों का कहना है कि रामायण, महाभारत और मनुस्मृति की उसके वर्तमान स्वरूप की रचना 300 ई. पूर्व से 100 ई. पूर्व के मध्य हुई थी। मौर्यकाल में हमें व्यक्ति, परिवार और समाज के बीच मधुर सम्बन्ध देखने को मिलते हैं। यही व्यवस्था मौर्यकाल के बाद शुंग, कण्व तथा सातवाहन एवं बाद में

भी दिखलायी पड़ती है। कौटिल्य का विश्वास था कि जनता का सामाजिक जीवन तभी उच्च हो सकता है जब पारिवारिक सम्बन्ध ठीक हों। अशोक ने भी ऐसा ही कहा है। उसने आत्मसंयम और दूसरों के प्रति सहिष्णुता का उपदेश दिया। वह चाहता था कि मनुष्य का सामाजिक जीवन पवित्र हो, लोग नम्र तथा उदार व्यवहार करें। उसके धर्म का उद्देश्य समाज में नैतिकता लाकर सुव्यवस्था स्थापित करना था। अशोक कलिंग युद्ध के बाद अहिंसा का पुजारी हो गया।[4] बौद्ध धर्म का उस पर प्रभाव पड़ा। अपनी मान्यतानुसार तथा धर्म प्रचार को व्यापक बनाने के लिए हिंसा निषेध सम्बन्धी राजाज्ञा दी। वह परोपकारी कार्य में लग गया। सातवें स्तम्भ लेख में अशोक कहता है– ''मैंने वट वृक्ष लगाये हैं, जो पशुओं तथा मनुष्यों को छाया सुख दें।'' बौद्ध चिन्तन में रत अनेक भिक्षु तथा भिक्षुणियों के लिए उसने अनेक मठों, बिहारों आदि का निर्माण करवाया। विदेशों में भी धर्म प्रचार किया गया। अशोक ने तेरहवें शिलालेख में कहा है–''देवानाम प्रिय'' धर्म विजय को ही प्रमुख विजय मानता है।''[5]

इस काल में वर्ण और जाति व्यवस्था में अन्तर देखा गया। समाज में शूद्रों की स्थिति अच्छी नहीं थी। उसे तीन उच्च वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य की सेवा करने का कार्य सौंपा गया। मनु ने समाज में 57 जातियों का उल्लेख किया है, जिनकी उत्पत्ति अन्तर्जातीय विवाह से हुई है।[6] पूर्व की भाँति इस समय भी सामाजिक जीवन का विशेष महत्व था। गृहस्थ अपने परिवार में कर्तव्यों का पालन करके धर्म, अर्थ और काम को पूरा करते थे। गृहस्थ अपनी पत्नी बाल बच्चों तथा परिवार के अन्य सदस्यों के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करते थे। 184 ई. पूर्व मौर्य वंश का पतन हो गया, जब इस वंश के अन्तिम शासक वृहद्रथ की हत्या करके सेनापति पुष्यमित्र स्वयं सम्राट हो गया। इसने शुंग वंश की स्थापना की। इसके बाद 73 ई. पूर्व से 28 ई. पूर्व तक कण्व वंश का शासन रहा। कण्व वंश के बाद सातवाहन की स्थापना हुई। शुंग, कण्व और सातवाहन इन तीनों वंश के शासक ब्राह्मण थे। जिन्होंने वैदिक या ब्राह्मण धर्म का पुनरुत्थान किया। ये शासक विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत किये।

इस काल में सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन देखने को मिला। वर्ण व्यवस्था जाति में परिवर्तित हो गयी। पहली शताब्दी ई. में सातवाहन नरेश गौतमी पुत्र सातकर्णी ने वर्ण व्यवस्था को बन्द कराया।[7] मौर्य साम्राज्य के पतन के बाद शासन सत्ता शुंग वंश के हाथ में आयी। अन्तिम मौर्य सम्राट वृहद्रथ की हत्या सेनापति पुष्यमित्र शुंग द्वारा 184 ई. पूर्व कर दी गयी और वह स्वयं शासक बन गया। इस प्रकार पुष्यमित्र शुंग ने शुंग वंश की स्थापना की। ऐसा कहा जाता है कि शुंग उज्जैन प्रदेश के थे और उनके पूर्वज मौर्य शासकों एवं उनके परिवार की सेवा करने में लगे थे। इसी कारण उन्हें सेनापति बनने का अवसर मिला। शुंग ब्राह्मण जाति के थे। अतः पुष्यमित्र शुंग को प्राचीन समय में ब्राह्मण राज्य के गठन का श्रेण जाता है।[8] शुंग शासकों की राजधानी पाटलिपुत्र थी। यह राज्य मध्य गंगा की घाटी एवं चम्बल नदी तक फैला हुआ था। इसमें पाटलिपुत्र, अयोध्या, विदिशा मुख्य नगर थे। दिव्यावदान और तारानाथ का कहना है कि इसमें जालंधर और शाकल नगर भी शामिल थे। अग्निमित्र शुंग ने अपने समय में विदिशा को अपने राज्य की राजधानी बना लिया था।[9]

पतंजलि के महाभाष्य से हमें पता चलता है कि पुष्यमित्र को यवन आक्रमण का सामना करना पड़ा और उसने 36 वर्षों तक राज्य किया।[10] पतंजलि पुष्यमित्रक के पुरोहित थे। पुष्यमित्र शुंग की 149 ई. पूर्व मृत्यु होने पर अग्निमित्र सम्राट बना। इसके बाद वसुज्येष्ठ, वसुमित्र, आन्ध्रक, पुलिन्दक, घोष शुंग, वज्रमित्र, भागवत और देवभूति थे। शुंग शासक विलासी प्रवृत्ति के थे। हर्षचरित के अनुसार वसुमित्र नृत्य का आनन्द ले रहा था तो मित्रदेव नामक व्यक्ति ने उसकी हत्या कर दी। इस वंश का अन्तिम राजा देवभूति था, उसका वध उसके मन्त्री द्वारा कर दिया गया।[11] इस प्रकार मौर्य वंश का अन्त अन्तिम शासक वृहद्रथ की

हत्या करके शुंग वंश की स्थापना की गयी थी। उसी प्रकार शुंग वंश का भी पतन हुआ। 73 ई. पूर्व देवभूति की हत्या करके उसका मंत्री वसुदेव शासक बना और कण्व वंश स्थापित हुआ।

पुराण तथा हर्षचरित में इस बात का उल्लेख मिलता है कि आन्तरिक विकेन्द्रीकरण तथा बाह्य आक्रमण की आशंका के क्षणों में पुष्यमित्र शुंग ने अन्तिम मौर्य सम्राट वृहद्रथ की हत्या करके शुंगवंश का प्रादुर्भाव किया। शुंगवंश की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न लोगों की अलग–अलग धारणाएँ हैं। पाणिनि ने शुंगों को भारद्वाज ब्राह्मण का गोत्र बताया है। अनेक सूत्रों से पता चलता है कि शुंग शासक ब्राह्मण थे और धार्मिक क्षेत्र में उनकी पहचान थी।[12] महाकवि कालिदास ने 'मालविकाग्निमित्रम्' में बतलाया है कि पुष्यमित्र का पुत्र अग्निमित्र बैम्बिक कुल का ब्राह्मण था।[13] हरिवंश के अनुसार, ''औदिभज्ज काश्यप ब्राह्मण सेनानी ने कलयुग में अश्वमेघ यज्ञ किया था।[14] इन सभी प्रमाणों के आधार पर यह कहना उचित होगा कि पुष्यमित्र ब्राह्मण था।

पुष्यमित्र जब 184 ई. पूर्व राजसिंहासन पर बैठा तो उसके समक्ष आन्तरिक कलह एवं संघर्ष तथा विदेशी आक्रमण की समस्याएँ थीं।[15] पुष्यमित्र स्वयं ब्राह्मण था और उसे ब्राह्मण धर्म में घोर आस्था थी। उसने अपने धर्म को प्रगति के मार्ग पर ला खड़ा किया। मनु तथा पातंजलि जैसे प्रकाण्ड ब्राह्मण विद्वान् उसके समकालीन थे, साथ ही वे पुष्यमित्र के अति निकट थे। मनु ने वेदों तथा ब्राह्मण धर्म की श्रेष्ठता प्रमाणित की तो पातंजलि ने महाभाष्य की रचना करके देवभाषा संस्कृत को काफी सुगम एवं सरल बनाया।[16]

शुंग शासन में राजकीय सत्ता से वैदिक संस्कृति को पुनः प्रतिष्ठा मिली। वैदिक धर्म एवं सामाजिक धार्मिक ढाँचे का पुनरुत्थान हुआ। ऐसा माना जाता है कि पुष्यमित्र शुंग ने बौद्ध बिहारों का विनाश करवाया और बौद्ध भिक्षुओं की हत्या हुई। इसी कारण बौद्ध रचनाएँ पुष्यमित्र के प्रति उदार नहीं थी। सम्भवतः कुछ बौद्धों ने पुष्यमित्र का विरोध किया जिसके चलते राजनीतिक कारणों से पुष्यमित्र ने उनके साथ कड़ा रूख अपनाया होगा।[17]

शुंगकाल में रहन–सहन एवं भाषा शैली में परिवर्तन देखने को मिलता हैं कई महत्त्वपूर्ण नगरों का विकास इसी काल में हुआ। वैशाली, श्रावस्ती, पाटलिपुत्र, वाराणसी, कौशाम्बी, हस्तिनापुर, इन्द्रप्रस्थ, मथुरा, विदिशा, भोपाल, तक्षशिला और नालन्दा जैसे महत्त्वपूर्ण नगरों का विकास औद्योगिक दृष्टि से हुआ। पुरातात्त्विक खोजों से पता चलता है कि सोनपुर, बस्तर, चिरन्दनगर, मेरठ, मुजफ्फरनगर और गाजीपुर शुंगकाल के समय भी स्थापित थे। पंजाब के जालंधर, रोपड़, लुधियाना तथा हरियाणा के कई नगर उस समय व्यापारिक केन्द्र थे। मध्यप्रदेश का उज्जैन एक प्रतिष्ठित नगर था। यहाँ से सूती कपड़ा विदेशों को भेजा जाता था।[63] विदिशा और पाटलिपुत्र सड़क मार्ग से जुड़े थे जिसके कारण उसका व्यापारिक महत्त्व था।

शुंगकाल में ब्राह्मण धर्म को अपनाया गया था। इस समय भारतीय इतिहास की राजनीतिक एकता पहली बार स्थापित हुई। जिसके कारण हिन्दूकुश से लेकर कर्नाटक तथा बंगाल तक शासन स्थापित हुआ। उत्तरी पश्चिमी मार्गों से अनेक विदेशी आक्रमणकारी आये जिनका सामना मौर्य शासक नहीं कर पाये जिसके कारण पुष्यमित्र शुंग ने मौर्य वंश के अन्तिम शासक वृहद्रथ की हत्या करके स्वयं शासक बना और उसे शुंग वंश की स्थापना की। इसका तात्कालीन प्रभाव सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर पड़ा। बौद्ध ग्रन्थ बताते हैं कि पुष्यमित्र के शासन में होने वाली ब्राह्मण प्रक्रिया ने बौद्ध धर्मावलम्बियों को बहुत सताया और उनके अनेक मठों को धराशायी कर दिया गया, लेकिन इसे अतिशयोक्ति माना जाता है। कई ऐसे साक्ष्य मिले हैं कि इस काल में अनेक बौद्ध मठों का जीर्णोद्धार हुआ है। हाँ यह बात सत्य है कि पुष्यमित्र कट्टर ब्राह्मणवादी था। उसने बौद्ध धर्म को नीचा दिखलाने के लिए दो अश्वमेध यज्ञ किये। शुंगों का शासन

गंगाघाटी और उत्तरी भारत का विस्तृत भू'–भाग उनके अधिकार में था। शुंगों के शासनकाल में उनका अधिकार क्षेत्र घटता–बढ़ता रहा है।

रामायण और महाभारत में कहा गया है कि चरित्र ही धर्म है। शुंग शासकों पर इसका प्रभाव पड़ा। मन का संयम, इन्द्रियों पर नियन्त्रण तथा कर्तव्य पालन चरित्र के लक्षण होते हैं। समाज में व्यवस्था बनाये रखने में यही धर्म महत्त्वपूर्ण होते हैं। भगवान राम के माध्यम से महर्षि बाल्मीकि ने सन्तुलित समाज, व्यवस्थित राष्ट्र, मर्यादित आचार और संयम व्यवहार की आधारशिला पर धर्म को किया। महाभारत में चारों वर्णों के लिए नौ कर्तव्य बतलाये गये हैं– (1) क्रोध से दूर रहना, (3) सत्य बोलना, (3) न्यायप्रियता, (4) अपनी विवाहिता पत्नी से सन्तान की उत्पत्ति, (5) सदाचार, (6) व्यर्थ के झगड़ों से बचना, (7) सरलता, (8) सेवकों का पालन, (9) दान। इन कर्तव्यों के पालन से समाज में व्यवस्था बनी रहेगी। इससे सभी वर्णों में समानता लाने का प्रयास किया गया।

शुंगकाल में विभिन्न प्रकार के शिल्पकारों के लिए अपने–अपने धन्धे थे। जिनमें वे लगकर अपना व्यवसाय चला रहे थे। इस काल में शूद्रों की स्थिति काफी दयनीय थी। इन्हें अनार्य कहा गया। मनु ने अनार्यों को दस्यु तथा म्लेच्छ कहा है। उस समय जाति एवं वर्ण व्यवस्था जन्मजात मानी जाती थी। पहले कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था बनी थी, लेकिन धीरे–धीरे वंशानुगत हो गयी।

200 ई. पूर्व से लेकर प्रथम शताब्दी तक के इतिहास का राजनीतिक दृष्टिकोण विविधतापूर्ण था। लड़खड़ाता हुआ मौर्य साम्राज्य देश की सुरक्षा करने में असफल रहा, जिसके कारण सेनापति पुष्यमित्र ने अन्तिम मौर्य शासक वृहद्रथ की हत्या करके शुंग वंश की स्थापना कर दी। पुष्यमित्र शुंग राजनीति में काफी निपुण थे। इस समय जनता और शासक दोनों में राजनीतिक एकता देखी गयी। देश की जनता मौर्य शासक से सन्तुष्ट नहीं थी क्योंकि वे राज्य की सुरक्षा करने में असफल थे। इसीलिए जनता ने अपनी आत्मा एवं मन से पुष्यमित्र का साथ दिया। अधिकांश विद्वानों के अनुसार रामायण, महाभारत और मनुस्मृति की रचना इसी समय मानी जाती है, जिसका वर्तमान स्वरूप आज दिखलायी देता है। जनता का सामाजिक जीवन तभी श्रेष्ठ हो सकता है जब परिवार में सभी सदस्यों के मध्य सम्बन्ध मधुर हों। शुंग काल में समाज में ऐसे विचारों एवं व्यवहारों का सामन्जस्य था। महाभारत के गीता में कहा गया है कि जब अधर्म की वृद्धि होती है तब समाज का पतन होता है। इसी प्रकार मनुस्मृति में भी बात कही गयी है।

सन्दर्भ सूची–

1. वी.डी. महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ. 194
2. पूर्वोक्त, पृ. 198
3. पूर्वोक्त, पृ. 204
4. ईश्वरी प्रसाद, शैलेन्द्र शर्मा, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 168–69
5. अशोक के बौद्ध होने में तनिक भी सन्देह नहीं है। भब्रु शिलालेख में उसने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि बुद्ध धर्म तथा संघ में उसका विश्वास था। उसने घोषणा की कि महात्मा बुद्ध का विचार ही सत्य है। उसने बौद्ध सिद्धान्तों की व्याख्या करने में अभिरुचि दिखायी, जिसके कारण वे अधिक दिनों तक ठहर सके। –डॉ. राय चौधरी
6. ईश्वरी प्रसाद, शैलेन्द्र शर्मा : भारत का प्राचीन इतिहास, पृ. 171
7. पूर्वोक्त पृ. 169–70
8. बाणभट्ट : हर्षचरित
9. ईश्वरीप्रसाद, प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 866–67

10. पतंजलि : महाभाष्य
11. जर्नल ऑफ बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी–1918, पृ. 263
12. पाणिनि : अष्टाध्यायी, भारद्वाजा शुंगा : कृतः शौशिरयः। स्रोतसूत्र– 12,13,15
13. कालिदास मालविकाग्निमित्रम्
14. हरिवंश
15. ईश्वरी प्रसाद, शैलेन्द्र शर्मा : प्राचीन भारतीय संस्कृति, पृ. 866
16. पतंजलि : महाभाष्य
17. जर्नल ऑफ बिहार एण्ड उड़ीसा रिसर्च सोसायटी (1918), पृ. 263

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

भारत में लोकतन्त्र का विकास, प्रभाव, चुनौतियाँ

डॉ0 अर्चना सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र
महाराज बलवंत सिंह पी0जी0,
गंगापुर, वाराणसी

भारत को दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र कहा गया है। सन् 1952 में वयस्क मताधिकार के आधार पर देश में पहले आम चुनाव हुए थे। 952 से अबतक मतदाताओं की संख्या लगभग 81 करोड़ 45 लाख हो गयी है। हमारे संविधान निर्माताओ ने व्यस्क मताधिकार को निष्ठा के रूप में उस दृढ़ विश्वास से प्रेरित होकर ही स्वीकार किया था कि लोकतान्त्रिक प्रक्रिया के सफलतापूर्वक संचालन के लिए लोगो की इच्छा ही सर्वोपरि होती है। लोकसभा के लिए आयोजित चुनाव एवं राज्य विधान सभाओ के लिए हुए उनरोत्तर चुनावों ने हमारी राजनीतिक–प्रणाली को शक्ति और स्वामित्व प्रदान किया। इन चुनावों के औचित्य उनकी निस्पक्षता और सुव्यवस्था के लिए दुनिया भर के देशों में हमारी सराहना हुई है। प्रत्येक आम चुनाव से इस बात की पुष्टि होती रही है कि संसदीय लोकतंत्र की प्रणीली के प्रति देश की निष्ठा है।

राष्ट्रीय काग्रेस का उद्देश्य स्वतंत्र तथा लोकतान्त्रिक राज्य की स्थापना करना है।'' अन्ततः जब हमारे देश का संविधान बना तो देश की इच्छा को संविधान की प्रस्तावना में स्पष्ट किया गया कि भारत एक ''सम्पूर्ण प्रभत्वसम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य होगा।'' सार्वभौमिक व्यस्क मताधिकार के आधार पर और–एक व्यक्तिएक मत के सिद्धांत के अनुसार भारत में लोकतंत्र की स्थापना करना भारतीय संविधान निर्माताओ का अत्यन्त दूरदर्शी निर्णय था। यह भारतीय जतना के प्रति विश्वास एवं सम्मान का प्रतीक था।'

भारत मे लोकतंत्र के सभी रोगों का निदान विकसित लोकतन्त्र के द्वारा ही सम्भव है। भारत में लोकतंत्र विफल भी नही हुआ है। यह तो एक संस्था है और ऐसी संस्था है जो सबसे कम खराब राजनीतिक व्यवस्था है। देश में संसदीय लोकतंत्र अपनी जड़े जमा रहा है और छोटे–मोटे बवण्डरो का सामना करने की क्षमना उसमे आ गयी है। संसदीय लोकतन्त्र की बुनियादी धारणाओ का बराबर पालन हुआ है। देश का नेतृत्व प्रधानमंत्री के हाथ मे रहा है और मन्त्रिमण्डल लोकसभा के प्रति उत्तरदायी रहा है। समाज के विखण्डित ढाँचे में राजनीतिक संस्थाओं, मूल्यों और विचारो का प्रवेश हुआ है। समाज के विविध वर्गो को राजनीतिक व्यवस्था मे स्थान मिला है, उन्हे इनका लाभ और–स्थान मिला है और उन पर इनकी जिम्मेदारियाँ भी आयी है। अबतक जो गांव राजनीतिक व्यवस्था से दूर थे इसके पास आ रहे है। देश की जनता मे जागरूकता बढ़ रहीं है और राष्ट्रहित की चेतना संसदीय लोकतंत्र के विचार को उजागर कर देती है। डां0 सुभाष कश्यप ने ठीक ही लिखा है कि ''भारतीय मतदाता किसी भी दल को सत्त से वंचित कर सकता है और अपने देश की राजनीतिक संरचना तथा इतिहास के प्रवाह को बदल सकता है। यह तथ्यलोकतन्त्र का सार और आधार है।''

हमारी राजनीतिक व्यवस्था मे अनेक मजबुत तत्व मौजुद है जिनके माध्यम से सामान्य काल और संकटकाल मे राजनीतिक व्यवस्था के अस्तित्व की रक्षा की जा सकती है। भारतीय संसद भारतीय लोकतंत्र का स्पष्ट प्रतीक है और कार्यपालिका की राजनीतिक शक्ति का श्रोत संसद ही हैं राष्ट्रीय महत्व के अनेक

प्रश्नों एवं समस्याओं के निर्धारण में संसद की निर्णायक भूमिका रही है। ऐसे भी अवसर आये है जब संसदीय दबाव ने प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से मन्त्रियों को त्यागपत्र देने के लिए बाध्य किया।

हमारे लोकतंत्र का बुनियादी सिद्धांत धर्मनिरपेक्षता है। भारतीय समाज के सभी अल्पसंख्यकों को बिना किसी धार्मिक भेदभाव के लोकतन्त्रात्मक पद्धति में भाग लेने का अवसर प्रदान किया गया है। इसमें जन्म, जाति, धर्म अथवा लिंग आदि के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता। भारत मे यह महसूस किया गया कि आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना के बिना राजनीतिक लोकतन्त्र व्यर्थ है। अतः आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना के लिए नियोजित आर्थिक विकास का सुत्रपात हआ है। यद्यपि आर्थिक नियोजन के द्वारा देश में आर्थिक और सामाजिक क्रान्ति लाने के प्रयासों की वांछित प्रगति नही हो सकी है तथापि गरीबी और आर्थिक विषमता के तेजी से प्रसार पर अंकुश लगा है। भारत में पंचायती संस्थाओं को सांविधानिक दर्जा प्रदान किया गया है और आर्थिक शक्तियों का विकेन्द्रीकरण किया गया। स्थानीय समस्याओं के समाधान में पंचयतों की भूमिका दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। निश्चित तौर पर पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से लोकतंत्र को गांव–गांव ओर घर–घर तक पहुँचाने का एक सुन्दर अभियान इस देश में चल रहा है।

भारतीय संविधान संसदीय ढ़ाँचे के लोकतन्त्र की स्थापना करता है। सच्चा लोकतंत्र संसदीय लोकतन्त्र ही हो सकता है जिसमें बिना हिंसात्मक क्रान्ति के सरकार को बदला जा सकता है, किन्तु ऐसा लगता है कि विगत कुछ वर्षो से देश में लोकतन्त्र की जड़े हिल रही है। देश के अनेकों स्थानों पर कानून और व्यवस्था की स्थिति काफी बिगड़ी है, हिंसा उपद्रव, लूटमार सामान्य बात हो गयी है। प्राकृतिक आपदा, अतिवृषिटी अकाल और सूखे क कारण हमारे आर्थिक विकास का सम्पूर्ण नियोजन ही छिन–भिन्न हो गया है देश का आम आदमी गरीबी, अभाव बेकारी और महंगाई से त्रस्त है। प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक डॉ योगेश अटल ने कहा है ''स्वतन्त्र भारत का स्वाधीन नागरिक, सामान्य जन आज कठिनाई के जिस दौर से गुजर रहा है, उसमें उसका मानस चिर मुक्ति की ही कामना कर सकता है। विगत कुछ वर्षो से संसदीय लोकतन्त्र का विकल्प खोजा जा रहा हैं यहाँ तक कि सीमित निरंकुशता और 'अध्यक्षीय लोकतन्त्र का विकल्प प्रस्तावित भी किया गया है, किन्तु निरंकुशता का दृष्टिकोण लोकतन्त्र' का कदापि विकल्प नहीं हो सकता,यह जानते हुए कि हमारे देश में शासन प्रणाली के रूप में लोकतन्त्र को कोई विकल्प नहीं है।

हमारी संसदीय व्यवस्था की पहली त्रुटि यह है कि सशक्त प्रतिपक्ष का लम्बे समय तक अभाव रहा हैं एक सशक्त विरोधी दल देश मे स्वस्थ संसदीय लोकतन्त्रीय व्यवस्था की स्थापना के लिए बहुत आवश्यक है। प्रभावशाली विरोधी दल संसदीय व्यवस्था के संचालन की अपरिहार्य संस्थ है। जब बहुमत दल होता है तो एक विरोधी दल भी होना चाहिए और यदि ऐसा नहीं है तो वास्तव में प्रजातन्त्र ही नहीं।

संसदीय लोकतन्त्र में आलोचना करना विरोधी दल का कार्य हुआ करता है, किन्तु आलोचना सृजनात्मक एवं सैद्धान्तिक हानी चाहिए। लोकतन्त्र में परिवर्तन मतों के आधार पर होता है। इसलिए विरोधी दल को चाहिए कि वह जनता को परिवर्तन के लिए शिक्षण दे, किन्तु हमारे देश में विरोधी दलों ने न केवल आर्थिक विकास में ही रूकावट डालते रहें आजकल संसद को ठप्प कर गतिरोध उत्पन्न करने की प्रवृति बढ़ती जा रही है।

सम्प्रदायिकता, प्रादेशिकता और भाषावाद की समस्याएँ पिछले 70 वर्षों से भारतीय लोकतंत्र के लिए सिर दर्द बनी हुयी है। इन समस्याओ ने देश में विघटनकारी तत्वों को बढ़ावा दिया है और अने अवसरो पर हिंसात्मक वातावरण का निर्माण किया। महंगाई और भ्रष्टाचार ने मध्यमवर्ग की शक्तिको जर्जर और उसकी रचनात्मक प्रतिभा को कुण्ठित कर दिया है। एक ओर करोड़ो की सम्पति के मालिक विलास आर वैभव का अशोभनीय प्रदर्शन करने में लगे है तो दूसरी ओर लाखों आदमी भुखमरी के शिकार है।

विगत कुछ वर्षो में देश में हिंसा और जन–आन्दोलन आम बात हो गयी है जनता को शासन व्यवस्था के विरूद्ध विद्रोह करने के लिए तैयार करना राज्यों के आचरण में देखा जाने लगा है फलतः हिंसा, आन्दोलन और समाज में घृणा फैलते से जनता और शासन के बीच तनाव पैदा हो जाते है।

संसद और राज्य विधान मण्डलों की कार्य प्रणाली का गुणात्मक ह्रास हुआ है, वाद–विवाद का स्तर घटा है। डॉ0 लक्ष्मीमल्ल सिंधवी के अनुसार, स्वतंत्रता के पश्चात् विधायकों की गुणवता में ह्रास हो गया है जो चिन्ता का विषय है। दल के जो उम्मीदवार चुने जाते हैं वे योग्यता के आधार पर नहीं चुने जाते अधिकतर अत्यन्त साधारण किस्म के उम्मीदवारों का चुनाव होता है। विधयकों में प्रतिभा और लगन का अभाव पाया जाता है और हमारे सार्वजनिक प्रशासन के गिरते हुए स्तरों का यह प्रधान कारण हो सकता है।

भारतीय संविधान का इरादा था कि संसद और कार्यपालिका की सताएँ भिन्न रहे, लेकिन उसके काम–काज का एक अजीब और अवांछनीय मिलाप हो गया है। सिंद्धान्ततः जब तक संसद की मर्जी हो मंत्रीमण्डल सतारूढ़ रह सकता है, लेकिन व्यवहार में मंत्रीमंडल ने संसद के काम और उसके अधिकार अधिकाधिक मात्रा में हथिया लिए है संसद अब ऐसी जगह रह ही नही गई है जहाँ नीतियों पर विचार हो अथवा गलतियों को लोकतांनत्रिक ढ़ंग से इंगित किया जाए। प्रो0 जे0 डी0 सेठी ने कहा है, संसद की सत्ता की हानि का मूल कारण है वर्तमान पार्टी पद्धति, पार्टी अनुशासन एवं निष्ठा के कारण सरकारे अधिकाधिक आरक्षित होती गयी है। केन्द्र और राज्यों में अलग–अलग दलों की सरकारों का निर्माण होने से तनाव, परस्पर विरोध और विद्रोह का स्वर मुखरित हुआ जिससे प्रान्तीय संकुचित और पृथकतवादी प्रवृतियों को बल मिला है।

भारत में बहुदलीय प्रथा प्रचलित है। राजनीतिक दलों की बहुलता लोकतन्त्र के विकास तथा संसदीय शासन के सुचारू संचालन में एक बड़ी बाधा सिद्ध हो रही है। राजनीतिक दलों में सहयोग एवं सामंजस्य की भावना का अभाव है।दुर्भाग्य वश राजनीतिक दलों में फुट और गुटबन्दी विद्यमान है और अक्सर असन्तुष्ट गुट के लोग अपना अलग दल बनाने के लिए तैयार हो जातें है। जबतक राजनीतिक दलों में ध्रुवीकरण नहीं होता और राजनीतिक गुट दो–तीन प्रमुख गटबन्धनों में संगठित नहीं होते तब तक संसदीय संस्थाएँ जीवित नहीं रह सकतीं और यदि वे जीवित भी रह गयीं तो वे प्रभावहीन बनी रहेगी।

दल–बदल की प्रवृत्ति के कारण हमारा पूरा संसदीय वातावरण ही दूषित हो गया है और मूल्यों की राजनीति के स्थान पर सत्ता लोलुपता की राजनीति का सूत्रपात हुआ है। दल–बदल के कारण राज्यों में संसदीय सरकार का संचालन खतरे मे पड़ा और लोकप्रिय सरकारों के संगठन में बाधा आयी है। यह कहना काफी हद तक सही है कि चुनाव महज औपचारिक बनते जा रहे है। न सिर्फ पैसों के प्रभाव से चुनाव विकृत हो रहे है बल्कि कई स्थानों पर यह देखा जाता है कि आम चुनावों में तो अफसरसाही और अपराधी तत्वों ने जोर–जबर्दस्ती से मतदताओं के स्वतन्त्र रूप से मत देने के अधिकार को भी छीन लिया।

लोकतन्त्र मुलतः एक नैतिक व्यवस्था है। इसमें निर्णय खुले तौर पर किए जाने चाहिए, जनता को शान्तिपूर्ण ढंग से सरकारों को बदलने और नयी सरकार को चुनने का अधिकार होना चाहिए। भारतीय लोकतंत्र का भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि भारत की जनता और नेता कितने महत्वाकांक्षी है? उनकी महत्वाकांक्षा का स्तर क्या है। प्रो0 पुष्पेश पन्त ने ठीक ही लिखा है ''भारतीय लोकतन्त्र की सबसे बड़ी बीमारी महत्वाकांक्षा का अभाव है। न जनता महत्वाकांक्षी है न नेता। नेताओं की महत्वाकांक्षा विधानसभा, संसद तक चुने जाने तक सीमित करने की अभिलाषा है न अपना नाम किसी नीति निर्णय के साथ जोड़ने की ललक। फिर भी इतने बड़े लोकतंत्र ने खामियों के बावजूद विश्व स्तर पर अपना विकास और प्रभाव का रास्ता जिस रूप में प्रशस्त किया हैं निश्चित तौर पर सराहनीय है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची–

1. डॉ0 पुखराज जैन, डॉ0बी0एल0 फडियाः भारतीय शासन एवं राजनीति पृष्ठ 894
2. रजनी कोठारीः भारत में राजनीति, पृष्ठ 9
3. डॉ0 सुभाष काश्यपः दिनमान, 6 सितम्बर,1970 पृष्ठ 6–7
4. डॉ0 पुखराज जैन, डॉ0बी0एल0 फड़ियाः भारतीय शासन एवं राजनीति, पृष्ठ 900
5. श्री प्रकाशः डेमीक्रेसी–ऐ फेस्पोर, करेण्ट इंवेण्टस, जनवरी 1973,पृष्ठ 52
6. रजनी कोठारीः भारत में राजनीति, पृष्ठ 217
7. डॉ0 पुखराज जैन डॉ0बी0एल0 फड़ियाः भारतीय शासन एवं राजनीति पृष्ठ 896
8. डॉ0 लक्ष्मीमल्ल सिंधवीः भारतीय संसद–नयी दृष्टिः लोकतन्त्र समीक्षा,जूलाई–सितम्बर, 1971,पृष्ठ 15
9. वी0के0एन0 मेंननः इण्डिया सिन्स इनडिपेण्डेन्स, 1980, पृष्ठ 40–41

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

भारत में धर्म एवं संस्कृति के प्रति वृद्धों का दृष्टिकोण

डॉ0 देवमणि,
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
आचार्य नरेन्द्रदेव किसान पी0जी0 कालेज
बभनान, गोण्डा, उ0प्र0

सारांश–

वैदिक संस्कृति में वृद्धजनों को परिवार व समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त था। इसी काल में श्रवण कुमार ने अपने वृद्ध माता–पिता को अपने कँधे पर बिठाकर सम्पूर्ण तीर्थ यात्रा करवाई थी। वृद्धावस्था को प्रत्येक प्रकार से सुरक्षित बनाने के लिए अनेक व्यवस्थाएं बनायी गयी। इसमें संयुक्त परिवार सबसे महत्वपूर्ण व्यवस्था थी जिसके माध्यम से परिवार के समस्त आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक तथा धार्मिक अधिकार वृद्धों को सौंपकर सभी सदस्यों को उनके निर्देशों के अनुसार कार्य करना एक सामाजिक प्रतिमान बना दिया गया था। इस व्यवस्था ने भारतीय समाज में वृद्धों को आर्थिक, भावनात्मक सुरक्षा देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। आश्रम तथा पुरूषार्थ व्यवस्था ने व्यक्ति के दायित्व इस तरह निर्धारित किए कि जिससे वृद्धजन मानसिक तनावों से दूर रहकर अपने जीवन के उपयोगी अनुभवों से समाज को लाभान्वित कर सकें। परन्तु बदलते समाज में ह्रास होते प्रतिमानों, परम्परा व बदलाव लाने वाले कारकों के मध्य यह दृष्टिकोण कितने समय तक रहेगा यह कहा नहीं जा सकता।

शब्द कुंजी– वृद्ध जन, धर्म और संस्कृति

आधुनिक समय में सामाजिक मूल्यों का पतन सभी समाजों की गम्भीर समस्याओं में से एक है। इसी के परिणाम स्वरूप ही देखने को मिल रहा है कि वैयक्तिक विघटन, पारिवारिक विघटन तथा सामाजिक विघटन दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। समाज की विभिन्न इकाइयां इससे ग्रसित होती चली जा रही हैं। जिसके परिणाम स्वरूप चारों तरफ समाज में अव्यवस्था एवं विघटन की स्थिति उत्पन्न हो रही है। यह समाज में एकाएक उत्पन्न हुई समस्या नहीं है बल्कि यह बहुत पहले से कुछ विचारकों द्वारा मूल्यों के ह्रास से उत्पन्न होने वाले खतरे का अनुभव किया जा चुका है।

स्पेंग्लर ने भविष्यवाणी की थी कि ''पश्चिमी समाज में यान्त्रिक प्रौद्योगिकी का इतिहास तेज गति से अपने अनिवार्य अन्त की ओर जा रहा है। प्रत्येक संस्कृति के महान स्वरूपों के समान यह स्थिति भी स्वयं ही अपने आपको समाप्त कर देगी किन्तु कब और किस तरह हम नहीं जानते।''[1] **श्री अरविन्द के अनुसार** ''मनुष्य ने एक ऐसी सभ्यता का निर्माण कर लिया है जो उसकी सीमित क्षमता व बुद्धि से कहीं अधिक बड़ी है। इसे उसकी सीमित नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति न तो सही उपयोग में ला सकती है और न ही व्यवस्थित कर सकती है। यह सभ्यता उसके अंहकार एवं वासनाओं का एक खतरनाक साधन है।''[2]

जब समाज में मूल्यों एवं प्रतिमानों का ह्रास होता है तो इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध परिवार से होता है। क्योंकि परिवार ही समाज की मूलभूत इकाई है। कोई भी समाज हो चाहे वह आदिम हो या आधुनिक हो सरल हो, या जटिल हो ग्रामीण या शहरी सभी की मूलभूत इकाई परिवार ही है। अतः जब समाज में मूल्यों का ह्रास होता तो उसका प्रत्यक्ष प्रभाव परिवारों की संरचना व प्रकार्यो में देखा जा सकता है।

वर्तमान समय में पारिवारिक समस्याओं के अन्तर्गत वृद्धजनों से सम्बन्धित समस्याओं के प्रति विभिन्न समाज वैज्ञानिकों की रूचि तेजी से बढ़ती जा रही है। भारतीय समाज में वैदिक सभ्यता के प्रारम्भ से ही

वृद्ध व्यक्ति परिवार की इकाई के केन्द्र बिन्दु रहे हैं तथा संयुक्त परिवार व विस्तृत परिवारों की व्यवस्था में उन्हें सबसे सम्मानीय स्थान प्राप्त रहा है। परिवार के समस्त सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक अधिकार वृद्धों को ही प्राप्त रहे हैं तथा उन्हीं के निर्देशानुसार युवा कार्य करना अपना सौभाग्य मानते थे।

इस प्रकार सामाजिक प्रतिमानों ने वृद्धों को सामाजिक, आर्थिक व भावनात्मक सुरक्षा प्रदान कर रखी थी। साथ ही जातिगत कार्यो को करने के कारण उम्रदराज व्यक्ति ही सबसे अधिक अनुभवी होता था तथा युवा व बच्चे उसी की देखरेख व संरक्षण में अपने कार्यो को करना सीखते थे। शिक्षा भी अनौपचारिक रूप से वृद्धों के द्वारा ही प्रदान की जाती थी। किन्तु औपचारिक शिक्षा का प्रारम्भ करवाना पद्धति का विकास नौकरियों में नित नयी सम्भावनाएं पूँजी व धन का बढ़ता महत्व, नगरीकरण औद्योगीकरण, यातायात संचार के साधनों का विकास, जातिगत कार्यो में परिवहन, व्यक्तिगत आय की प्रणाली, व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति, बढ़ती महंगाई व बच्चों पर बढ़ता खर्च के कारण संयुक्त परिवारों का क्षरण होने लगा तथा वृद्ध जो संयुक्त परिवार की मुख्य धुरी हुआ करते थे उनका अस्तित्व ही संकट के द्वार तक पहुँच गया है।

आज वृद्धों को मृत्यु का भय नहीं बल्कि वृद्धावस्था में जीवन जीने का भय है। क्योंकि इन परिवर्तनों से परम्परागत मूल्यों में भी परिवर्तन होने लगा। वृद्ध सामाजिक मूल्यों को बनाए रखने पर अधिक जोर देते थे क्योंकि इन परम्परागत सामाजिक मूल्यों में हमारे बुजुर्गो की बड़ी गहरी आस्था होती है।

सामाजिक मूल्य व्यक्ति को उसके भूमिका के अनुसार अपने कर्तव्य निर्वाह का निर्देश देते हैं।

जानसन ने कहा है कि ''सामाजिक मूल्य एक सांस्कृतिक मानदण्ड है जिसके द्वार विभिन्न दशाओं के बीच तुलना की जाती है, उन्हें स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है अथवा एक दूसरे की तुलना में उन्हें कम या अधिक उपयोगी माना जाता है।''[3]

राधाकमल मुखर्जी ने मूल्यों पर बहुत ही विस्तृत रूप से लिखा है उनके अनुसार– ''मूल्य सामाजिक रूप से मान्यता प्राप्त समूह की वे इच्छाएं व लक्ष्य हैं जिनका सामाजिक सीख की प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति के जीवन में आन्तरीकरण हो जाता है और इस प्रकार व्यक्ति इन्हीं को अपने व्यवहारों की प्राथमिकताएं, मानदण्ड एवं आकाक्षांए मान लेता है अर्थात सामाजिक मूल्यों का कोई स्थूल स्वरूप नहीं होता इनका सम्बन्ध समाज द्वारा स्वीकृत इन लक्ष्यों से है जिनके अनुसार व्यक्ति से व्यवहार करने की आशा की जाती है।''[4]

इस तरह सामाजिक मूल्यों के माध्यम से व्यक्ति समाज के अनुरूप अपने कार्यो को करता व भूमिकाएं निभाता है ये मूल्य समाज में सामन्जस्य व एकरूपता का भी कार्य करते हैं। समाज के विभिन्न क्षेत्रों में तथा व्यक्ति के विभिन्न कर्तव्यों में सामाजिक मूल्यों की झलक दिखायी देती है। हमारे सामाजिक मूल्यों में बुजुर्गों व बड़ों का सम्मान करना उनकी देखभाल करना तथा दूसरों के प्रति अपने कर्तव्य के पालन की आशा की जाती है। हमारे धार्मिक ग्रन्थों जैसे– रामायण, नीतिवाक्यों, पौराणिक गाथाओं, साहित्य इत्यादि के माध्यम से पारिवारिक व सामाजिक मूल्यों के बारे में अवगत कराया जाता है जो व्यक्ति के सामाजिक संरचना के अन्तर्गत सही व गलत की जानकारी देते हैं। इन सामाजिक व पारिवारिक मूल्यों के माध्यम से हमारे परम्परागत पारिवारिक व्यवस्था सुदृढ़ रही तथा कमजोर व असहायों के लिए सामाजिक सुरक्षा का कार्य भी करती रही।

आधुनिक भारत में औद्योगीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण, धर्म के महत्व में कमी, तीव्र सामाजिक गतिशीलता तथा व्यक्तिवादी व भौतिकवादी मूल्यों के प्रसार से संयुक्त परिवार विघटित होते जा रहे हैं। संयुक्त परिवारों के विघटन से परिवारों पर आश्रित वृद्धों का जीवन संकटग्रस्त होता जा रहा है। संयुक्त परिवारों के विघटन से परिवारों पर आश्रित व्यक्तियों का जीवन समस्या ग्रस्त होता जा रहा है। समाज का

वृद्ध वर्ग जो एक ओर समाज की पुरातन व्यवस्थाओं एवं परम्पराओं का पोषण करता है एवं दूसरी ओर अपने जीवन में अर्जित व्यापक आनुभविक ज्ञान से नवीन पीढ़ी का मार्गदर्शन करते हुए उन्हें प्रगति की दिशा में अग्रसारित करता है।

इस प्रकार वृद्ध व्यक्ति समाज के अतीत व भविष्य के बीच एक मजबूत सेतु के रूप में कार्य करता है। अनेक विचारकों का मानना है कि परिवार की संरचना व प्रकार्यो में व्यापक परिवर्तन हुआ है। परम्परागत भारतीय समाज में बड़े बुर्जग परिवार की किसी महिला के घर से बाहर कार्य को उचित नहीं मानते थे। किन्तु आधुनिक समय में महिलाएं अपनी नयी भूमिका में घर से बाहर कार्यो को सम्भाल रही हैं और उन्हें समाज में अनेक नई–नई जिम्मेदारियां दी जा रही हैं जिसे हमारे इन बुजुर्गों का समर्थन भी प्राप्त हो रहा है और इन बुजुर्गों में सामन्जस्यवादी दृष्टिकोण का विकास भी हो रहा है। विभिन्न पारिवारिक व सामाजिक मूल्य जैसे वृद्धों का सम्मान करना, उनको अपना पथ प्रदर्शक समझना, दीन असहायों की सेवा करना, आज के समय में प्रतिमान बदलते जा रहे हैं। वे मूल्य जो व्यक्ति को कार्य व व्यवहार करने के संकेत देते हैं। वह आज उसके स्वार्थो की पूर्ति व व्यक्तिवादिता की अन्धीदौड़ की आंधी में धूमिल हो चुके हैं। जिसके कारण परिवार अनेक प्रकार के सामाजिक व पारिवारिक कलहों से गुजर रहा है। परिवार का पुरातन संयुक्त स्वरूप लुप्त हो रहा है। संयुक्त परिवारों के टूटने से बनने वाले केन्द्रीय परिवार भी अपनी सही दिशा निर्धारित नहीं कर पा रहे हैं। औद्योगीकरण व नगरीकरण के परिणाम स्वरूप व्यक्तिवादी प्रणाली की शुरूआत हुई है। इससे परिवारों का परम्परागत स्वरूप ढहता जा रहा है।

आज परिवार का संयुक्त ढाँचा चरमरा रहा है। यहाँ की स्वदेशी ग्रामीण संस्कृति को संरक्षित रखने वाली कृषि एवं इससे जुड़े तीन चार पीढ़ियों के परिवार के संयुक्त ढाँचे को सहपाने की क्षमता अब कमजोर पड़ने लगी है। विभाजन की संस्कृति के तहत अब पारिवारिक रिश्ते एक–एक इंच जमीन के लिए लोग खून–खराबा कर रहे हैं। यह मुद्दा इसलिए और भी गम्भीर हो जाता है क्योंकि लोग छोटे–छोटे स्वार्थो को लेकर रक्त सम्बन्ध एवं पारिवारिक भावनाओं की बलि चढ़ाने को तैयार रहते हैं। हमारे वृद्ध परिवार में हो रहे इस प्रकार के परिवर्तन से आहत हैं। वृद्धों की एक बड़ी समस्या एकाकीपन भी है, बदली हुई सामाजिक व्यवस्था और घरों के सिकुड़ने से परिवार छोटे हुए तथा औपचारिक व तकनीकी शिक्षा से परिवारों में बुजुर्गों की भूमिका भी कम हुई है।

नई पीढ़ी को अनौपचारिक व सामाजिक रूप से शिक्षित करना घर के बुजुर्गों की ही जिम्मेदारी होती थी किन्तु अब बच्चे स्कूली शिक्षा व हॉबी क्लासेस के बाद मोबाइल, टी0वी0 व इन्टरनेट पर ही उलझे रहते हैं उनके पास घर के बुजुर्गों से बात करने का समय ही नहीं रहता शहरों में तो आर्थिक आत्मनिर्भरता की विचारधारा के चलते परिवार को चलाने में पति पत्नी दोनों कामकाजी हो गये जिससे उनके पास अपने माता–पिता से बात करने का समय ही नहीं बचता उनकी देखभाल करना तो दूर की बात है। इस प्रकार के कृत्यों से हमारे बुजुर्ग बहुत आहत हैं। उनकी अपेक्षा रहती है कि परिवार में एकता एवं आपसी संवाद निरन्तर चलता रहे। परिवार के नवयुवक एवं नवयुवतियां उनसे कुशलक्षेम पूंछे तथा उनके पास बैठकर थोड़ा वक्त व्यतीत करें। परिवार के छोटे बच्चे उनके पास बैंठे ताकि वे उनको नैतिकता एवं संस्कार छोटे बड़ों का आदर करने की उचित सीख दे सकें।

परम्परागत एवं सामुदायिक भावना के ह्रास के कारण आज परिवार का प्रत्येक सदस्य कहीं अपनी शिक्षा, नौकरी, मशीन आदि के बीच संघर्ष कर रहे हैं जिसके चलते उनके व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामुदायिक सम्बन्धों के बीच एक दरार सी आ गयी है। बाजार की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि आज का युवा अपने परिवार और अतीत के परिवेश का मोह छोड़ दे तभी औद्योगिक परिक्षेत्र में उत्पादन की श्रेष्ठता सिद्ध हो पायेगी यही कारण है कि परिवारों का संयुक्त ढांचा विघटित हो रहा है।

परिवार के इस विघटित ढाँचे में युवाओं की शक्ति बढ़ रही है और बुजुर्गों की ताकत लगातार कमजोर पड़ती जा रही है। माँ–बाप से खून का रिश्ता अब अपनी प्रगाढ़ता एवं महत्व खोता जा रहा है। देश में वृद्धाआश्रम की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ रही है बढ़ते हुए वृद्धाआश्रम किसी भी प्रकार से देश की प्रगति के प्रतीक नहीं हो सकते। यह परिवार रूपी सामाजिक संस्था की प्रकार्यात्मक उपयोगिता पर एक बड़ा प्रश्न चिन्ह है तथा गिरते हुए पारिवारिक मूल्यों का मूर्त रूप प्रकट करते हैं।

मनुष्य का अपने स्वास्थ्य के प्रति सजग होना बढ़ती स्वास्थ्य सुविधाओं तथा चिकित्सा क्षेत्र में प्रगति होने से मानवीय जीवन की प्रत्याशा में वृद्धि हो रही है जो कि विकास का एक सूचक है। जब इसके दूसरे पहलू पर दृष्टिपात किया जाता है तो हम पाते हैं कि बुजुर्गों की आबादी में तो इजाफा हो रहा है किन्तु उम्र के ढलते पड़ाव में उनकी देखभाल करने वाली युवा शक्ति उनके प्रति संवेदनशील नहीं रहीं जो कि गिरते पारिवारिक मूल्यों को दर्शाती है। अतः इसके लिए आवश्यक है कि संयुक्तता, घर के बड़े बुजुर्गों का सम्मान, निर्बल एवं असहाय लोगों की देखभाल की सामाजिक जिम्मेदारी के मूल्यों को गिरने से बचाया जाए। तथा उन्हें पुनः पोषित किया जाए। इसके लिए आवश्यक हो जाता है कि आज के युवा अपने घर के बुजुर्गो की देखभाल व सम्मान करके अगली पीढ़ी के समाजीकरण में सकारात्मक योगदान दें ताकि आने वाले समय में बुजुर्गो को एक सम्मानीय जीवन प्राप्त हो सके एवं युवा उनके संचित एवं सारगर्भित अनुभवों का समुचित लाभ उठा सकें।

बुजुर्गों का अपनी सन्तानों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण भी उनकी समस्याओं का कारण बनता है वे अपनी संतान को अपने एहसानों के लिए कर्जदार मानते हैं। उनकी विचारधारा के अनुसार उन्हें अपनी संतानों को बचपन से लेकर युवावस्था तक लालन–पालन करने में अनेक प्रकार के कष्टों से गुजरना पड़ा है जिसके लिए उन्हें अपने खर्च काटकर उनकी सुविधाओं का ध्यान रखा। उनकी आवश्यकताओं के लिए अपनी क्षमता से अधिक प्रयास किए ताकि भविष्य में ये बच्चे हमारे बुढापे का सहारा बने। जब आज वे बच्चे स्वयं कमाने लगें तो उन्हें सिर्फ हमारे लिए ही सोचना चाहिए, हमारी सेवा करनी चाहिए।

कभी–कभी तो कुछ बुजुर्ग अपनी संतानों को गुलाम की भांति देखने लगते हैं बुजुर्ग लोग दुनिया में आ रहे बदलाव को अनदेखा कर युवा पीढ़ी के परम्परा विरोधी व्यवहार से क्षुब्ध रहते हैं। उसके लिए सिर्फ और सिर्फ अपनी संतान को ही दोषी मानते हैं। वे उनकी तर्क पूर्ण बातों को बुजुर्ग का अपमान मानते हैं वे युवा पीढ़ी की बदली जीवन शैली से व्यथित होते हैं। नई जीवन शैली की आलोचना करते हैं क्योंकि आज की युवा पीढी अपने बुजुर्गो का सम्मान करना चाहती है या करती है किन्तु चापलूसी के विरूद्ध है। परन्तु बुजुर्ग उनके बदल रहे व्यवहार को अपने निरादर के रूप में देखते हैं बुजुर्गो के अनुसार उनकी संतान को परम्परागत तरीके से अपने माता–पिता की सेवा करनी चाहिए। नित्य उनके पैर दबाने चाहिए, उनकी तबीयत बिगड़ने पर हमारी मिजाजपुर्सी को प्राथमिकता पर रखा जाना चाहिए। उन्हें सब काम धन्धे छोड़कर उनकी सेवा में लग जाना चाहिए और यही उनके जीवन का अन्तिम लक्ष्य होना चाहिए यही संतान का परम कर्तव्य होता है। उनके अनुसार संतान की व्यक्तिगत जिन्दगी, उसकी अपनी खुशियाँ, उसका अपना रोजगार, उसका अपना विचार कोई मायने नहीं रखता और जब संतान उनकी अपेक्षाओं पर खरी नहीं उतरती तो उन्हें एहसान फरामोश की संज्ञा दी जाती है। बुजुर्गो के अनुसार आज की नई पीढ़ी अधिक स्वछन्द और अनुशासनहीन हो गयी है और पहनावे के नाम पर अर्धनग्न कपड़े पहनते हैं उनके परिधान अश्लील हो गये हैं। देर से उठना, देर से सोना, जंक फूड खाना इत्यादि सब कुछ अप्राकृतिक हो गया है। ऐसी सभी जीवन शैली के बदलावों से पुरानी पीढ़ी खफा रहती है, आक्रोशित रहती है और जब वे उन्हें बदल पाने में असमर्थ रहते हैं तो कुंठा के शिकार हो जाते हैं। परिवर्तन प्रकृति का नियम है इस पर किसी का जोर नहीं चलता है। प्रत्येक बदलाव से जहाँ कुछ सुविधाएं जन्म लेती है तो कुछ बुराइयां भी पैदा होती

हैं और होने वाले परिवर्तनों को कोई रोक नहीं सकता। अतः नये बदलावों को स्वीकार करके ही नई पीढ़ी से सामंजस्य बनाया जा सकता है और यही स्वीकृति ही बुजुर्गो के हित में है।

धर्म एवं आध्यात्मिकता समान हैं लेकिन एक समान अवधारणाएं नहीं हैं, धर्म को अक्सर अधिक संस्थागत रूप में देखा जाता है। धर्म को अधिक संरचित और अधिक पारम्परिक अनुष्ठानों और प्रथाओं को शामिल करने के रूप में देखा जाता है। आध्यात्मिकता अर्मूत एवं सारहीनता को संदर्भित करती है और इसीलिए इसे अधिक सामान्य शब्द माना जा सकता है जो किसी विशेष समूह या संगठन से जुड़ा नहीं है। यह आत्मा से सम्बन्धित भावनाओं, विचारों, अनुभवों एवं व्यवहारों या पवित्रता की खोज को प्रदर्शित कर सकता है।

परम्परागत धर्म में जवाबदेही एवं जिम्मेदारी भी शामिल होती है। आध्यात्म की आवश्यकताएं बहुत कम होती हैं। लोग पारम्परिक धर्म को तो अस्वीकार कर सकते हैं लेकिन खुद को आध्यात्मिक होने का दावा करते हैं। भारत में लगभग 95 प्रतिशत से अधिक वृद्धलोग खुद को धार्मिक या आध्यात्मिक मानते हैं। लगभग 2–5 प्रतिशत लोग नास्तिक हैं। जो धार्मिक या आध्यात्मिक प्रथाओं या परम्पराओं पर निर्भर नहीं हैं।

किसी भी अन्य आयु वर्ग की तुलना में वृद्ध लोगों में धार्मिक भागीदारी का स्तर अधिक है। प्रत्येक सप्ताह में आधे साप्ताहिक या अधिक बार धार्मिक क्रिया–कलापों या धार्मिक सेवाओं में भाग लेते हैं।

वृद्ध लोगों के लिए धार्मिक समुदाय परिवार के बाहर सामाजिक समर्थन का सबसे बड़ा स्रोत है और धार्मिक संगठनों में शामिल होना स्वैच्छिक सामाजिक गतिविधि का सबसे प्रचलित प्रकार है। संयुक्त स्वैच्छिक सामाजिक गतिविधियों के अन्य सभी रूपों की तुलना में अधिक सामान्य हैं।

सन्दर्भ सूची–

1. Spengler, Oswald (2015)"Man and technics : A contribution to a philosophy of life" Arktos media Ltd. U.K. p. 90.
2. Aurobindo,(1939)"The life divine Sri Aurobindo Ashram Pub. Dept. Pondicherry p. 633.
3. Johnson H.M., (1983)"Sociology" Allied publishing New Delhi p. 49.
4. Mukerjee Radha Kamal,(1949)"The Social Structure of values" Macmillan and Company London p.23.
5. www.google.co.in (Till date)
6. www.sodhganga.com (Till date)
7. www.wikipedia.com (Till date)

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

भारत– बांग्लादेश के बीच सहयोग एंव संबंध

आनन्द प्रकाश
शोधार्थी, राजनीत विज्ञान विभाग,
बी.एन.के.बी.पी.जी.कॉलेज,अकबरपुर,अंबेडकर नगर,
प्रोफेसर (डॉ.) शुचिता पाण्डेय
प्राचार्या
बी.एन.के.बी. पी.जी. कॉलेज,अकबरपुर,अंबेडकर नगर,

सारांश

भारत और बांग्लादेश के बीच संघर्ष और सहयोग दोनों के संबंध उतार–चढ़ाव भरे रहे हैं, भले ही भारत ने बांग्लादेश की मुक्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हो। असंख्य हितों के लिए दोनों राज्यों का परस्पर महत्व है। सबसे बड़े लोकतंत्र और क्षेत्रीय महाशक्ति के रूप में, भारत, भारत–बांग्लादेश संबंधों को मजबूत करने में बहुत अधिक योगदान दे सकता है। भारत के पास दोनों देशों के बीच सद्भावना और मित्रता का वातावरण बनाने की अपार क्षमता है। एक राष्ट्र राज्य के रूप में बांग्लादेश का उदय पूरे उपमहाद्वीप के लिए बहुत महत्व है। प्रत्येक देश के लिए दूसरे देश के साथ अंतर्राष्ट्रीय मित्रता विकसित करना आवश्यक है। बांग्लादेश के साथ भारत के संबंधों में सभ्यतागत, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक आयाम शामिल हैं। ये दोनों देश एक साझी विरासत और दुखद इतिहास साझा करते हैं। सांस्कृतिक डोर जो उन्हें एक–दूसरे से बांधती है, उतनी ही मजबूत है, जितना कि संगीत, साहित्य और कला के प्रति उनके लोगों का जुनून। ये ऐतिहासिक संबंध, बदले में, बहु–आयामी और कभी–विस्तार वाले द्विपक्षीय संबंधों में बदल जाते हैं। उनके भौगोलिक स्थान एक दूसरे के पूरक हैं और दोनों देशों के लिए अपनी कनेक्टिविटी को मजबूत करने का अवसर प्रदान करते हैं।

मुख्य शब्द- भारत, बांग्लादेश, प्रधानमंत्री, पड़ोसियों,बड़े लोकतंत्र, मजबूत, भौगोलिक स्थान, विदेश नीति, संस्कृति, इतिहास, सम्बन्धों

भूमिका

बांग्लादेश और भारत इतिहास, धर्म, संस्कृति, भाषा और रिश्तेदारी के समृद्ध मैट्रिक्स में स्थापित कूटनीति के ऐतिहासिक मोड़ पर हैं। भारत–बांग्लादेश सम्बन्धों का सामरिक विश्लेषण भारतीय सुरक्षा की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है। सन् 1971 में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में जो दूरगामी परिवर्तन हुए, उसी के फलस्वरूप बांग्लादेश का उदय हुआ था। बांग्लादेश के उदय ने विश्व राजनीति के समीकरणों को परिवर्तित कर दिया। बांग्लादेश के निर्माण तथा अब तक के विकास में भारत ने सराहनीय भूमिका अदा की है। प्रारम्भ से ही भारत के समान बांग्लादेश ने भी असंलग्नता की नीति को अपनाया। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बांग्लादेश संयुक्त राष्ट्र संघ, राष्ट्रमण्डल, गुट निरपेक्ष आन्दोलन, सार्क और कोलम्बों योजना की सदस्यता ग्रहण कर चुका है, जिसमें भारत का बहुत बड़ा योगदान रहा है। पिछले दिनों भारत– बांग्लादेश सीमा पर जो अप्रत्याशित घटनाएं हुई, उससे दोनों देशों के रिश्तों में निश्चित रूप से कड़वाहट पैदा हुई है।

भारत–बांग्लादेश सम्बन्धों का सामरिक विश्लेषण भारतीय सुरक्षा की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है। सन् 1971 में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में जो दूरगामी परिवर्तन हुए,उसी के फलस्वरूप बांग्लादेश

का उदय हुआ था। बांग्लादेश के उदय ने विश्व –राजनीति के समीकरणों को परिवर्तित कर दिया। बांग्लादेश के निर्माण तथा अब तक के विकास में भारत ने सराहनीय भूमिका अदा की है। प्रारम्भ से ही भारत के समान बांग्लादेश ने भी असंलग्नता की नीति को अपनाया। बांग्लादेश की विदेश नीति का मुख्य लक्ष्य अस्तित्व की रक्षा था। अपने अभ्युदय काल में वह विश्व के सबसे अधिक दरिद्र राष्ट्रों की पंक्ति में था। भारत, चीन, अमेरिका और रूस आदि सभी से आर्थिक सहायता प्राप्त करना उसकी विदेश नीति का प्रमुख सिद्वान्त बन गया। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बांग्लादेश संयुक्त राष्ट्र संघ,राष्ट्रमण्डल, गुट–निरपेक्ष आन्दोलन, सार्क और कोलम्बों योजना की सदस्यता ग्रहण कर चुका है, जिसमें भारत का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

भारत–बांग्लादेश राजनीतिक संबंध

हाल के दिनों में भारत–बांग्लादेश संबंध कई कारणों से उतार–चढ़ाव भरा रहा है, जैसे बांग्लादेश में राजनीतिक व्यवस्था में कई बदलाव, भारत द्वारा बांग्लादेश की कथित उपेक्षा, अपने पश्चिमी और उत्तरी पड़ोसियों के साथ भारत का बढ़ता व्यवसाय, राजनीतिक और लोकप्रिय में भारत के साथ संबंधों पर बांग्लादेश के भीतर, भारत के आंशिक रूप से नकारात्मक धारणा और पानी के बंटवारे, अवैध प्रवास आदि जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर दोनों पड़ोसियों की नाखुशी। हाल के दिनों में इन सभी घटनाओं ने भारत और बांग्लादेश के बीच द्विपक्षीय संबंधों को काफी हद तक खराब कर दिया है। 2009 के बाद से बांग्लादेश में बदलते राजनीतिक परिदृश्य, प्रधान मंत्री शेख हसीना के विजन 2021 में पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ बांग्लादेश के स्वर्ण जयंती वर्ष को चिह्नित करते हुए; भारत और बांग्लादेश में नीति बनाने वाले हलकों के भीतर यह अहसास कि विवादास्पद द्विपक्षीय मुद्दों को उचित महत्व दिया जाना चाहिए, ने खंडित दो–राष्ट्र संबंधों को कुछ अर्थ दिया है और संबंधों को वापस पटरी पर ला दिया है। जल संसाधन, बिजली, परिवहन और कनेक्टिविटी, पर्यटन और शिक्षा में सहयोग के सामान्य क्षेत्रों में दोनों देशों के बीच विकास के लिए सहयोग की एक पर्याप्त रूपरेखा तैयार करने की आवश्यकता महसूस की गई है, भविष्य के लिए उनकी पारस्परिक रूप से साझा दृष्टि है। भारत और बांग्लादेश के बीच भावनात्मक और सांस्कृतिक लगाव और संबंध वास्तव में द्विपक्षीय संबंधों को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण हैं, जैसा कि हाल ही में रवींद्रनाथ टैगोर की 150 वीं जयंती के संयुक्त समारोह में देखा गया था। साथ ही एक करीबी पड़ोसी के साथ संबंध बनाना एक कठिन अभ्यास है और जब पड़ोसी क्षेत्र और अर्थव्यवस्था के मामले में छोटे आकार का होता है तो यह कठिन हो जाता है। छोटे साथी में स्पष्ट चिंताएँ होती हैं। बांग्लादेश और भारत के बीच अतीत का अतिरिक्त और अपरिहार्य बोझ है। ऐसी पुरानी एकता दोनों पड़ोसियों के बीच सांस्कृतिक बंधन के विकास में सहायक रही है; हालाँकि, इसने दोनों देशों के बीच उनके अलग–अलग असमान भौतिक आकार और दोनों के भू–राजनीतिक प्रभाव की अवधि के कारण राजनयिक संबंधों को भी तनावपूर्ण बना दिया है।

बांग्लादेश और भारत के बीच गहरे ऐतिहासिक बंधन सदियों के साझा इतिहास, धर्म और संस्कृति से विकसित हुए, जो 1971 में पाकिस्तान के खिलाफ बांग्लादेशी मुक्ति संग्राम के दौरान बाद की सहायता से बहुत पहले साकार हुए। 1971 में बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम में भारत की भूमिका के बावजूद, संबंध दोनों देशों के बीच उतार–चढ़ाव के दौर देखे हैं। इन उतार–चढ़ावों को समझने के लिए हमें बांग्लादेश में दो राजनीतिक दलों की विदेश नीति के दृष्टिकोण का विश्लेषण करने की आवश्यकता है जो लगातार सत्ता में आती हैं, यानी अवामी लीग और बांग्लादेश नेशनल पार्टी (बीएनपी)। चार धर्मनिरपेक्ष अवामी लीग (एएल) सरकारें (1971–75, 1996–2001, 2009–2014, 2014) ऐतिहासिक रूप से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के साथ एक वैचारिक समानता रखती थी और परिणामस्वरूप, आमतौर पर

बांग्लादेश के संबंध में अधिक सकारात्मक नीति का प्रस्ताव होता था । जबकि बीएनपी और सैन्य शासन की अधिक राष्ट्रवादी सरकारों ने ढाका और नई दिल्ली के बीच दूरी बनाने की मांग की है। कई बार इसका मतलब यह हुआ कि बांग्लादेश ने बांग्लादेश की सीमा पर भारत को अस्थिर करने के लिए असिमित तरीकों का इस्तेमाल किया, जबकि चीन और पाकिस्तान के साथ सैन्य और आर्थिक संबंधों को गहरा किया। लेकिन भारत की ओर से यह एक तथ्य है कि पाकिस्तान और चीन उन्मुख विदेश नीतियों के प्रति अपने जुनून के कारण भारत ने अपने इस करीबी पड़ोसी की उपेक्षा की है।

बांग्लादेश और भारत इतिहास, धर्म, संस्कृति, भाषा और रिश्तेदारी के समृद्ध मैट्रिक्स में अंतर्निहित कूटनीति के ऐतिहासिक मोड़ पर हैं। रिश्ते की हालिया गतिशीलता बहुत सकारात्मक है। वर्तमान में, भारत और बांग्लादेश के बीच द्विपक्षीय व्यापार की मात्रा लगभग 6.6 बिलियन डॉलर है। अनुमान है कि व्यापार क्षमता वर्तमान स्तर से कम से कम चार गुना है। दोनों देश श्ब्लू इकोनॉमी कार्यक्रम के तहत संयुक्त निवेश और सहयोग के माध्यम से आर्थिक सहयोग को मजबूत करने पर विचार कर रहे हैं। कार्यक्रम में हाइड्रोकार्बन की खोज, समुद्री संसाधनों, गहरे समुद्र में मछली पकड़ने, समुद्री पारिस्थितिकी के संरक्षण और आपदा प्रबंधन में तटीय राज्यों के समन्वित प्रयास शामिल हैं। दोनों देश खुद को कई समानताओं के इर्द–गिर्द एकजुट होते हुए भी देखते हैं, न केवल आतंकवाद के संकट से जूझ रहे पड़ोसी के रूप में, बल्कि अग्रणी आर्थिक साझेदार के रूप में भी। भारत और बांग्लादेश दोनों ने आतंकवाद से निपटने के लिए एक साझा रुख अपनाया है, दोनों ने आतंक पर नकेल कसने के साथ–साथ आतंकवाद के प्रायोजक माने जाने वाले देशों की निंदा भी की है।

भारत को बांग्लादेश में सड़क क्षमता में सुधार जैसी बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के विकास के लिए बांग्लादेश को अपना समर्थन देने की जरूरत है। इसके अलावा कुछ सीमा शुल्क चौकियों को उन्नत करने में सहयोग के साथ–साथ 4,096 किलोमीटर की सीमा पर विक्रेताओं के लिए सीमा बाजार स्थापित करने से दोनों देशों को फायदा हो सकता है। क्षेत्र की अर्थव्यवस्थाओं को सड़क, रेल और शिपिंग मार्गों के साथ एकीकृत करने के प्रतिबद्ध प्रयासों से भरपूर लाभ मिल सकता है। ढाका द्वारा हाल ही में बीजिंग से दो पनडुब्बियों की खरीद ने भारतीय नीतियो में एक कड़वाहट पैदा कर दिया है। बांग्लादेश के साथ भारत के संबंधों में सभ्यतागत, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक, राजनीतिक आयाम शामिल हैं। ये दोनों देश साझी विरासत और दुखद इतिहास साझा करते हैं। सांस्कृतिक डोरियाँ जो उन्हें एक–दूसरे से जोड़ती हैं, उतनी ही मजबूत हैं, जितनी उनके लोगों का संगीत, साहित्य और कला के प्रति जुनून। ये ऐतिहासिक संबंध, बदले में, बहुआयामी और लगातार बढ़ते द्विपक्षीय संबंधों में तब्दील हो जाते हैं। उनकी भौगोलिक स्थिति एक–दूसरे की पूरक हैं और दोनों देशों के लिए अपनी कनेक्टिविटी को मजबूत करने का अवसर प्रदान करती हैं।

वर्तमान मोदी सरकार ने अपने पूर्ववर्ती सरकारों की तरह अपने पड़ोसी राष्ट्रों के साथ अच्छे संबंध को लेकर अधिक सक्रिय हैं सभी पड़ोसी राष्ट्रों को अपने शपथ ग्रहण समारोह में बुलाना पड़ोसी राष्ट्रों के साथ संबंध को बढ़ाने की ओर से एक सकारात्मक कदम था। बांग्लादेश के साथ कई वर्षों से चले ओर भूमि सीमा विवाद के निपटारे में पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा उठाए गए सकारात्मक कदम ने एक नई उम्मीद को कायम किया है हालांकि इस अवधि के दौरान भारत और पाकिस्तान के संबंध और अच्छे अवश्य हो गए। भारत और बांग्लादेश दोनों अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण एक दूसरे पर निर्भर रहेंगे क्योकि कोई भी राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में भौगोलिक स्थिति को अस्वीकार कर अपने राष्ट्रीय हित की सुरक्षा नहीं कर सकता। भारत की भौगोलिक स्थिति दक्षिण एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया,खाड़ी देश एवं हिंद महासागर में महत्वपूर्ण स्थिति रखती है। अतः इसे देखते हुए कहा जा सकता है कि बांग्लादेश

भारत के साथ कटुतापूर्ण व्यवहार रखकर अपना अंतर्राष्ट्रीय अस्तित्व नहीं रख सकता है। अपनी विशिष्ट स्थिति के कारण बांग्लादेश सदैव भारत के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए रखता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

- Nurusal Islam, "Indo-Bangladesh Economic Relations : Some Thoughts," Economic and Political Weekly, 2004.
- N.S. Jamwal "Border Management: Dilemma of guarding the India-Bangladesh border" Strategic Analysis, Vol. 28 , Issue. 1,2004.
- Anasua Basu Ray Chaudhury and Pratnashree Basu, "India-Bangladesh Connectivity : Possibilities and Challenges", Observer Research Foundation, 2 June 2015.
- Gautam Sen, "For Successful Implementation of the Land Boundary Agreement with Bangladesh", IDSA Comment, 29 December 2015.
- Smruti Pattanaik "Four Decades of India Bangladesh Relations Historical Imperatives And Future Direction" Gyan Publishing House, New Delhi, 2012.

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

अमृतकाल के पंच प्रण लक्ष्य एवं विकास के पाँच प्रतिज्ञा संकल्प

डॉ0 आशा कुमारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग
महाराज बलवंत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
गंगापुर, वाराणसी

भारत की स्वाधीनता के अमृत महोत्सव का लक्ष्य 100 वे वर्ष में अवश्य दिखाई देने लगेगी। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने 15 अगस्त 2022 को भारत के विकसित राष्ट्र के लिए पाँच प्रतिज्ञा लेने का आह्वाहन किया। स्पष्ट है कि भारत 2047 में आजादी के 100 वर्ष पूरा करेगा। आजादी के दिवानों के सारे सपने पूरे करने की जिम्मेदारी उठानी होगी। प्रथम प्रण लक्ष्य–विकसित भारत के बड़े संकल्प के साथ आगे बढ़ना है। दूसरा प्रण लक्ष्य–दासता के सभी निशान मिटाना है। तीसरा प्रण लक्ष्य–हमें अपनी विरासत पर गर्व होने चाहिए। चौथा प्रण लक्ष्य–एकता और एकजुटता एक भारत श्रेष्ठ भारत पाँचवाँ प्रण लक्ष्य–नागरिकों का कर्तव्य देश एवं समाज के निर्माण के लिए संकल्प जहाँ राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री और प्रदेश का मुख्यमंत्री का सादृश्याकृत भाव होना चाहिए।

पूरा विश्व भारत को गर्व और आशा के साथ समस्याओं का समाधान भारत की धरती पर दुनिया खोजने लगी है। विश्व का यह बदलाव सोचने को मजबूर करता है कि क्या ये परिवर्तन 75 साल की आजादी की. हमारी यात्रा का परिणाम है आने वाले 25 वर्षों में हमें अपनी शक्ति, संकल्पों और सामर्थ्य को केद्रित करना होगा।

भारत को सोने की चिड़िया कहा जाता है, और इसे पुनजीवित करने का संकल्प लिया जा रहा है आने वाले विगत कुछ वर्षों में भारत विश्व की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में उभर कर विश्व के सामने आयेगी, और भारत विश्व गुरु बनेगा,

स्थानीय उत्पाद के प्रति आग्रह तथा उसे न केवल जनपद, राज्य, देश अपितु विश्व स्तर पर बाजार दिलाने का प्रयत्न करना, संचार साधनो माध्यमो का विस्तार, जलसंसाधन परिवहन का विस्तार कर सड़क गाँवों का विकास करना तथा अन्त्योदय योजना को क्रियान्वयन करके समृद्धि के ओर अग्रसर होना है, देश केवल नीतियों के निर्माण से नहीं चलता अपितु लाभार्थी की सुविधा तक नीतियों को क्रियान्वयन करना है.. देश की व्यवस्थापरक मापक का नवसूत्र प्रतिपादन किया है। सत्ता शक्तियों के विकास के लिए तालमेल बैठाना शुरू किया। सरकार द्वारा जो भी नई–नई योजना बनाई जा रही है उसे ससमय समाज तक पहुंचाने के लिए डिजिटल पद्दति एवं नये फेक्टर को तैयार किया है तथा इस पद्धति को आम सहमति प्राप्त है

महिलाएं एवं बच्चे आदिवासी सशक्तिकरन, जल सांस्कृतिक गौरव, पर्यावरण के लिए जीवन शैली, स्वास्थ और कल्याण, समावेशी विकास, आत्मनिर्भर भारत और एकता, पर काफी बल दिया जा रहा है। पानी, स्वच्छता, आवास, बिजली आदि जैसी आवश्यक सेवाओं तक बेहतर पहुंच के साथ वंचित आबादी के लिए लक्षित प्रयास एक और अधिक समावेशी भारत के निर्माण में एक महत्वपूर्ण भूमिका रहीं है,

देश की आबादी का 8.6 प्रतिशत आबादी जनजातीय समुदाय के लोगो कि है 2011 के जनगणना के अनुसार. इनका योगदान स्वतंत्रता संग्राम, खेल और व्यवसाय के क्षेत्र में किया गया उनका योगदान हैं। 15 नवम्बर को बिरसा मुंडा की जंयति को गौरव दिवस के रूप में घोषित किया गया ।

भारत देश विश्व में जनसंख्या के दृष्टिकोण से दूसरा स्थान रखता है। जनसंख्या अधिक होने के कारण समस्याएँ भी अनगिनत होती है, परंतु यदि मानवी संसाधन के रूप में जनसंख्या को प्रशिक्षित किया जाए तो यह विकास के गति देने वाला संसाधन साबित होता है। 1991 में हुए आर्थिक उदारीकरण के कारण आर्थिक विकास की गति तीव्र हुई है। जो वित्तीय वर्ष 1997 के 5.32 लाख करोड़ रूपये से बढ़कर वित्त वर्ष 2024 में 296.57 लाख करोड़ रूपये तक पहुँच गई है अर्थात् इन 33 वर्षो में 13 प्रतिशत की संचयी वार्षिक विकास दर भारत प्राप्त कर लिया है। इस दशक में आधारभूत ढांचा के विकास पर खर्च में भारी बढ़ोत्री की गई, भारत ऐसी ही गति से वार्षिक विकास करता रहा तो से 1947 तक भारत विश्व में तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जायेगी, राजकोषीय घाटा कम होता चला जायेगा ।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने विकास करने में सबसे बड़ी भूमिका किसानों की बताई। जब तक हम खाद्यान में आत्मनिर्भर नहीं होगें तब तक विकास करना संभव नहीं हैं, देश के प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री ने "जय जवान जय किसान का नारा दिया था। अटल बिहारी बाजपेयी ने "जय जवान जय किसान जय विज्ञान कहा आज हमारे देश के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने नारा दिया "जय जवान जय किसान जय अनुसंधान आज के दौड़ में अगर विकास करना है तो नवाचार करना पड़ेगा। नवाचार की विशेषताएँ – सापेक्ष लाभ अनुकूलता, अवलोकनशीलता, परीक्षणशीलता आरै जटिलता) औद्योगिक उपभोक्ताओं द्वारा नई तकनीक को अपनाने के व्यवहार को अलग तरीके से प्रभावित करती है। नवाचार सभी आर्थिक विकास के 85 प्रतिशत तक जिम्मेदार रहा है नागरिकों को अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक होना चाहिए। नागरिकों का कर्तव्य देश के लिए जरूरी है कर्तव्यों के प्रति जागरूक नागरिक ही देश को प्रगति की शह पर ले जाने में कामयाब होगें।

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने देश के विकास के लिए त्रिशक्ति का जिक्र किया उन्होंने कहा कि देश में विकास की गति को बढ़ाने के लिए हमे 130 करोड़ देशवासियों की टीम इंडिया बनाकर चलना होगा, हमारे पास यह सबसे बड़ी शक्ति जिसे लेकर आगे चलना होगा, संकल्प और कर्तव्य के प्रति समर्पण का जिक्र करते हुए प्रधानमंत्री मोदी जी जी ने कहा कि संकल्प बड़े होने चाहिए। इन संकल्पों को पूरा करने में लोग कर्तव्य के प्रति जागरूक होकर मदद कर सकते हैं। इन कर्तव्य के अन्तर्गत देश का राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री एवं राज्य का मुख्यमंत्री भी शामिल होगें,

अमृतकाल के लिए यह पाँच संक्लप या पंच प्राण रखे गये। एक विकसित भारत की दिशा में काम करने के लिए उपनिवेशवाद के किसी भी अवशेष को हटा दे अपने जडो को बनाए रखे विविधता में एकता सुनिश्चित करें, और आगे बढ़े। एक नागरिक कर्तव्य से बाहर उन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला कि भ्रष्टाचार और वंशवादी भारत में दो सबसे बड़ी चुनौतियाँ थी विकासित भारत के संकल्प में प्रधानमंत्री जी ने कहा कि अब देश बड़े संकल्प लेकर चलेगा, छोटे–छोटे संकल्प का अब समय नहीं है आने वाले 25 वर्षों में हमें किसी भी कीमत पर विकसित भारत चाहिए। उससे कुछ कम नहीं होना चाहिए

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने स्वच्छ भारत मिशन की नई दिल्ली, राजपथ पर शुरूआत करते हुए कहा था कि "एक स्वच्छ भारत के द्वारा ही देश 2019 में महात्मा गांधी की 150वीं जयंती पर अपनी सर्वोत्तम श्रद्धांजलि दे सकते हैं।" 2 अक्टूबर, 2014 को स्वच्छ भारत मिशन देश भर में व्यापक तौर पर राष्ट्रीय आंदोलन के रूप में शुरू किया गया था। इस अभियान के अंतर्गत 2 अक्टूबर 2019 तक "स्वच्छ भारत" की परिकल्पना को साकार करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

स्वच्छ भारत अभियान भारत सरकार द्वारा चलाया गया सबसे महत्वपूर्ण स्वच्छता अभियान है। श्री नरेन्द्र मोदी ने इंडिया गेट पर स्वच्छता के लिए आयोजित एक प्रतिज्ञा समारोह की अगुआई की थी। जिसमें देश भर से आए हुए लगभग 50 लाख सरकारी कर्मचारियों ने भाग लिया। उन्होंने इस अवसर पर राजपथ पर

एक पदयात्रा को भी झंडी दिखाई थी और न केवल सांकेतिक रूप से दो चार कदम चले बल्कि भाग लेने वालों के साथ काफी दूर तक चलकर लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया।

स्वच्छता के जन अभियान की अगुआई करते हुए प्रधान मंत्री ने जनता को महात्मा गांधी के स्वच्छ और स्वास्थ्यवर्धक वातावरण वाले भारत के निर्माण के सपने को साकार करने के लिए प्रेरित किया। श्री नरेन्द्र मोदी ने स्वयं मंदिर मार्ग पुलिस थाने में स्वच्छता अभियान को शुरू किया। धूल–मिट्टी को साफ करने के लिए झाड़ू उठाकर स्वच्छ भारत अभियान को पूरे राष्ट्र के लिए एक जन–आंदोलन का रूप दिया और कहा कि लोगों को न तो स्वयं गंदगी फैलानी चाहिए और न ही किसी और को फैलाने देना चाहिए। उन्होंने "न गंदगी करेंगे, न करने देंगे।" का मंत्र भी दिया। श्री नरेन्द्र मोदी ने नौ लोगों को स्वच्छता अभियान में शामिल होने के लिए भी आमंत्रित किया और उनमें से हर एक से यह अनुरोध किया वो अन्य नौ लोगों को इस पहल में शामिल होने के लिए प्रेरित करें। लोगों को इस अभियान में शामिल होने का आह्वान करके स्वच्छता अभियान एक राष्ट्रीय आंदोलन का रूप ले चुका है। स्वच्छ भारत अभियान के संदेश ने लोगों के अंदर उत्तरदायित्व की एक अनुभूति जगा दी है। अब जबकि नागरिक पूरे देश में स्वच्छता के कामों में सक्रिय रूप से सम्मिलित हो रहे हैं, महात्मा गांधी द्वारा देखा गया 'स्वच्छ भारत' का सपना अब साकार होने लगा है।

प्रधान मंत्री ने अपनी बातों और अपने कामों से स्वच्छ भारत के संदेश को लोगों का प्रयोग करके पूरे भारत और पूरी दुनिया में फैला दिया है। उन्होंने वाराणसी में भी स्वच्छता अभियान चलाया। उन्होंने स्वच्छ भारत मिशन के तहत गंगा नदी के निकट अस्सी घाट पर फावड़ा चलाया। बड़ी संख्या में उनके साथ शामिल होकर स्वच्छता अभियान में उनका सहयोग दिया। स्वच्छता के महत्व को समझते हुए प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने इसके साथ ही साथ स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं को हल करने की बात भी उठाई है। ये स्वास्थ्य समस्यायें लगभग आधे भारतीय परिवारों को घर में उचित शौचालय न होने के कारण झेलनी पड़ रही हैं।

समाज के विभिन्न वर्गों ने आगे आकर स्वच्छता के इस जन अभियान में हिस्सा लिया है और अपना योगदान दिया है। सरकारी कर्मचारियों से लेकर जवानों तक, बालीवुड के अभिनेताओं से लेकर खिलाड़ियों तक, उद्योगपतियों से लेकर अध्यात्मिक गुरुओं तक सभी ने इस महान काम के लिए अपनी प्रतिबद्धता जताई है। देश भर के लाखों लोग सरकारी विभागों द्वारा चलाए जा रहे स्वच्छता के इन कामों में आए दिन सम्मिलित होते रहे हैं, इस काम में एनजीओ और स्थानीय सामुदायिक केन्द्र भी शामिल हैं, नाटकों और संगीत के माध्यम से सफाई–सुथराई और स्वास्थ्य के गहरे संबंध के संदेश को लोगों तक पहुंचाने के लिए बड़े पैमाने पर पूरे देश में स्वच्छता अभियान चलाये जा रहे हैं।

प्रधान मंत्री ने जनता और विभिन्न विभागों एवं संस्थाओं द्वारा स्वच्छ भारत मिशन में हिस्सा लेने और एक स्वच्छ भारत के निर्माण में अपना योगदान देने के लिए किए जाने वाले प्रयत्नों की सराहना की है। श्री नरेन्द्र मोदी ने सोशल मीडिया में जनता की भागीदारी की हमेशा मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। साथ ही साथ स्वच्छ भारत अभियान के एक हिस्से के तौर पर ' अभियान भी शुरू किया गया है ताकि साफ – सफाई के लिए चलाए जा रहे इस अभियान में नागरिकों के योगदान को उजागर किया जा सके।

स्वच्छ भारत एक 'जन–आंदोलन' का रूप ले चुका है क्योंकि इसे जनता का अपार समर्थन मिला है। बड़ी संख्या में नागरिकों ने भी आगे आकर साफ–सुथरा भारत बनाने का प्रण किया है। स्वच्छ भारत अभियान के आरंभ के बाद गलियों की सफाई के लिए झाड़ू उठाना, कूड़े–करकट की सफाई, स्वच्छता पर ध्यान केन्द्रित करना और अपने चारों ओर स्वास्थ्य वर्धक वातावरण बनाना अब जनता की प्रकृति बन गई है। जनता 'स्वच्छता ईश्वरत्व के निकट है' के संदेश को फैलाने में मदद दे रही है और इस काम में शामिल हो रही है।

प्रधानमंत्री मोदी ने स्वतंत्रता दिवस पर अमृत काल के जो पांच प्रण बताए उनमें नागरिकों का कर्तव्य अति विशिष्ट है। वास्तव में नागरिक चेतना और सतत सहभागिता ही किसी लोकतंत्र के जीवंत होने का प्रमाण है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

- आत्म निश्रर्भर भारत प्रो0 सोमेश शुक्ल
- आजादी @75 हेमंत कुकरेती
- times of india
- योजना – नवम्बर 2023
- भारतीय अर्थव्यवस्था– प्रकाशक यूनिक पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड 2023–2024
- कुरूक्षेत्र जनवरी 2024
- Swachh Bharat Abhiyan :PM modi govt builds

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

डा0 भीमराव अम्बेडकर एवं सामाजिक न्याय

मनीष कुमार कश्यप
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र
आर0एम0पी0 स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
सीतापुर (उ0प्र0)

सारांश :–

छात्र जीवन के परवर्ती काल में ही अम्बेडकर को अपने जीवन का लक्ष्य बहुत कुछ स्पष्ट हो गया था। उनका तात्कालिक लक्ष्य था दलितों का उद्धार जबकि दूरगामी लक्ष्य था एक न्यायपूर्ण समाज की रचना। दूसरें शब्दों में सामाजिक न्याय की स्थापना अम्बेडकर के जीवन का मुख्य लक्ष्य था अस्पृश्यता जनित दलित निर्योग्यताओं से त्रसित दलित जातियों, जिसमें स्वयं अम्बेडकर पैदा हुए थे, की दशा में सबसे खराब थी। ये जातियां हिन्दु समाज में सबसे ज्यादा अन्याय और अत्याचार से पीड़ित थी। इसलिए सामाजिक न्याय के प्रश्न पर डा0 अम्बेडकर ने इस वर्ग के हितों को संघर्ष का प्राथमिक मुद्दा बनाया। साथ ही नारी अनुसूचित जनजाति सहित अन्य पिछड़े वर्गों व अल्पसंख्यकों को सामाजिक न्याय दिलाने में भी डा0 अम्बेडकर ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, किन्तु अम्बेडकर जानते थे कि यदि समाज का ढ़ाचा न्याय पर आधारित नहीं हो तो इन वर्गों के हितों की रक्षा के लिए संविधान में किये गए विशिष्ट उपबन्धों का कोई मूल्य नहीं होगा। इस लक्ष्य की आपूर्ति में डा0 अम्बेडकर ने संविधान के माध्यम से स्वतंत्रता एवं भ्रातृत्व पर आधारित एक न्यायपूर्ण सामाजिक ढ़ाचे की आधारशिला रखी जो सामाजिक न्याय की स्थापना के प्रयास की दिशा में उनका सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान कहा जा सकता है।

शब्द कुजीः– दलित, अत्याचार, पीड़ित, सामाजिक न्याय, अनुसूचित जाति।

प्रस्तावनाः–

इस सन्दर्भ में डॉ0 अम्बेडकर के व्यक्तित्व एवं कार्यों के दो विशिष्ट पक्ष उल्ल्लेखनीय हैं।

(1) अन्याय के विरूद्ध विद्रोह एवं क्रान्तिकारी संघर्ष गाथा।

(2) सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए रचनात्मक प्रयास।

उनके जीवन के उपर्युक्त दोनों पक्षों को यहां उल्लेख करना असंगत नहीं होगा।

अन्यायपूर्ण व्यवस्था के प्रति भीमराव का विद्रोह अनेक रूपों में प्रस्फूटित हुआ है। पत्रकारिता के क्षेत्र में एक मूक नायक और बहिस्कृत भारत के लिए उनके अग्रलेख स्थापित व्यवस्था जो सदियों से भेदभाव और अन्याय को संरक्षण प्राप्त करती रही के प्रति उनकी असहमति एवं विरोध को प्रकट करते हैं। अर्थशास्त्र जो यद्यपि तत्कालीन अर्थव्यवस्था की खामियों को उजागर करते हैं किन्तु अधिक उम्र नहीं है अथवा सार्वजनिक महत्व के पदों सम्बन्धी दायित्वों के सम्पादन में उनके द्वारा किये गये कार्यों को छोड़कर उनका सम्पूर्ण साहित्य वस्तुतः संघर्ष का साहित्य है। परम्परागत हिन्दु व्यवस्था धर्म दर्शन एवं चिन्तन में जहां कभी भी उन्हें चोट नजर आई उस पर चोट करने से वे चूके नहीं। समाज में व्याप्त भेदभाव शोषण व अन्याय की प्रकृति एवं कारणों को उन्होंने बारीकी से विश्लेषण किया और इसके लिए उत्तरदायी स्वार्थी तत्वों की कारगुजारियों को उजागर किया और उन पर तीखा प्रहार किया। उनकी रचनाओं में ''हू वेयर द शूद्राज '' अ अनटचेबुल्स और खास तौर पर ''एनिहिलेशन आफ कास्ट'' भारत में विद्रोह एवं संघर्ष विषय साहित्य के उत्कृष्ट नमूनें हैं। महार कन्फ्रैंस अथवा अखिल भारतीय अनुसूचित जाति परिषद या 'दलितों

युवकों या महार महिलाओं की सभा को सम्बोधित करते समय डा0 अम्बेडकर दलितों को निरन्तर सामाजिक अन्याय उत्पीड़न व दमन के विरूद्ध एकजुट होकर संघर्ष करने के लिए प्रेरित करते रहें।

अम्बेडकर की मान्यता थी कि खोये हुए अधिकार याचना से नहीं मिलते इसके लिए कठिन संघर्ष करना पड़ता है। इसे दृष्टिगत रखते हुए उन्होंने दलितों को अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने का आवाह्न किया दलितों को सार्वजनिक जलाशयों से पानी लेने की मनाही थी इसके विरूद्ध सन् 1927 में अम्बेडकर ने महार के यवदार ताल से दलितों को पानी लेने के लिए सत्याग्रह का नेतृत्व किया यह सत्याग्रह महार महासत्याग्रह के नाम से जाना जाता है। यह संघर्ष लम्बे समय तक चला अन्ततः अम्बेडकर की जीत हुई इसी दौरान डा0 अम्बेडकर ने ब्राह्मण विशेषाधिकार और दलितों की दासता सम्बन्धी हिन्दू विधान (मनु) द्वारा मंदिर प्रवेश बाम्बे में गणपति प्रोंगण प्रवेश 1929 तथा नासिक में कालाराम मंदिर प्रवेश (1930) मुख्य है।

दलितों को सामाजिक व राजनैतिक अधिकार प्राप्त कराने के उद्देश्य से ब्रिटिश शासन काल से ही डा0 अम्बेडकर ने विभिन्न मंचों पर दलितों के पक्ष को प्रस्तुत किया। साउथ वारों समिति तथा साइमन कमीशन के सम्मुख उन्होंने दलितों को न्यायपूर्ण अधिकार प्रदान किये जाने का प्रश्न उठाया। लन्दन में गोलमेज सम्मेलन के दौरान उन्होंने दलितों के न्यायपूर्ण हितों की वकालत की, जिसके फलस्वरूप ब्रिटिश शासन ने दलितों को पृथक प्रतिनिधित्व दिये जाने सम्बन्धी डा0 अम्बेडकर की मांग स्वीकार कर लिया। गांधी ने ब्रिटिश शासन के रूप निर्णय के विरूद्ध आमरण अनसन आरम्भ किया, जिसकी राष्ट्र व्यापी प्रतिक्रिया को देखते हुए डा0 अम्बेडकर पूना की यरवदा जेल में गांधी एवं कांग्रेस के प्रतिनिधियों से मिले। आपसी विचार विमर्श के उपरान्त दोनो पक्षों में एक समझौता हुआ जो पूना पैक्ट (1932) के नाम से जाना जाता है। इस समझौते के फलस्वरूप अम्बेडकर ने दलितों के लिए पृथक प्रतिनिधित्व का परित्याग किया।

बदले में कांग्रेस ने दलितों को विधान मण्डलों में तुलनात्मक रूप से अधिक स्थान आरक्षित किये जाने तथा उन्हें अन्य सुविधायें प्रदान किये जाने की बात स्वीकार की। ''पूना पैक्ट'' वस्तुतः एक संघर्षशील योद्धा की अप्रतिम सूझ और दूर दृष्टि का परिचायक है। जो आगे चलकर स्वाधीनता आन्दोलन की सफलता और दलितों के सामाजिक न्याय हेतु संघर्ष के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुआ। अखिल भारतीय अनुसूचित जाति परिषद के प्रतिनिधि के रूप में डा0 अम्बेडकर ने स्वतंत्र भारत के संविधान में दलितों को न्यायपूर्ण अधिकार प्रदान किये जाने हेतु आवश्यक प्रावधान किये जाने के उद्देश्य से सन् उन्नीस सौ छियालिस में संविधान सभा को एक ज्ञापन सौंपा जो बाद में ''स्टेटस एण्ड माइनारिटीज'' शीर्षक के एक लघु पुस्तिका के रूप में प्रकाशित हुआ। इस ज्ञापन की अनेक मांगे संविधान में स्वीकार कर ली गई।

सभी दलितों को एक मंच पर एकत्रित कर उन्होंने सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक अधिकारों हेतु संघर्ष के लिए एक ''शिड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन'' की स्थापना की, दलितों के सम्मान व हितों की रक्षा के लिए उन्होंने दलित युवकों को समता सैनिक दल (1927) के बैनर तले एकत्रित किया। इस दल का उद्देश्य असमानता जनित सभी कुरितियों के विरूद्ध संघर्ष करना था।

अम्बेडकर इस बात से भली भाँति परिचित थे कि गरीब व अशिक्षित होने के कारण पूंजीवादी व्यवस्था में दलितों की आर्थिक उन्नति सम्भव नहीं है। उनका सोचना था कि सामाजिक और आर्थिक अधिकारों की प्राप्ति और उनका सार्थक उपभोग दलितों के लिए तब तक सम्भव नहीं है। जब तक कि शासन में उन्हें भागीदारी नहीं मिलती। लोकतांत्रिक व्यवस्था के अन्तर्गत राजनैतिक शक्ति पर दलितों का

अधिकार हो सकता है। बशर्ते वे आपस में संगठित हों। इस उद्देश्य को दृष्टिगत रखते हुए उन्होंने इण्डिपेण्डेन्ट लेबर पार्टी (1936) का गठन किया था। इस पार्टी में उन्होंने दलितों व श्रमिकों को एक जुट होने का विशेष रूप से उनके अनुयाइयों ने भारतीय रिपब्लिकन पार्टी के झण्डे तले अपना राजनैतिक मोर्चा सम्भाला।

भारतीय संविधान जिसकी मसौदा समिति के डा0 अम्बेडकर अध्यक्ष थे और जिसकी रचना में उनकी अहम भूमिका थी के लागू होने के साथ दलितों व कमजोर वर्गों को न्यायपूर्ण अधिकारों की प्राप्ति हो गई किन्तु अम्बेडकर का संघर्ष दलितों को मौलिक अधिकार दिलाने तक ही नहीं सीमित था उनका लक्ष्य था सम्पूर्ण मुक्ति, जो तब तक सम्भव नहीं थी जब तक की दलित अपनी मानसिकता, आध्यात्मिक दासता से मुक्ति का सही मार्ग नहीं ढूढ़ लेते।

अम्बेडकर हिन्दू धर्म से पूर्णतया निराश थे। उन्हें विश्व के अन्य किसी धर्म में भी मुक्ति का मार्ग नहीं दिखा जो ईश्वर या उसके किसी पैगम्बर का गुलाम हो। उनका विश्वास था कि एक गुलाम किसी गुलाम को मुक्ति प्रदान नहीं कर सकता। सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष और उस संघर्ष के लिए समर्पित जीवन की इति अन्ततः बुद्ध के शरण में जाकर हुई। बुद्ध का मार्ग अम्बेडकर की दृष्टि में स्वतंत्रता समानता प्रेम और भाईचारें पर आधारित एक मुक्ति संगत व न्यायपूर्ण व्यवस्था की स्थापना का मार्ग है। उनका विश्वास था कि विश्व में व्यक्ति की गरिमा की रक्षा व न्यायपूर्ण व्यवस्था की स्थापना के लिए धम्म के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नहीं है।

डा0 अम्बेडकर ने जहां अन्याय के विरूद्ध विभिन्न मंचों से आवाज उठाई और लोगों को न्यायपूर्ण अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष का आह्वान किया वहीं जब कभी उन्हें सार्वजनिक महत्व के पदों पर काम करने का अवसर मिला। उन्होंने सामाजिक न्याय की स्थापना की दिशा में रचनात्मक काम करने का अवसर मिला। उन्होंने सामाजिक न्याय की स्थापना की दिशा में रचनात्मक कार्य किये। वायसराय की एक्जीक्यूटिव कौन्सिल में जब वे लेबर मेम्बर थे। उन्होंने श्रमिकों विशेष रूप से महिला श्रमिकों के हित में आवश्यक विधान बनाये या प्रचलित विधानों में आवश्यक संशोधन किये।

संविधान की मसौदा समिति के अध्यक्ष मनोनित होने के साथ स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माण का दायित्व उनके कन्धों पर आ गया। अब वे केवल कमजोर एवं अल्पसंख्यक वर्ग के हितों के प्रवक्ता ही नहीं रहे अपितु सभी वर्गों के प्रतिनिधि थे। अपने इस दायित्व को भली–भांति समझते थे और इसे उन्होंने बखूबी निभाया भी भारतीय संविधान जहां महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन जातियों एवं अल्पसंख्यकों को न्याय प्रदान करता है। वहीं इस बात का प्रावधान भी करता है कि कोई भी वर्ग या व्यक्ति संवैधानिक दायरे के अन्तर्गत कानूनी प्रक्रिया को अपनाये बिना किसी भी व्यक्ति, चाहे वह सबल या निर्बल हो को उसके न्यायपूर्ण अधिकार या अधिकारों से बेदखल नहीं कर सकता है। संविधान में स्वतंत्र न्याय पालिका की स्थापना करके समाज को डा0 अम्बेडकर ने न्याय की प्रत्याभूति प्रदान करनें एवं न्याय को प्रभावी बनाने की दिशा में उल्लेखनीय कार्य किया।

कानून मंत्री के रूप में हिन्दू कोड बिल की रचना भारत में न्यायपूर्ण समाज की रचना की दिशा में एक ठोस बुनियादी पहल थी। हिन्दू कोड बिल, का महत्व इस बात के लिए ज्यादा नहीं है कि हिन्दू समाज में नारी को पुरूष के समकक्ष अधिकार प्रदान कर परिवार व समाज में उसकी स्थिति को बेहतर बनाता है। इसका वास्तविक महत्व इस बात को लेकर है कि यह मनु एवं अन्य हिन्दु शास्त्रकारों द्वारा वर्णित जाति जनजाति के नियमों को स्वीकार करता है। इसका महत्व इस बात को लेकर है कि यह मनु के द्वारा

स्थापित कन्या के रजस्वला होने के पूर्व विवाह किये जाने के विधान का निषेध करता है। इसका महत्व इस बात को लेकर है कि यह विवाह को ईश्वरी विधान न मानकर समझौता निरूपित करता है। जिसमें पति को पत्नी को तलाक देने का अधिकार है। इस प्रावधानों के कारण हिन्दू कोड बिल आने वाले दिनों में जाति पर आधारित हिन्दू समाज को भेदभाव, ऊँच–नीच और अन्याय के लिए विख्यात रहा है के विनाश का पत्थर साबित होगा।

अम्बेडकर यह जानते थे कि विधान में न्याय का प्रावधान कर देने मात्र से ही संविधान में न्याय प्रभावी नहीं हो सकता। जो लोग सदियों से अन्याय से पीड़ित रहे हैं। उन्हें यदि न्यायपूर्ण अधिकार मिल भी जाये। उन अधिकारों का वे सार्थक प्रयोग अब भी नहीं कर पायेंगे जब तक कि वे इसके लिए समर्थ नहीं हो जाते। अशिक्षा दलितों को अपने अधिकारों की रक्षा करने तथा संविधान द्वारा प्रदत्त सुविधाओं का लाभ उठाने की दिशा में बहुत बड़ी बाधा थी। इस बाधा को दूर करने के लिहाज से डा0 अम्बेडकर ने ''पीपुल्स एजूकेशन सोसायटी'' नाम से एक संस्था बनाई। इस संस्था के तत्वाधान में उन्होंने बम्बई में सिद्धार्थ कालेज (1931) की स्थापना की। इस संस्था ने विशेष रूप से महाराष्ट्र में दलितों में शिक्षा के प्रसार के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किया।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि भारत में सामाजिक न्याय की स्थापना में अम्बेडकर का अवदान मौलिक और महत्वपूर्ण है। इस संदर्भ में उनके चिन्तन व क्रियात्मक पक्षों को सारांश रूप में निम्न प्रकार सूचीबद्ध किया जा सकता है।

(1) सामाजिक न्याय का कारण समाज की चातुर्वर्ण (या जाति) व्यवस्था है। अतः सामाजिक न्याय की स्थापना इसकी समाप्ति तथा लोकतांत्रिक समाज की स्थापना से सम्भव है।

(2) चातुर्वण व्यवस्था को हिन्दु शास्त्र विधान विशेष रूप से मनु के हिन्दू विधान ने कठोर स्वरूप प्रदान किया। अतः इस व्यवस्था की समाप्ति के लिए इसकी रचना करने वाले पुराने विधान को निरस्त कर उसके स्थान पर नये विधान की रचना करना जरूरी है। डा0 अम्बेडकर ने मनुस्मृति को जलाया और राष्ट्रीय संविधान व नये हिन्दु विधान (हिन्दू कोड बिल) की रचना की।

(3) जाति एवं वर्ण व्यवस्था को समूल नष्ट करने के लिए उसे सम्पोषित व संरक्षित करने वाली हिन्दू वैचारिकी की अवैज्ञानिकता एवं अनुपयोगिता सिद्ध करना आवश्यक था। साथ ही उसके स्थान पर सामाजिक प्रजातंत्र को सम्पोषित करने वाली लोकतांत्रिक वैचारिकी का प्रतिपादन भी जरूरी था। डा0 अम्बेडकर 1980 में अपने अध्ययनों के माध्यम से चातुर्यवर्ण व्यवस्था के सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक खोखलेपन को दर्शाया और लोकतांत्रिक वैचारिकी का अर्थ स्पष्ट करते हुए यह बताया कि यह न केवल वैज्ञानिक एवं न्यायपूर्ण है अपितु भारतीय भी है। उनका मानना था कि जब पाश्चात्य देश अपने को लोकतंत्र का अगुआ मानते हैं। सभ्यता के स्तर पर नहीं पहुंच पाये थे। तब भारत में बुद्ध ने लोकतंत्र को मजबूत करने की दृष्टि से उन्होंने बुद्ध के संदेश को जन–जन तक पहुंचाना जरूरी समझा और इसकी पुरजोर वकालत की।

निष्कर्षः–

अम्बेडकर स्वतंत्रता समानता और भ्रातृत्व को सामाजिक न्याय का मापदण्ड मानते थे। उनका मानना था कि समाज में इन तत्वों की पैठ शान्तिपूर्ण संवैधानिक तरीके से ही बेहतर हो सकती है। इसमें समय लग सकता है। किन सामाजिक न्याय के उपर्युक्त निर्णायक तत्व समाज में ऊपर से नीचे तक रफ रत हों और हमारे स्वाभाविक कार्य व्यवहार के अभिन्न अंग बन जाये इसके लिए इससे अच्छा कोई विकल्प नहीं है। यदि कोई अन्य विकल्प अपनाया जाता है तो उसे समाज में उपयुक्त बनाने के लिए निरन्तर

सिपाही की जरूरत होगी किन्तु सिपाही या शक्ति के माध्यम से लागू किए गए विकल्प कभी स्थायी व प्रभावी नहीं होते। संविधान के माध्यम से डा0 अम्बेडकर ने न्याय को जीवन के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक तीनों आयामों पर उतारने की कोशिश की (धारा 38), सामाजिक न्याय कानून के समक्ष समानता (धारा 14), धर्म, जाति, लिंग, जन्म स्थान आदि के आधार पर भेद–भाव की समाप्ति धारा (15–1) सभी को शिक्षा प्राप्त करने का समान अधिकार धारा (29–2), रोजगार अवसर की समानता धारा (16–1), सभी सार्वजनिक प्रकृति की हिन्दु संस्थाओं के द्वारा सभी हिन्दुओं के लिए खुले (धारा 25–29), पिछड़े वर्गो को शैक्षिक विकास के लिए विशेष प्रावधान (अनुच्छेद 46), पिछड़े वर्गों के रोजगार हेतु आरक्षण का प्रावधान अनुच्छेद (335) इत्यादि अम्बेडकर का मानना था कि सामाजिक न्याय बेमानी है। जहाँ व्यक्ति के महत्व स्वीकार नहीं किया जाता और उसकी गरिमा की रक्षा नहीं होती। इस प्रकार अम्बेडकर ने संघर्ष कर समाज के पिछड़ों को सामाजिक न्याय दिलाया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1– रणखुम्भे, सूर्यनाथ, डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर वाणी प्रकाशन नई दिल्ली।
2– चन्द्र, प्रो0 विपिन, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष
3– यादव, डॉ0 झिनकू, भारत में दलित एवं कमजोर वर्ग की स्थिति।
4– भूषण, डॉ0 मुकेश, दलितों का इतिहास, अतीत एवं वर्तमान के आईने में राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली।
5– आर0 चन्द्रा कन्हैयालाल चंचरिक, 2003, आधुनिक भारत का दलित आंदोलन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली
6– नैमिशराय मोहनदास 2017, भारतीय दलित आन्दोलन का इतिहास, राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली
7– माइकल एस0एम0 संपा0 आधुनिक भारत में दलितः दृष्टि मूल्य, सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

महिलाओं पर संरचनात्मक हिंसा : महिला सशक्तिकरण में बाधा

रीना देवी
शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

सारांश

संरचनात्मक हिंसा, हिंसा का दूसरा प्रकार है। इसे अप्रत्यक्ष हिंसा भी कहा जाता है।इस प्रकार की हिंसा में आक्रामक तथा पीड़ित व्यक्ति दोनों में कोई संबंध नहीं होता है। हमारे समाज में महिलाओं पर हिंसा अनादि काल से होता आ रहा है। समाज की नैतिकता, मूल्य, संस्कृति को इस प्रकार तैयार किया गया है या हम यह कह सकते हैं कि इस प्रकार से संरचित किया गया है ताकि महिला वर्ग के शोषण को बढ़ावा दिया जा सके, जो वास्तव में समाज की बुनियाद है।

1969 में johan Galtung ने संरचनात्मक हिंसा की अवधारणा प्रस्तुत की।इस प्रकार की हिंसा में कुछ सामाजिक संस्थान लोगों को उनकी बुनियादी जरूरत को पूरा करने से रोक कर उन्हें नुकसान पहुंचा सकती हैं। हिंसा महिलाओं के खिलाफ एक वैश्विक महामारी का रूप ले चुकी है। जिसका प्रभाव महिलाओं की मानसिक, शारीरिक, यौन तथा आर्थिक जीवन पर पड़ा है।

1969 में johan galtung ने ''हिंसा शांति और शांति''अध्ययन में एक टिप्पणी की है जो सत्य है ''जब एक पति अपने पत्नी को पीटता है तो यह व्यक्तिगत हिंसा का स्पष्ट मामला है लेकिन जब 10 लाख पति 10 लाख पत्नियों को अज्ञानता में रखते हैं तो संरचनात्मक हिंसा होती है'' भारत में महिलाओं पर हिंसा के खिलाफ कार्रवाई में धीमी गति रही है परंतु समाज में महिलाओं के खिलाफ अनेक ऐसी घटनाएं घटी जिससे लोगों का रूह कांप उठा। ऐसी घटनाओं में एक घटना दिसंबर 2012 को अंजाम दिया गया था। दिल्ली की 23 वर्षीय लड़की के साथ क्रूर सामूहिक बलात्कार हुआ था। इस घटना ने भारतीयों को इस मुद्दे पर गहरी नींद से जगा दिया। महिलाओं के खिलाफ संरचनात्मक हिंसा एक राक्षस के समान है, जो महिला सशक्तिकरण में एक बाधक तत्व है। यह समाज में महिलाओं के विकास में रुकावट पैदा कर रहा है। महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सरकार को तथा हिंसा से पीडि़त महिलाओं को मिलकर इस हिंसा से लड़ने के लिए एक बड़ा कदम उठाना होगा।

कीवर्डः संरचनात्मक हिंसा, महिला सशक्तिकरण, पितृसत्तात्मक, शोषण, समानता।

प्रस्तावना

समाज में महिलाओं की स्थिति सदियों से ही निम्न थी। प्राचीन काल में तो अच्छी थी परंतु उत्तर वैदिक काल से अब तक उनकी स्थिति में बहुत ज्यादा सुधार नहीं हो पाया है क्योंकि आज भी महिलाएं अनेक प्रकार की हिंसा की शिकार हो रही है। जैसे घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा, एवं बलात्कार इत्यादि। समाज की नैतिकता, मूल्य तथा संस्कृति को इस प्रकार से तैयार किया गया है या यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार से संरचित किया गया है ताकि महिला वर्ग के शोषण को बढ़ावा दिया जा सके, जो वास्तव में समाज की जड़ है। इस बात का साक्ष्य है की सभ्यता के आरंभ से ही महिलाएं पराधीन, अधीन तथा शोषित रही है। वर्तमान में भी उन्हें अनेक प्रकार के शोषण का सामना करना पड़ रहा है। महिलाओं के खिलाफ हिंसा पर 1993 में कनाडाई पैनल।[1] ने कहा ''जब तक समानता नहीं होगी, तब तक महिलाएं हिंसा से मुक्त नहीं होगी और समानता तब तक हासिल नहीं की जा सकती, जब तक महिलाओं के जीवन से हिंसा और

हिंसा का खतरा समाप्त नहीं हो जाता। अर्थात महिलाओं के जीवन को सुरक्षित रखने तथा उन्हें सशक्त बनाने के लिए हिंसा को जड़ से समाप्त करना होगा।

संरचनात्मक हिंसा का अर्थ

आमतौर पर संरचनात्मक हिंसा जोहान ळंसजनदह के रूप में वर्णित एक शब्द है। जिसे उन्होंने ''हिंसा शांति और शांति अनुसंधान'' (1969) लेख में पेश किया था। यह हिंसा, हिंसा का ही एक रूप है जिसमें कुछ सामाजिक संरचना अथवा सामाजिक संस्था उन्हें अपनी मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने से रोक कर लोगों को नुकसान पहुंचा सकती है।

Galtung द्वारा प्रस्तावित संरचनात्मक हिंसा के कुछ उदाहरण– संस्थागत वयस्कता, आयुवाद, वर्गीकरण, elitism, ethnocentrism, राष्ट्रवाद, प्रजातिवाद, नस्लवाद, और कामुकता आदि।ळंसजनदह के अनुसार एक भौतिक छवि को व्यक्त करने के बजाय संरचनात्मक हिंसा ''मौलिक मानव जरूरत से बचने योग्य है। क्योंकि यह टालने योग्य है।'' संरचनात्मक हिंसा समय पूर्व मृत्यु तथा अनावश्यक और अक्षमता का एक उच्च कारण है। चूंकि संरचनात्मक हिंसा विभिन्न संरचनाओं में लोगों को भिन्न–भिन्न प्रभावित करती है,इसलिए यह सामाजिक अन्याय से बहुत निकटता से जुड़ा हुआ है।संरचनात्मक हिंसा को पारंपरिक हिंसा, नस्लीय हिंसा, राज्य हिंसा, आतंकवाद तथा युद्ध सहित अत्यधिक परस्पर निर्भर माना जाता है।

जेम्स गिलिगन ने अपनी पुस्तक ''हिंसाः रिफ्लेक्शंस ऑन ए नेशनल एपिडेमिक'' में संरचनात्मक हिंसा को परिभाषित किया है क्योंकि ''समाज की निचली दौर पर कब्जा करने वाले लोगों की मौत और अक्षमता की बढ़ी हुई दर,जो उपयुक्त लोगों द्वारा अनुभव की गई अपेक्षाकृत कम मृत्यु दर के विपरीत हैं।'' गिलिगन उन्हें बड़े पैमाने पर इन ''अतिरिक्त मौत'' को गैर–प्राकृतिक के रूप में वर्णित करता है, और उन्हें तनाव, शर्म, भेदभाव तथा निषेध के लिए जिम्मेदार ठहराता है, जो निम्न स्थिति से होता है। वह ऐनेट एवं कोब पर आकर्षित करता है,जो नाटकीय असमानता के संदर्भ में ''गरिमा के लिए प्रतियोगिता'' की जांच करता है।

महिलाओं के खिलाफ हिंसा एक वैश्विक महामारी का रूप ले चुकी है।जिसका प्रभाव महिलाओं के शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, यौन तथा आर्थिक जीवन पर पड़ा है। महिलाओं को अपने संपूर्ण जीवन भर किसी न किसी रूप में हिंसा का सामना करना पड़ता है, चाहे वह अपने माता–पिता से हो या अपने पति से हो बाद में अपने बेटे तथा अन्य रिश्तेदारों से हो। महिलाओं के खिलाफ विश्व भर में हिंसा के मामले में चिंताजनक वृद्धि को देखते हुए दिसंबर 1993 में यूएनओ की महामारी सभा ने संकल्प संख्या 54/134 द्वारा 25 नवंबर को महिलाओं के खिलाफ हिंसा उन्मूलन के लिए अंतर्राष्ट्रीय दिवस के रूप में नामित किया। हिंसा उन्मूलन के दौरान महिलाओं के खिलाफ हिंसा पर घोषणा में कहा गया कि ''महिलाओं के खिलाफ हिंसा का मतलब लिंग आधारित हिंसा का कोई भी कार्य है, जिसके परिणाम स्वरुप महिलाओं को शारीरिक या मनोवैज्ञानिक नुकसान या पीड़ा होने की संभावना है,जिसमें ऐसे कृत्यों की धमकी,जबरदस्ती और मनमानी शामिल है।''हिंसा अन्य बातों के साथ–साथ लिंग आधारित मूर्त तथा संस्थागत होती है। सार्वजनिक या निजी जीवन में स्वतंत्रता का हनन भारत में संरचनात्मककरना भी हिंसा है। महिलाओं को संरचनात्मक हिंसा का सामना करना पड़ता है जो लिंग भेद,बलात्कार, घरेलू हिंसा, मनोवैज्ञानिक हिंसा तथा सामाजिक संरचना से उत्पन्न हिंसा के अन्य कृत्यों के परिणामस्वरुप होती है।

भारत में संरचनात्मक हिंसा के स्वरुप–

भारत में महिलाओं पर हिंसा के खिलाफ कार्रवाई की गति धीमी रही है, परंतु जब दिसंबर 2012 में नई दिल्ली की 23 वर्षीय लड़की के साथ हुए क्रूर सामूहिक बलात्कार ने इस समस्या पर भारतीयों को गहरी नींद से जगा दिया। इस घटना के बारे में जानकर अचानक लोगों में क्रोध तथा निराशा फैल गई और लोग बदलाव की मांग करने के लिए बड़ी संख्या में सड़क पर उतर आए,हालांकि इसके अंतर्गत

शामिल मुद्दा जटिल तथा गहराई से जुड़ा हुआ है।भारत की महिलाओं को पुरानी तथा दमनकारी शासन संरचना एक अक्षम कानूनी न्याय प्रणाली, कानून का कमजोर शासन तथा अत्यधिक पुरुष प्रधान सामाजिक राजनीतिक संरचनाओं की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

विश्व में भारत सबसे कम लिंगानुपात वाले देशों में से एक है तथा लगभग 35 मिलियन के करीब महिलाएं लापता है। 2011 की जनगणना के अनुसार पुरुषों और महिलाओं के बीच लिंगानुपात 1000 पुरुषों पर 943 महिलाएं हैं,परंतु 26 नवंबर 2020 में नेशनल फैमिली हेल्थ सर्वे (5) में पाया गया कि हर 1000 पुरुषों के अनुपात में 1020 महिलाएं हैं जो पिछले वर्षों की तुलना में महिलाओं की स्थिति में सुधार को दर्शाता है। भारतीय राज्यों में केरल में प्रति 1000 पुरुषों पर 1145 महिलाओं के साथ सबसे अधिक लिंगानुपात है तथा प्रति 1000 पुरुषों पर 926 महिलाओं के साथ हरियाणा का सबसे कम लिंगानुपात है हरियाणा के साथ–साथ पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र तथा मध्य प्रदेश में लिंगानुपात अन्य राज्यों से कम है। पिछले 5 वर्षों में गणना की गई जन्म के समय लिंग अनुपात में उल्लेखनीय सुधार हुआ है, जो 2015–16 में 919 से बढ़कर 2019–21 में प्रति 1000 पुरुषों पर 929 महिलाओं तक पहुंच गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि अब लोग लड़कों के साथ–साथ लड़कियों को भी प्राथमिकता देने लगे हैं। महिला बच्चों की प्राथमिकता 2011 की जनगणना की साक्षरता दर में भी स्पष्ट है जो 65 प्रतिशत महिलाओं की तुलना में 82 प्रतिशत पुरुषों को साक्षर पाया गया है। भारत में महिलाओं को अनेक प्रकार की हिंसा जैसे घरेलू हिंसा, दहेज हत्या, बलात्कार, अपहरण तथा पति एवं ससुराल वालों द्वारा क्रुरता के रूप में हिंसा का सामना करना पड़ता है। एनसीआरबी के आंकड़े बताते हैं कि एक भारतीय महिला अपने वैवाहिक घर में सबसे अधिक असुरक्षित है, महिलाओं के खिलाफ सभी अपराधों में से 43.6 प्रतिशत उसके पति और रिश्तेदारों द्वारा की गई क्रूरता है।

संरचनात्मक हिंसा पर व्यापक आधारित अध्ययन की आवश्यकता

गिलिगन ने कहा कि ''देश में हिंसा के सिद्धांत के प्रति किसी भी दृष्टिकोण को संरचनात्मक हिंसा पर नजर डालने की आवश्यकता है। केवल उन अपेक्षाकृत लोगों पर ध्यान केंद्रित करना है जो हम अपराध को हत्या के रूप में परिभाषित करते हैं। हमें उन हिंसक मौत की उन संरचनात्मक कारणों की जांच करने और उनसे सीखने से विचलित कर सकता है, जो संख्यात्मक या सार्वजनिक स्वास्थ्य या मानवीय दृष्टिकोण से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है।'' गीलिगन ने अपने काम मंर ''हिंसाय राष्ट्रीय महामारी पर विचार'' इन पंक्तियों को उद्धृत किया है।उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि संरचनात्मक हिंसा कई मायने में व्यावहारिक हिंसा से भिन्न है। वस्तुतः अदृश्य होने के अतिरिक्त संरचनात्मक हिंसा व्यक्तिगत व्यवहार से कामोवेश स्वतंत्र रूप से कार्य करती है। इसके अतिरिक्त इसके समस्यात्मक प्रभाव केवल छिटपुट रूप नहीं बल्कि लगातार चलते रहते हैं। संरचनात्मक कारकों जैसे संस्कृति तथा आर्थिक अवसर के साथ पितृसत्ता की अन्तःक्रिया से अनेक प्रकार की हिंसा उत्पन्न होती है। विभिन्न अन्वेषकों एवं सिद्धांतकारों ने संरचनात्मक हिंसा का मूल्यांकन विभिन्न तरीके से सामने रखे हैं। हेइज एक एकीकृत पारिस्थितिकी ढांचे के लिए तर्क देता है, जो व्यक्तिगत स्थितिजन्य तथा सामाजिक–सांस्कृतिक कारकों के बीच परस्पर क्रिया के लिए जिम्मेदार हो सकता है। कोएनिग एट अल ने प्रासंगिक तथा सामुदायिक स्तर के कारकों जैसे व्यक्तिगत और घरेलू स्तर की विशेषताओं एवं महिलाओं की स्वायत्तता के परस्पर संबंधित प्रभावों पर बल दिया है।बहुत से ऐसे लोग हैं जो अपने ही घरों में महिलाओं के खिलाफ हिंसा के साथ सशक्त संघर्ष करने पर जोर देते हैं। अनेक शोधकर्ता एवं जांचकर्ता हिंसा के व्यक्तिगत कारकों पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। एंडरसन के अनुसार लैंगिक हिंसा के कई स्तरों की जांच की जानी चाहिए।

महिलाओं की सुरक्षा के लिए उनके खिलाफ हो रहे हिंसा पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अध्ययन की आवश्यकता है।विश्व भर में महिलाओं के खिलाफ हिंसा को प्रभावित करने वाले संरचनात्मक कारकों की पुष्टि करने के लिए इस समस्या का व्यापक स्तर पर अध्ययन करने की आवश्यकता है।

संरचनात्मक हिंसा के परिणाम

संरचनात्मक हिंसा महिलाओं के जीवन उनके सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं उनके बच्चों और समग्र रूप से समाज के सभी पक्षों को प्रभावित करती है। समाज में पित्तसत्तात्मक संरचना के कारण महिलाओं को उनके मौलिक अधिकारों से भी वंचित रखा जाता है,जिससे वह मानसिक रूप से पीड़ित रहती हैं। परंतु उनके यौन तथा प्रजनन स्वास्थ्य पर जो इसका प्रभाव पड़ता है। उसको लोग नजर अंदाज या बहुत कम ध्यान देते हैं।

उचित मातृ देखभाल का अभाव महिलाओं के विरुद्ध संरचनात्मक हिंसा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। गर्भावस्था से संबंधित कारणों से प्रत्येक वर्ष लगभग 350 हजार महिलाओं की मृत्यु हो जाती है तथा उनमें लगभग 99 प्रतिशत मृत्यु गरीब देश में होती हैं। जहां मातृ देखभाल की सुविधा सीमित होती है। भारत में महिलाओं के एक अध्ययन में ''पत्नी की पिटाई'' और शिशु एवं भ्रुण हानि के अनुभवों के बीच एक शक्तिशाली संबंध पाया गया। शिक्षा और समानता को भी नियंत्रित करने के लिए अवांछित गर्भावस्था एचआईवी/एड्स, स्थाई विकलांगताएं तथा कम प्रदर्शन दर शामिल है। इसके विपरीत मानसिक स्वास्थ्य परिणामों में अवसाद, भय, चिंता, यौन रोग, न्यूरोसिस तथा जुनूनी व्यवहार शामिल है। अतः हम जानते हैं कि जब तक महिलाओं की क्षमता को समाज में समान रूप से भाग लेने की अनुमति नहीं दी जाएगी तब तक कोई भी देश अपनी संपूर्ण क्षमता तक नहीं पहुंच सकेगा।

सामाजिक हिंसा के कारण होने वाले प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष लागत महिलाओं के खिलाफ हिंसा की प्रत्यक्ष लागत में जान गवाने के साथ–साथ चिकित्सा, उपचार व मनोवैज्ञानिक परामर्श, कानूनी सुरक्षा, महिलाओं के लिए आवास तथा आश्रय प्रदान करना और सामाजिक सेवाएं शामिल हैं और अप्रत्यक्ष लागत में काम के दिन बर्बाद होने से उत्पादकता में कमी तथा इसका प्रभाव संपूर्ण अर्थव्यवस्था पर शामिल है।

महिलाओं के खिलाफ हिंसा के अपराधी कौन हैं?

- हिंसा करने वालों में प्रायः वे लोग शामिल होते हैं।
- जो अवसाद ग्रस्त होते हैं, जिनमें हीन भावना होती है और जिनका आत्मसम्मान कम होता है।
- जो मनोरोगी होते हैं।
- जो पारिवारिक जीवन में तनावपूर्ण स्थितियों का सामना करते हैं।
- जो बचपन में हिंसा का शिकार हुए थे तथा जो मदीरापान करते हैं।
- जिनकी प्रकृति में मलिकानापन, शक्किपन और प्रबलता होती है।
- जिनके पास संसाधनों, प्रवीणताओ और प्रतिभाओं का अभाव होता है और जिनका व्यक्तित्व विकृत होता है।

संरचनात्मक हिंसा पर नियंत्रण

लंबे समय से महिलाएं हिंसा का शिकार हो रही है तथा नारीवादी संघर्ष के बाद भी पितृसत्तात्मक हिंसा का प्रतिरोध इतना अभूतपूर्व, विशिष्ट एवं स्पष्ट नहीं है। अग्रवाल ने अपनी पुस्तक ''दक्षिण एशिया में लिंग और भूमि अधिकार'' में यह समझाने का प्रयास किया है कि महिलाएं निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र में उन पर होने वाली हिंसा एवं पितृसत्तात्मक नियंत्रण का प्रतिरोध करती हैं।

महिला आंदोलन की शुरुआत सर्वप्रथम 19वीं शताब्दी में एक सामाजिक सुधार आंदोलन के रूप में देखी जा सकती है। महिला आंदोलन ऐतिहासिक परिस्थिति एवं सामाजिक परिवेश में हुआ, जिसने विभिन्न सामाजिक संस्थाओं, प्रथाओं तथा सामाजिक सुधार कानून के बारे में एक नए विचार को जन्म दिया। भारतीय समाज तथा इसकी पितृसत्तात्मक संरचना, संरचनात्मक हिंसा का एक प्रमुख केंद्र रही है। पितृसत्तात्मक, जाति व्यवस्था तथा कई अन्य सामाजिक एवं धार्मिक विचार तथा प्रथाएं जो प्राचीन भारतीय समाज में उत्पन्न हुई। भारतीय महिलाओं की सामाजिक स्थिति के बारे में समाज की मानवशास्त्रीय सोच आज भी हावी है तथा यह अभी भी प्रासंगिक विवाद है। 80 के दशक की शुरुआत अभियान संस्कृति द्वारा चिंतित की गई थी, जिसमें विभिन्न प्राथमिकताओं एवं वैचारिक पदों वाली महिला समूह को परिवार, राज्य तथा नागरिक समाज की संस्था के भीतर सक्रिय शक्तिशाली पितृसत्तात्मक ताकतों का मुकाबला करने के लिए अपना एक नेटवर्क विकसित करना था।

भारत सरकार द्वारा किए गए हस्तक्षेप

समाज में लैंगिक असमानता को दूर करने के लिए तथा महिलाओं के कल्याण के लिए महत्वपूर्ण प्रावधानों के आदर्शों को भारतीय संविधान में शामिल किया गया है। संविधान का अनुच्छेद 15 तथा अनुच्छेद 16(2) भेदभाव को निषिद्ध करता है तथा कानून की दृष्टि में सभी को समान मानता है (अनुच्छेद 14)।

महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए कानून, विधान तथा विधेयक बार–बार पारित किए गए हैं। स्वतंत्रता पश्चात पारित किए गए महत्वपूर्ण महिला विशिष्ट कानून है। अनैतिक व्यापार (रोकथाम) अधिनियम 1956, दहेज निषेध अधिनियम 1961, घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम 2005, कार्य स्थल पर महिलाओं के साथ यौन उत्पीड़न (रोकथाम निषेध और निवारण) अधिनियम 2013।

भारतीय संसद द्वारा 1990 में राष्ट्रीय महिला आयोग की स्थापना की गई, जो महिलाओं के संवैधानिक हितों और उनके लिए कानूनी सुरक्षा के उपाय को लागू करती है।भारतीय संविधान में महिलाओं के लिए पंचायतों तथा नगर पालिकाओं के स्थानीय निकायों में सीटों के आरक्षण का प्रावधान 73वें तथा 74वें संशोधन (1993) में किया गया है। जिससे निर्णय प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाने में सहायता मिलती है।

महिलाओं की उन्नति, विकास तथा सशक्तिकरण के उद्देश्य से राष्ट्रीय नीति 2001 बनाई गई थी। देश में महिलाओं को राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक विकास में बराबरी की भागीदारी के अवसर प्रदान करने तथा महिलाओं और बालिकाओं के खिलाफ भेदभाव तथा सभी प्रकार के हिंसा को समाप्त करने पर विशेष जोर दिया गया।

सांसद ने आपराधिक कानून (संशोधन) अधिनियम 2013 पारित किया। यह अधिनियम निर्भया प्रभाव के परिणाम स्वरुप पारित किया गया।जो भारतीय संहिता भारतीय साक्ष्य अधिनियम तथा आपराधिक प्रक्रिया संहिता में संशोधन का प्रावधान करता है। महिलाओं के खिलाफ मुद्दों से निपटने के लिए पांच विशेष फास्ट ट्रैक अदालत स्थापित की गई। इसके अतिरिक्त भारत के विभिन्न शहरों में एक महिला संकट हेल्पलाइन नंबर 1091 लांच किया गया। सरकार जाति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए लैंगिक समानता एवं यौन हिंसा के खिलाफ लड़ाई पर केंद्रित नीतियों की वकालत कर रही है। परंतु समाज में भ्रष्टाचार की स्थिति होने के कारण इन सब नीतियों में सरकार सफल नहीं हो रही है। जिससे पितृसत्तात्मक तथा जाति व्यवस्था आज भी समाज में विद्यमान है। वास्तव में बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार तथा सुशासन की प्रथाओं में कमी के परिणामस्वरुप भारत में नीति/व्यवहार का अंतर सभी क्षेत्रों व पहलू में कम हो गया है।महिला सशक्तिकरण को आगे बढ़ाने तथा अनेक योजनाओं के विकास में सरकार की सामाजिक पूंजी में निवेश

करने की क्षमता में वित्तीय भ्रष्टाचार बाधा डालते हैं। जब महिलाओं को सशक्त बनाने में सरकार की नीतियां सफल हो जाती हैं। तो एनजीओ की भागीदारी के अवसर खुल जाते हैं परंतु प्रश्न यह उठना है कि क्या सरकार की नीतियों की विशाल शृंखला से निपटने के लिए एनजीओ की नीतियां प्रभावित हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त वर्तमान में भारत में गैर सरकारी संगठन ऐसे कार्यक्रम आरंभ करते हैं जो महिलाओं से संबंधित समस्याओं की विषय में हो जैसे घरेलू हिंसा या बाल विवाह, दहेज प्रथा इत्यादि तथा गैर सरकारी संगठन संरचनात्मक हिंसा की अभिव्यक्तियों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। हालांकि यह कार्यक्रम महिलाओं के कल्याण विकास एवं उनके सशक्तिकरण के लिए सही दिशा में कार्य करते हैं, परंतु आवश्यक नहीं है कि वह इन मामलों के मूल कारण को समाप्त करते हैं।

निष्कर्ष

समाज में संरचनात्मक हिंसा अनादि काल से विद्यमान है। संरचनात्मक हिंसा, हिंसा का एक रूप है यद्यपि यह कम दिखाई देता है। फिर भी यह हिंसा का अब तक का सबसे घातक रूप है, जिसके कारण सबसे अत्यधिक मौतें होती हैं। यह हिंसा की हत्याओं, आत्महत्याओं, सामूहिक हत्याओं तथा युद्ध के रूप में व्यावहारिक हिंसा का सबसे प्रबल उत्तेजक है। इसका कारण समाज में पित्त सत्तात्मक व्यवस्था का होना है।समाज की जड़ों में लोगों के साथ सांस्कृतिक मानसिकता को बदलने की शुरुआत होती है। समाज में शांति बनाए रखने और महिलाओं की सशक्तिकरण तथा विकास के लिए इस राक्षस रूपी संरचनात्मक हिंसा को समाप्त करना होगा।इसके लिए सरकारी एनजीओ तथा इस हिंसा की शिकार महिलाओं के संयुक्त प्रयासों से इस हिंसा से लड़ने के लिए एक बड़ा कदम उठाना होगा।

संदर्भ सूची

1. महिलाओं के खिलाफ हिंसा पर कनाडाई पैनल।परिदृश्य बदलनाः हिंसा समाप्त करनाः समानता प्राप्त करनाः कार्यकारी सारांश/ राष्ट्रीय कार्य योजना।ओटावाःकनाडा के आपूर्ति और सेवा मंत्री. 1993. पी. 5. (गूगलस्कॉलर)
2. http://www.nytimes-com/2012/…/avillage-rap-shatters-a-family-and-Indias-Traditionalsile
3. जोहान जी. हिंसा, शांति और शांति अनुसंधान।जे पीस रेस. 1969य 6:167–91. (गूगल ज्ञानी)
4. एंडरसन के.एल. लिंग निर्धारण पर बलपूर्वक नियंत्रण।महिला के विरुद्ध क्रुरता। 2009;15: 1144457. (पब मेड) (गूगल स्कॉलर)
5. मैरी सी. विकल्प बनाना। राजनीतिक लिंग. 2009; 5:426–31 (गूगल ज्ञानी)
6. पोली डब्ल्यू. नई हिंसाः ब्राजील के फेबलेस में महिलाओं के अनुभवों को शांत करना। जे लेट एम स्टड. 2011; 42: 719– 47 (गूगल ज्ञानी)
7. रिचर्ड एफ. हिंसा से महिलाओं की मानक सुरक्षा। सामाजिक मंच 2000;15: 91–116 (गूगल ज्ञानी)
8. हइज एल एल. महिलाओं के खिलाफ हिंसाः एक एकीकृत पारिस्थितिकी ढांचा महिला के विरुद्ध क्रुरता 1998; 4:262–90 (पबमेड) (गूगल स्कॉलर)
9. एंडरसन एस रेडी. भारत में लापता महिलाओं का आयु वितरण। इकोल पॉलिट वीकली। 2012;47: 47–48 (गूगल ज्ञानी)

10. भारत में अपराध 2013. अपराध आंकड़े। ख्अन्तिम बार 2017 जून 20 को एक्सेस किया गया, यहां उपलब्ध है। http://www.ncrb.nic.in/statpublications/CII/2013/statistics-2013.pdf
11. गिलीगन जे. हिंसा एक राष्ट्रीय महामारी पर विचार न्यूयॉर्कः एंकर बुक्सय 1996 (गूगल स्कॉलर)
12. कोएनिग एम ए, अहमद एस, हुसैन एमबी, खोरशेद आलम मजूमदार एबी। ग्रामीण बांग्लादेश में महिलाओं की स्थिति और घरेलू हिंसाय व्यक्तिगत और सामुदायिक स्तर पर प्रभाव जनसांख्यिकी। 2003ः 40ः 269— 88. (पबमेड) (गूगल स्कॉलर)
13. अग्रवाल बी. दक्षिण एशिया में लिंग और भूमि अधिकार। नई दिल्लीः कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस; 1994. (गूगल स्कॉलर)
14. अन्नान जे ब्रियर एम. वापसी का जोखिमःउत्तरी युगांडा के सशक्त संघर्ष में अंतर रंग साथी हिंसा। सामाजिक विज्ञान मेड. 2010; 70:15—29 (पबमेड) (गूगल स्कॉलर)
15. सेसिला एम.पूर्वी गौटेमाला में हिंसा और महिलाओं का जीवनः एक वैचारिक ढांचा। लैटएम रेस रेव. 2008;43ः 109—36 (गूगल ज्ञानी)
16. जेजीभोय एस. जे. पत्नी की पिटाई और भ्रूण एवं शिशु मृत्यु के बीच संबंधःग्रामीण भारत के एक सर्वेक्षण के प्रभाव। स्टड परिवार योजना; 1998;29:300—8 (पबमेड) (गूगल स्कॉलर)

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

दलित चेतना एवं दलित आन्दोलन की भूमिका : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डा0 प्रतिभा राज
एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ0प्र0)

दलित शब्द का शाब्दिक अर्थ है जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, शोषित, उत्पीड़ित, सताया हुआ, उपेक्षित, घृणित, हतोत्साहित आदि। दलित चेतना का पूरा चित्रण दलित आन्दोलन में समाहित है इसका सम्बंध सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से है। मूलतः भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था के आधार पर जो जातिगत बटवारा हुआ है यह पूर्णतः असमानता, वर्चस्व और शोषण पर आधारित है दलित कोई एक रूपीय समाज नही है इसकी अनेक परते है दलित आन्दोलन के पीछे दलित चेतना की प्रमुख भूमिका है क्योकि दलित चेतना से ही दलित स्वाभिमान जगता है और दलित अस्मिता की भावना बढ़ती है। इस अद्भुत सोच व चेतना का ही परिणाम है कि दलित अन्दोलन एक प्रमुख धारा बन चुका है आधुनिक शब्दो में आन्दोलन ही समाज का अल्ट्रासाउड है क्योकि सामाजिक मुद्दो की उजागर करना आन्दोलन का ही काम है।

दलित अथवा तथाकथित 'अस्पृश्य' चार–सूत्री वर्ण व्यवस्था पर आधारित परम्परागत हिन्दू समाज में सर्वाधिक निचला वर्ग था, जिसकी विकृति ने क्रूर जाति प्रथा को जन्म दिया। जो भी हो, आने वाले समय में दलितो की सामाजिक स्थिति इस सीमा तक नीचे चली गई कि उन्होने अपने को वर्णव्यवस्था से बाहर निकला पाया। परिणामस्वरूप, वे अवर्ण कहलाए, जिसका अर्थ वर्ण व्यवस्था से बाहर की सामाजिक मान्यता थी। इन लोगो को इस प्रकार चिहिंत किए जाने से उच्च जाति के लोगों के

मध्य अन्ततः अन्धविश्वास पैदा हुआ कि दलितो के साथ किसी भी प्रकार की अन्त क्रिया उन्हे अशुद्ध कर देगी। अतः धीरे–धीरे स्पश कभी कभी छाया, यहॉ तक कि दलित के स्वर को सुनने को उच्च जाति के हिन्दुओ के व्यक्त्वि को प्रदूषित करना माना जाने लगा। दूसरे शब्दो में समाज का एक बड़ा वर्ग होने के बावजूद समाज के अन्य वर्गो द्वारा दलितों के साथ ऐसा अमानवीय व्यवहार किया जाता था कि भारतीय समाज में अपनी स्थिति को सुधारने के लिए किसी प्रकार का सामाजिक आन्दोलन प्रारम्भ करने के अतिरिक्त अन्य कोई रास्ता नही बचा।

बिल्कुल प्रारम्भ से ही देश में दलित आन्दोलनों के कुछ विशिष्ट लक्षण दिखते है सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुद्दा, जिसने अधिकतम दलित आन्दोलन में केन्द्रिय भूमिका निभाई, वह अस्पृश्यता का मुद्दा था दूसरे शब्दो में, अस्पृश्यता का कंलक लोगो के लिए इतना अधिक असहनीय था कि उनका प्रारम्भिक संघर्ष अस्पृश्यता निवारण के मुद्दे तथा देश की सामाजिक धार्मिक संस्थाओं और जुलसों मे इन लोगो की सम्पूर्ण भागीदारी पर केन्द्रित था। दलितो की सामाजिक मुक्ति का वास्तविक परीक्षण मंदिर प्रवेश आंदोलन, जो देश के विभिन्न भागों में प्रारम्भ किया गया में परिलक्षित हुआ। बाद में औपनिवेशिक शासको की 'फूट डालो शासन करो' की नीति के कारण समाज के एक वर्ग को कुछ सुविधाऍ प्रदान करने और दूसरे को वहिष्कृत करने के कारण समाज के एक वर्ग को कुछ सुविधाऍ प्रदान करने और दूसरे को बहिस्कृत करने के कारण दलित आन्दोलन का केन्द्र सरकारी नौकरियो और राजनीतिक पदों को आरक्षण के द्वारा प्राप्त करने, बनाए रखने और कभी–कभी हिस्सेदारी को बढ़ाने की ओर केन्द्रित हो गया।

दलितो की सामाजिक स्थिति में सम्पूर्ण परिवर्तन लाने के उद्देश्य से कुछ मान्यता प्राप्त और सशक्त आन्दोलनों के उभरने के पूर्व ही इन लोगों के सामाजिक शोषण को अमान्य करने के सम्बंध में देश के समाज सुधारकों और संतो, द्वारा मत प्रकट किए जा चुके थे। उदाहरण के लिए रामानन्द, चैतन्य, कबीर, तुकाराम जैसे महान और धर्म निरपेक्ष संतो तथा भक्ति आनदोलन के प्रारम्भ होने पर अन्य लोगो के द्वारा जाति व्यवस्था के अन्तर्गत प्रचलित अमानवीय व्यवहार के विरूद्ध सुविचारित आलोचना प्रस्तुत की गई थी। जीवन के सांसारिक और आध्यात्मिक क्षेत्र में सभी मानवो की अन्तर्निहित समानता मे विश्वास प्रकट करते हुए उन्होने प्रचालित विकृत सामाजिक व्यवहार के विरूद्ध मत व्यक्त किया और ऐसी सामाजिक व्यवस्था के निर्माण का आह्वन किया जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को समानता और सम्माननीय होने का बोध हो।

आधुनिक समय में दलित आंदोलन का प्रारम्भ देश के विभिन्न भागो में सामाजिक धार्मिक आन्दोलनों के प्रारम्भ होने से हुआ। उदाहरण के लिए राजा राममोहन राय द्वारा स्थापित ब्रह्म समाज ने समाज में प्रचलित जाति आधारित असमानता के विरूद्ध मत प्रकट किया तथा समाज के कुछ वर्गो में व्याप्त जातिवाद और अस्पृश्यता की भावना पर आक्रमण किया। लेकिन इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रयास दयानंद सरस्वती द्वारा 1875 में आर्य समाज की स्थापना के साथ किए गए। अस्पृश्यता वर्ण–व्यवस्था का आवश्यक अंग नही है इस बात पर जोर देते हुए उन्होने समाज में प्रत्येक व्यक्ति की कार्य आधारित सामाजिक स्थिति के वितरण पर जोर दिया, जिसके परिणामस्वरूप एक ब्राह्मण शूद्र के रूप में प्रतीत हो सकता है और एक शूद्र ब्रह्मण के रूप में उन्नत हो सकता है अगर राज्य उन्हे ऐसा करने की इजाजत दे (विस्तार के लिए देखे 'जोर्डन्स', 1978)

1870 के दशक में महत्वपूर्ण ब्राह्मण विरोधी और अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन ज्योतिबा फुले के नेतृत्व में 'सत्यरोधक समाज' के रूप में प्रारम्भ हुए। स्वयं माली समाज से होने के कारण ज्योतिबा को अपने प्रारम्भिक जीवन में ब्राह्मणवादी अंहकार से उत्पन्न विभिन्न प्रकार के अपमान का सामना करना पड़ा, जिसने उनके भीतर विद्रोह तथा सुधार करने का भाव उत्पन्न किया। परिणामस्वरूप, हिन्दू सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत निम्न जातियो और अस्पृश्य सदस्यो के लिए गरिमापूर्ण तथा आदरपूर्ण स्थान प्राप्त करने के लिए उनके पास ऐसे लोगों के लिए समाज–सुधार आन्दोलन प्रारम्भ करने के अतिरिक्त और कोई रास्ता नही था। ज्योतिबा कांग्रेस नेतृत्व द्वारा भारतीय समाज में निम्न जातियो और अस्पृश्यों के लिए सम्मानजनक सामाजिक स्तर प्राप्त करने के लिए प्रयास की उपेक्षा के बड़े आलोचक थे। अतः उन्होने महाराष्ट्र में निम्न जाति के लोगो के सामाजिक स्तर में सुधार के लिए अनेक उपाय प्रारम्भ करने की योजना बनाई, जिसमें सब जातियों के लोगो की महिलाओं और बच्चो के लिए स्कूल और अनाथालय खोलना शामिल था।

अन्य महत्वपूर्ण अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन श्रीनारायण गुरू के नेतृत्व में श्रीनारायण धर्म परिपालना योगम् (एस0एन0डी0पी0) की स्थापना के साथ 1903 में इजावा अस्पृश्य जाति के द्वारा प्रारम्भ किया गया। इजावा समुदाय के रीतिरिवाजो और मानको के संस्कृतीकरण के उद्देश्य से एस0एन0डी0पी0 ने अस्पृश्यो की सामाजिक मुक्ति को प्राप्त करने के लिए दो सूत्री रणनीति को अपनाया। पहली, समुदाय के सामाजिक रीति–रिवाजो और परम्पराओ का संस्कृतीकरण करके इसने इजावा के नीचे वाली जातियों में अस्पृश्यता के व्यवहार को समाप्त करने का निश्चय किया। दूसरी, उच्च जाति के हिन्दुओ से समानता अनुभव करने के लिए इन्होने केरल में बहुत सारे मन्दिर बनवाए और सभी जाति के लोगो के उन्हे खोल दिया।

1920 का दशक देश के विभिन्न भागो में दलितो द्वारा व्यापक और गहन अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन चलाने का समय था। उदाहरण के लिए तमिलनाडु में अस्पृश्यों के विभिन्न समूहो द्वारा बहुत सारी गतिविधियॉ या तो प्रारम्भ की गई था उन्हे सशक्ते किया गया। इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण आन्दोलन

नाडार महाजन संघम का था। कई वर्षो में शानार या नाडार समुदाय के सदस्य कुछ मामलों में परम्परागत व्यवसाय को छोड़कर तथा कुछ ने उसी में बने रहकर अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने में सफलता प्राप्त की। एक प्रकार की आर्थिक समृद्धि प्राप्त करने के बाद इस समुदाय ने अपने मानकों और रीति–रिवाजो में संस्कृतीकरण के माध्यम से अपनी सामाजिक स्तर की उन्नति के मार्ग पर चलना प्रारंभ किया। अन्ततः नाडार महाजन संधम ने देश में राजनीतिक महत्व प्राप्त करने का ठोस प्रयास किया। जैसा कि हार्डग्रेव (1969 : 201) ने कहा, ''फिर भी सामुदायिक एकता के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करके तथा आधुनिक भारत की राजनीतिक गतिशीलता में जाति संगठन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।''

1920 के दशक के दौरान तमिलनाडु में दूसरा महत्वपूर्ण दलित आंदोलन रामास्वामी नायकर या पेरियार द्वारा संचालित किया गया। इसे आत्मसम्मान आन्दोलन कहते हुए पेरियार की मुख्य चिन्ता अस्पृश्यों के नीति–रिवाज और मानको के संस्कृतीकरण तक सीमित नही रही। अपितु उनका दृढ़ विश्वास था कि 'ब्राह्मणवादी हिन्दुवादी' की संरचना में अस्पृश्यों की स्थिति को सुधारा नही जा सकता। एक बार उन्होने सुप्रसिद्ध टिप्पणी की कि कुछ चीजे ऐसी होती है जिन्हे सुधारा नही जा सकता अपितु समाप्त किया जा सकता है। बाद के वर्षो में हिन्दू धर्म और हिन्दू जीवनशैली के सम्बंध में पेरियार की आलोचना बहुत तीखी हो गई। जस्टिस पार्टी के झंड़े तले उन्होने बहुत सारे सशक्त अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन शुरू किए, जिन्होने न केवल अस्पृश्यों के लिए उच्चतर सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक मान्यता का दावा किया अपितु अभी तक की प्रभुत्वशाली उच्च जाति के समुदायों के प्रति किसी भी प्रकार के बुरे व्यवहार को उचित ठहराया। उनका हिन्दू धर्म का बहिस्कार ब्राह्मणो के पवित्र धागे को काटने, देवताओ की मूर्तियो पर चप्पल फेकने तथा हिन्दू देवी देवताओं की मूर्तियों को तोड़ने तक बढ़ गया।

दक्षिणी राज्यो से दूर एक महत्वपूर्ण अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन इसी समय पंजाब में भी शुरू हुआ। राज्य के एक महत्वपूर्ण अस्पृश्य मूंग राम द्वारा संचालित आदि धर्म आन्दोलन के रूप में जाने गए इस आन्दोलन का उद्देश्य राज्य के अस्पृश्यो के रीति–रिवाजो और धार्मिक कर्मकाण्डो का संस्कृतीकरण करना था। आदि धर्म आन्दोलन इस विश्वास के साथ प्रारम्भ हुआ कि पंजाब के अस्पृश्य एक विशिष्ट सामाजिक, धार्मिक पहचान या जैसे हिन्दू मुसलमान और सिख के रूप में सदियो से अस्तित्व में है। अतः उन्हे विशिष्ट प्रकार के व्यवहार के लिए प्रयास करना चाहिए, जो समाज में उनकी सामाजिक धार्मिक तथा राजनीतिक स्थिति में सुधार ला सके। जैसा कि मार्क जुमेन्समायर (1982 : 80) ने संक्षेप में कहा, 'इसने एक तथ्य को स्थापित किया है जो पहले सिद्ध नही हुआ था अस्पृश्य जातियॉ अपने स्वयं के लाभ के लिए गतिशील होने तथा इस प्रकार संगठित होने, जो उन्हे व्यापक सामाजिक राजनीतिक स्रोत्रो में संचालित परिस्थितियों के अन्तर्गत प्रतियोगी होने का अवसर दे, में सक्षम है।''

धीरे–धीरे आने वाले समय में डॉ भीमराव अम्बेडकर जो अस्पृश्यों के अखिल भारतीय नेता के रूप में स्वीकृत थे, के नेतृत्व में महाराष्ट्र अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन का केन्द्र बनना प्रारम्भ हो गया। स्वंय अस्पृश्य जाति महार के होने उन्होने महाराष्ट्र में अस्पृश्यता को समाप्त करने के उद्देश्य से महार आन्दोलन प्रारम्भ किया । यद्यपि महार आन्दोलन को पर्याप्त सफलता मिली, पर इसके अनुभव ने अम्बेडकर को यह विश्वास दिलाया कि अपने भाइयो की स्थिति में सम्पूर्ण सुधार के लिए आन्दोलन को राजनीतिक स्वरूप दिया जाना चाहिए। अतः अम्बेडकर ने अस्पृश्यो के हितो के लिए संघर्ष करने के लिए स्वतन्त्र श्रमिक दल की स्थापना की।

1930 के दशक में दलित आन्दोलन में अम्बेडकर की नेता के रूप में स्वीकृति बढ़ी। बदले में अम्बेडकर ने दलितो को आह्वन करने 'तुम्हारे पास खोने के लिए अपने धर्म के अतिरिक्त कुछ नही है' जैसी घोषणाओं के साथ एक ओर अधिक सुदृढ़ कदम उठाने प्रारम्भ किये, तो दूसरी ओर दलितो के लिए

पृथक निर्वाचन मडंल की मॉग की। अम्बेडकर की ऐसी राय ने उन्हे महात्मा गॉधी, जो दलितो को किसी और धर्म में परिवर्तित करने के विचार के समर्थक नही थे और न देश में दलितो की स्थिति में ला दिया। अतः अम्बेडकर द्वारा की गई दलितो के लिए पृथक निर्वाचन मण्डल की मॉग के अनुकूल जब 1932 में साम्प्रदायिक पचांत की घोषणा की गई तब औपनिवेशिक सरकार द्वारा दलितों की स्वयं की मॉग पर ऐसे विभाजन कारी निर्णय के विरोध में गॉधी ने आमरण अनशन प्रारम्भ किया। परिणामस्वरूप गॉधी और अम्बेडकर के बीच एक समझौता हुआ, जिसमें सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों के अन्तर्गत दलितो के लिए स्थानो के आरक्षण का निर्णय लिया गया।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि भारत में दलित आन्दोलन सदियों तक शोषित रहे लोगो के वर्गो की सामाजिक मुक्ति की बढ़ती इच्छा के प्रतीक थे। प्रारम्भ में संस्कृतीकरण आन्दोलन के रूप में विकसित मुख्य रूप से देश के दक्षिणी और पश्चिमी भाग में दलित आन्दोलन ने शीघ्र ही आत्म सम्मान आन्दोलन का स्वरूप ग्रहण कर लिया जिसमें अपने लिए आर्थिक और राजनीतिक अधिकारो के साथ उन्होने सार्वजनिक धार्मिक तथा जीविका से सम्बंधित स्थानो और संसाधनो पर समान अधिकार की मॉग प्रारम्भ की। इस प्रकार स्वतन्त्रता के समय देश में दलित आन्दोलन, व्यापक राष्ट्रीय आन्दोलन में समाहित हो गया, जब अम्बेडकर संविधान निर्माण की प्रक्रिया में प्रमुख भागीदार तथा देश के लिए इस प्रकार का संविधान का प्रारूप बनाने, जो दलितो सहित भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग की स्वीकृति होगा के रूप में उभरे।

संदर्भ सूची–

1. चक्रवर्ती विधुत, पाण्डेय राजेन्द्र कुमार 2012. आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिंतन विचार व संदर्भ (अनु0) गीता चतुर्वेदी, रावत पब्लिकेशन, जयपुर,
2. माइकल, एस0एम0 2015.संपा0 आधुनिक भारत में दलित, दृष्टि एवं मूल्य, सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली,
3. प्रो0 अगनेलाल, डॉ0 राहुल राज, 2011. उत्तर प्रदेश में दलित आन्दोलन, गौतम बुक सेन्टर, दिल्ली,
4. दुबे, अभय कुमार, 2005. आधुनिकता के आइने में दलित, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
5. चन्द्रा, आर0, कन्हैयालाल चंचरिक 2003.आधुनिक भारत का दलित आन्दोलन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली,
6. रणसुभे, डॉ0 सूर्यनारायण 2012. (संपा0) दलित चेतना की पहचान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
7. नैमिशराय, मोहनदास 2017. भारतीय दलित आन्दोलन का इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली
8. भूषण, डॉ0 मुकेश 2010. दलितो का इतिहास, अतीत एवं वर्तमान के आइने में, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

ग्रामीण समाज की महिलाओं में स्वास्थ्य शिक्षा एवं उपचार सम्बन्धी चेतना : (धन्नेपुर ग्राम सभा का अध्ययन)

डॉ0 संदीप कुमार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
बयालसी पी0जी0 कालेज, जलालपुर, जौनपुर

सारांशः–

ग्रामीण समाज की महिलाओं में स्वास्थ्य शिक्षा एवं उपचार सम्बन्धी चेतना जानने के लिए धन्नेपुर ग्रामसभा का अध्ययन सुविधापूर्ण निदर्शन पद्धति के द्वारा किया गया है, धन्नेपुर एक मध्यम आकार का गाँव है, जो कि जौनपुर जिले के सदर तहसील के अन्तर्गत आता है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ 345 परिवार रहते हैं इस ग्राम सभा की जनसंख्या लगभग 1910 है। जिसमें 1053 पुरूष एवं 857 महिलाएं है। आँकड़ों का संकलन 40 परिवारों की महिलाओं से प्रत्यक्ष साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से किया गया है। अध्ययन से पता चला कि सर्वाधिक बीमार होने की स्थिति में ग्रामीण महिलाएं इलाज के लिए अस्तपाल जाती है। अतः वे अपने स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही बरतती हैं।

शब्द कुंजीः– महिलाएं, स्वास्थ्य, उपचार, पोषण, शिक्षा।

प्रस्तावनाः–

किसी भी सामाजिक संरचना में दो वर्ग होते है, महिला और पुरूष। भारत एक पुरूष प्रधान देश है। अतः यहाँ समाज में महिलाओं को पुरूषों की अपेक्षा निम्न दर्जा प्राप्त है। अतः उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य पोषण व देखरेख जैसी आधारभूत सुविधाओं से भी वंचित रखा जाता है। इसका विपरीत प्रभाव उनके स्वास्थ्य पर पड़ता है। महिलाओं की स्वास्थ्य को तभी अहमियत दी जाती है जब वह गर्भवती होती है। इसलिए महिलाओं को उनके स्वास्थ्य के प्रति सचेत करने के लिए स्वास्थ्य शिक्षा पर विचार करना आवश्यक है। स्वास्थ्य शिक्षा से तात्पर्य लोगों को स्वास्थ्य के प्रति जागरूक करना है। इसलिए प्रस्तुत अध्ययन में ग्रामीण समाज की महिलाओं में स्वास्थ्य एवं उपचार सम्बन्धी चेतना के विषय में जानने का प्रयास किया गया है।

हमारे समाज में आज भी अनेको महिलायें अपने स्वास्थ्य को लेकर उपेक्षा की शिकार हैं। स्वास्थ्य केन्द्रों का उपलब्ध न होना भी स्वास्थ्य के लिए प्रतिकूल परिस्थिति पैदा करता है। महिलाओं को बर्दाश्त (सहन) करने की शिक्षा घर परिवार के सदस्यों के द्वारा ही दी जाती है। अतः महिलायें डाक्टर के पास तभी जाती है जब स्थिति बर्दाश्त के बाहर हो जाती है। सम्पूर्ण विश्व में स्वास्थ्य के प्रति सजगता और जागृति के उद्देश्य से 7 अप्रैल को विश्व स्वास्थ्य दिवस मनाया जाता है लेकिन स्वास्थ्य दिवस की सार्थकता केवल तभी है जब समाज की केन्द्रीय इकाई महिला और बच्चे स्वस्थ हों। महिलाओं में मुख्य रूप से निम्नलिखित बिमारिया पाई जाती हैं।

(1) बुखार और सामान्य इन्फेक्शन
(2) श्वास सम्बन्धी संक्रमण
(3) मोतियाबिन्द
(4) खून की कमी
(5) गर्भावस्था की समस्यायें
(6) कुपोषण

(7) पीठ में दर्द
(8) जनन सम्बधी समस्यायें
(9) उक्त रक्तचाप

इन बिमारियों से होने वाले खतरों के बारे में जानते हुये भी अपने इलाज में लापरवाही बरतने वाली औरतों का प्रतिशत सबसे ज्यादा है। यह तथ्य पूर्ण रूप से सत्य है कि महिलायें पूरे समाज तथा पूरे परिवार का महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ हैं, अतः उन्हे पूरी तरह से स्वस्थ रखना समाज की महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है।

साहित्य समीक्षा

हमारे देश में महिलाओं के स्वास्थ्य से सम्बन्धित अनेक अध्ययन हुये हैं परन्तु महिलाओं में स्वास्थ्य शिक्षा से सम्बन्धित शोध कार्यों की अत्यन्त कमी है। इस विषय पर कुछ प्रमुख अध्ययन निम्न है।

''मीरा मिश्र''– ने अपने अध्ययन में बताया कि ज्यादातर महिलाओं का वनज एवं लम्बाई कम होती है और उनममें खून की कमी होती है जिसके परिणामस्वरूप वे कमजोर बच्चों को जन्म देती हैं और स्वयं भी कुपोषण का शिकार हो जाती हैं।

''शुभांकर बनर्जी''– ने अपने अध्ययन में बताया कि सामाजिक विकास के बावजूद आज भी ऐसी करोड़ों महिलायें हैं जो अपनी अनेक सामाजिक आर्थिक मानसिक असमर्थता के कारण मजबूर होकर कुपोषित हैं।

''ए0एल0 श्रीवास्तव''– ने बताया कि विभिन्न प्रकार के रोग वातावरण से व्यक्ति अथवा स्त्री को मिलते हैं और नारी उपचार एवं निदान में समाज में मनोवैज्ञानिक कारकों को विशेष महत्व प्रदान किया जाने लगा है।

''मंजूलता छिल्लर''– ने बताया कि आजादी के इतने वर्ष बाद भी महिलाओं के प्रति समाज में ज्यादा बदलाव नहीं आया है और आज भी महिलाओं के स्वास्थ्य और सेहत को लेकर लापरवाही बरती जाती है।

अध्ययन का उद्देश्यः–

(1) ग्रामीण महिलाओं में स्वास्थ्य सम्बन्धी जागरूकता लाना
(2) ग्रामीण महिलाओं में स्वयं के प्रति उपचारात्मक दृष्टिकोण का अध्ययन करना।

शोध प्रविधिः–

अध्ययन के लिए हमने जौनपुर जनपद के सदर तहसील के अन्तर्गत आने वाले एक ग्राम सभा धन्नेपुर का चुनाव सुविधापूर्ण निदर्शन पद्धति के द्वारा किया है। प्रस्तुत अध्ययन में 50 ग्रामीण महिलाओं को शामिल किया गया है जिनकी आयु क्रमशः 20 वर्ष से 50 वर्ष तक है, आकड़ों के संकलन के लिए साक्षात्कार अनुसूची व अवलोकन पद्धति का प्रयोग किया गया है तथा द्वितीयक तथ्यों के लिए शोध पत्र–पत्रिकाएं, पुस्तक व इण्टरनेट का प्रयोग किया गया है।

सारणी संख्या–1.1

उत्तरदात्रियों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता

क्रमांक	स्वास्थ्य के प्रतिजागरूकता	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	20	40
2	न्हीं	30	60
	योग–	**50**	**100**

सारणी संख्या–1.1 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि 60 प्रतिशत महिलाएं स्वास्थ्य के प्रति जागरूक नहीं हैं बल्कि 40 प्रतिशत महिलाएं ऐसी हैं जो अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक हैं, इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रामीण क्षेत्र में महिलाएं अपने स्वास्थ्य के प्रति कम जागरूक हैं।

सारणी संख्या : 1.2

बीमार पड़ने पर सूचनादात्रियों द्वारा किये गये उपचार का प्रकार

क्रमांक	बीमार पड़ने पर किये गये उपचार का प्रकार	आवृत्ति	प्रतिशत
1	घरेलू उपचार	10	20
2	डाक्टर को बताकर घर पर दवा मंगवा लेती है।	20	40
3	अस्पताल जाती है।	15	30
4	अन्य उपाय	5	10
	योग–	**50**	**100**

सारणी संख्या–1.2 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं बीमार पड़ने पर घर पर ही दवा मंगवा लेती हैं। डाक्टर को बताकर, जबकि 20 प्रतिशत महिलाएं घर पर ही पहले अपना इलाज करती है घरेलू नुस्खों से और 30 प्रतिशत महिलाएं ऐसी हैं, जो बीमार पड़ने पर अस्पताल जाती हैं और 10 प्रतिशत महिलाएं अन्य उपायों का सहारा लेती हैं। अतः उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि ज्यादातर ग्रामीण महिलाएं बीमार पड़ने पर घर पर ही परिवार के किसी सदस्य से दवा मंगवा लेती हैं।

सारणी संख्या : 1.3

उत्तरदात्रियों में बीमारी के कारण के प्रति अभिवृद्धि

क्रमांक	बीमारी का कारण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	काम की अधिकता	25	50
2	असंतुलित खान–पान	15	30
3	पोषक तत्वों की कमी	05	10
4	अन्य कारण	05	10
	योग–	**50**	**100**

सारणी संख्याः 1.3 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकतम 50 प्रतिशत महिला उत्तरदात्रियां बीमारी का कारण काम की अधिकता को मानती हैं। 30 प्रतिशत असंतुलित खान–पान को मानती हैं तथा 10 प्रतिशत महिलाएं अन्य कारणों को मानती हैं। इस प्रकार ज्यादातर महिलाओं की बीमारी का कारण काम की अधिकता है।

सारणी संख्या : 1.4

उत्तरदात्रियों में इलाज के प्रति अभिवृत्ति

क्रमांक	इलाज के प्रति अभिवृत्ति	आवृत्ति	प्रतिशत
1	बच्चों से हाथ पैर व कमर दबवाती हैं।	25	50
2	डाक्टर के पास जाती हैं।	15	30

3	सिंकाई करती हैं।	05	10
4	अन्य उपाय	05	10
	योग–	**50**	**100**

सारणी संख्याः 1.4 के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अधिकांश 50 प्रतिशत महिलाएं सिर दर्द, कमर दर्द एवं बीमार होने पर बच्चों से हाथ, पैर, कमर दबवाती हैं, 30 प्रतिशत महिलाएं इलाज के लिए डाक्टर के पास जाती हैं, 10 प्रतिशत महिलाएं सिंकाई करवाती हैं एवं 10 प्रतिशत महिलाएं अन्य उपायों से अपना इलाज करवाती हैं। इस प्रकार अधिकांश महिलाएं घर पर ही अपना इलाज करती हैं।

निष्कर्षः–

निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं कि धन्नेपुर ग्राम सभा की महिलाएं स्वास्थ्य के प्रति कम जागरूक हैं, वे अपने स्वास्थ्य, पोषण एवं देखभाल के प्रति सक्रिय नहीं हैं। इसका मूल कारण अज्ञानता है जो उन्हें आज भी रूढ़िवादी परम्पराओं से बाहर निकलने नहीं देता। ग्रामीण क्षेत्र में चिकित्सा सुविधाओं का अभाव भी इसका कारण हो सकता है और महिला डाक्टर का अभाव भी इनका अस्पताल न जाने का कारण हो सकता है, ये लम्बे समय तक किसी बड़ी बिमारी का इलाज भी नहीं करवा पाती इसलिए दिन–प्रतिदिन इनकी कार्य क्षमता कम होती जाती है।

इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं अपने स्वास्थ्य के प्रति सजग नहीं रहती हैं। ये काम की अधिकता के कारण अस्वस्थ रहती हैं तथा अधिक बीमार होने पर ही अस्पताल जाती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. चतुर्थ विश्व महिला सम्मेलन बीजिंग, 1995, पृ. 84
2. छिल्लर मंजूलता, 'भारतीय नारी : शोषण के बदलते आयाम', वर्ष 2010
3. बनर्जी, शुभांकर, महिला कुपोषण : एक राष्ट्रीय समस्या, कुरूक्षेत्र, वर्ष 61, अंक 2, दिसम्बर 2005, पृ. 36–38
4. बरेली, उ.प्र., समाज विज्ञान संस्थान, राधाकमल मुखर्जी : चिंतन परंपरा, वर्ष 19, अंक–2, जुलाई–दिसम्बर, 2017
5. मिश्रा, मीरा, कुपोषण की रोकथाम : महिला स्वास्थ्य की भूमिका, योजना, वर्ष 60, अंक–2, फरवरी 2016, न्यू दिल्ली, पृ. 40–42
6. विश्व स्वास्थ्य संगठन, द वर्ल्ड हैल्थ रिपाटर्अ, 2016 जिनेवा, डब्लू.एच.ओ., 2016
7. श्रीवास्तव, अखिलेश्वर लाल, चिकित्सा सामाजिक विज्ञान की रूपरेखा, उ.प्र. हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

भारतीय ग्रामीण समाज में व्यावसायिक गतिशीलता का विकास

डॉ. सन्तराम पाल
सहायक प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग,
आचार्य नरेंद्र देव किसान, पी.जी. कालेज ,बभनान, गोंडा (उ.प्र.)

सारांश–

वर्तमान भारत बंद समाज–व्यवस्था से खुले समाज–व्यवस्था की ओर तीव्र गति से अग्रसर है; ऐसे में गतिशीलता का बनना स्वाभाविक है। जैसे–जैसे विकास की दर तीव्र होगी, उदारीकरण व विश्वव्यापरीकरण बढ़ेगा, वैसे–वैसे खुलापन भी बढ़ता जायेगा और सामाजिक गतिशीलता के अवरोध भी समाप्त होते जायेंगे। जजमानी व्यवस्था के अवक्रमित होने के कारण पारम्परिक भारतीय ग्रामीण व्यवस्था की न केवल आत्मनिर्भरता कमजोर हुई अपितु जजमानी व्यवस्था के अधीन जीवन–यापन करने वाली अनेक जातियों जैसे– धोबी, तेली, बढ़ई, लुहार, इत्यादि के समक्ष पारिवारिक भरण–पोषण की विकट समस्या उत्पन्न हो गयी। इन बदली हुई परिस्थितियों में ये सेवा–प्रदायी जातियां अंततः बाज़ार के माध्यम से अपने पुश्तैनी पेशे से आजीविका अर्जित करने को विवश हो गयीं। इनके कल्याण के लिए और इन्हें मुख्यधारा के उपलब्ध अवसरों से लाभान्वित होने लायक बनाने का दायित्व भले ही राज्य का है। किन्तु, तकनीकी विकास एवं वैश्विक सम्पर्क ने सम्पूर्ण भारतीय ग्रामीण व्यवस्था को सामाजिक व्यावसायिक गतिशीलता की ओर उन्मुखित कर दिया है। जाति व्यवस्था का स्वरूप ऐसा है कि उसमें गतिशीलता की संभावना ही नहीं बनती है। आज, भारत में जाति व्यवस्था में जो गतिशीलता दिखाई देती है वह गतिशीलता जाति–व्यवस्था में नहीं बल्कि वह मुख्य रूप से वर्ग–व्यवस्था में है। आधुनिक भारत में जाति–व्यवस्था पर वर्ग–व्यवस्था अध्यारोपित हो गयी है। ये परिवर्तन उसी अध्यारोपित वर्ग–व्यवस्था में हो रहा है जिसे अधिकांश मानवशास्त्री व समाजशास्त्री गतिशीलता के रूप में विश्लेषित करते हैं। अंग्रेजों के शासनकाल में भारतीय सामाजिक स्तरीकरण में धीरे–धीरे परिवर्तन आने लगा। उन्होंने नयी शिक्षा–नीति, नयी प्रशासनिक–व्यवस्था, नयी कानूनी–व्यवस्था, जैसी अनेक नवीन व्यवस्थाओं को भारत में लागू किया। उनके सारे नियम कानून व जीवन के मूल्य काफी हद तक सामाजिक समानता के मूल्य पर आधारित थे। अतः पश्चिमीकरण के कारण भारत में क्रांतिकारी व युगान्तकारी परिवर्तन आया। पश्चिमी मूल्यों के कारण ही भारतीय समाज जो कि जातिमूलक समाज था वर्ग–व्यवस्था से प्रभावित होकर खुलेपन की व्यवस्था को अपनाने लगा है।

बीज शब्द : ग्रामीण, समाज, व्यावसायिक, गतिशीलता, वर्ग–व्यवस्था, जाति–व्यवस्था

जाति–व्यवस्था आधारित भारतीय समाज अपनी इस अद्वितीय विशेषता के कारण सदा से विद्वानों का ध्यानाकर्षण किया है। **मजूमदार**[1]के अनुसार जाति एक बंद–व्यवस्था है जिसके कारण भारतीय समाज में गतिशीलता बाधित होती रही है। **बेरमेन और जानसन**[2] ने भारतीय समाज को बंद समाज का कठोर उदाहरण माना है क्योंकि जाति व्यवस्था के अंतर्गत व्यक्ति को पूरे जीवन भर एक ही सामाजिक स्थिति में रहना पड़ता है अर्थात् किसी व्यक्ति अथवा समूह को अपनी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन के न्यूनतम अवसर उपलब्ध होते हैं। जबकि, वर्ग–व्यवस्था पर आधारित समाज खुली–व्यवस्था के द्योतक हैं; उदहारण के लिए अमेरिकी एवं अन्य पश्चिमी समाज। ऐसे समाजों में व्यक्ति व समूह को अपनी सामाजिक स्थिति में परिवर्तन करने के अधिकतम अवसर उपलब्ध होते हैं। **जानसन**[3] का मानना है कि बंद व खुले समाज की अवधारणा एक सैद्धांतिक द्विध्रुवीय विभाजन व्यक्त करता है क्योंकि न तो भारतीय समाज पूरी तरह बंद–व्यवस्था

वाला समाज है और न ही अमेरिकी समाज पूरी तरह खुली–व्यवस्था वाला समाज है। बंद–समाज की कुछ विशेषतायें अमेरिकी समाज यानी खुली–व्यवस्था वाले समाज में देखने को मिलती है, तो खुले–समाज की कुछ विशेषतायें भारतीय समाज यानी बंद–व्यवस्था वाले समाज में भी देखने को मिलती हैं।

प्राचीन भारतीय समाज वर्ण–व्यवस्था पर आधारित था तब निश्चित रूप से इसमें खुलापन भी था। पूर्व–वैदिक काल में योग्यता, उपलब्धियां व गुणों के आधार पर व्यक्तियों के वर्ण में परिवर्तन दृष्टिगोचर होता था। समाज के बंटवारे के आधार और समाज के स्तर कठोर नहीं थे। उत्तर–वैदिक काल से लेकर लगभग19वीं सदी के पूर्वान्ह तक भारतीय समाज को बंद–समाज का सबसे सटीक उदाहरण माना जा सकता है। क्योंकि इस कालखंड में समाज जाति–व्यवस्था से इतना ग्रसित था कि सामाजिक गतिशीलता नगण्य थी। निम्न–जाति का व्यक्ति ऊँची–जाति की सामाजिक हैसियत और सम्मान को नहीं पा सकता था। भारतीय समाज में इस जड़ता व कठोरता का कारण मात्र ब्राह्मणवादी हिन्दू दर्शन ही नहीं था बल्कि इस्लामी समाज के साथ संसर्ग भी था। मुस्लिम शासन काल में भारतीय समाज की जड़ता को काफी बढ़ावा मिला। यह सही हैकि इस्लामी समाज समानता पर आधारित है लेकिन इस्लाम को मानने वालों का अपने व गैर–महजबों के प्रति ऐसा ख्याल व व्यवहार रहा कि प्रतिक्रिया स्वरूप हिन्दूसमाजमें काफी जड़ता आ गयी।

जाति व्यवस्था का स्वरूपऐसा है कि उसमें गतिशीलता की संभावना ही नहीं बनती है।आज,भारतमेंजाति व्यवस्था में जो गतिशीलता दिखाई देती है वह गतिशीलता जाति व्यवस्था में नहीं बल्कि वह मुख्य रूप से वर्ग–व्यवस्था में है। आधुनिक भारत में जाति व्यवस्था पर वर्ग–व्यवस्था अध्यारोपित हो गयी है। ये परिवर्तन उसी अध्यारोपित वर्ग–व्यवस्था में हो रहा है जिसे अधिकांश मानवशास्त्री व समाजशास्त्री गतिशीलता के रूप में विश्लेषित करते हैं। अंग्रेजों के शासनकालमें भारतीय सामाजिक स्तरीकरण में धीरे–धीरे परिवर्तन आने लगा। उन्होंने नयी शिक्षा–नीति,नयी प्रशासनिक–व्यवस्था, नयी कानूनी–व्यवस्था, जैसी अनेक नवीन व्यवस्थाओं को भारत में लागू किया। उनके सारे नियम कानून व जीवन के मूल्य काफी हद तक सामाजिक समानता के मूल्य पर आधारित थे। अतः पश्चिमीकरण के कारण भारत में क्रांतिकारी व युगान्तकारी परिवर्तन आया। पश्चिमी मूल्यों के कारण ही भारतीय समाज जो कि जातिमूलक समाज था वर्ग–व्यवस्था से प्रभावित होकर खुलेपन की व्यवस्था को अपनाने लगा।

सन् 1950 में गणतंत्र की स्थापना के बाद भारत नये संविधान के आलोक में समतामूलक समाज की ओर बढ़ने लगा। भारत के इतिहास में यह काल विशेष महत्व रखता है क्योंकि संविधान के अंतर्गत हर व्यक्ति को बढ़ने का समान अवसर मिला। मौलिक अधिकारों की बात की गयी ताकि प्रत्येक नागरिक अपनी योग्यता, गुण व परिश्रम के आधार पर समाज में आगे बढ़ सके। समकालीन भारत में औद्योगिकीकरण, नगरीकरण, आधुनिकीकरण एवं नयी वैधानिक व्यवस्था ने समेकित रूप से जाति–व्यवस्था पर गहरा आघात किया है। कार्यस्थल, विद्यालय व महाविद्यालय में,उद्योग एवं कारखानों तथा सार्वजानिक जीवन में सभी उच्च व निम्न–जाति के लोग समानरूप से सहभागिता कर रहे हैं। जाति की महत्वपूर्ण विशेषता अंतर्विवाह, अंतर्जातीय विवाहों के कारण खत्म हो रही है। **एम.एन.श्रीनिवास**[4] द्वारा प्रस्तुत संस्कृ तिकरण की अवधारणा सामूहिक गतिशीलता को निर्धारित कर रही है। संस्कृतिकरण का अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा निम्न–जातीय व जनजातीय लोग, उच्च जातियों कीजीवनशैली, मूल्य व विचारधारा का अनुसरण कर समाज के उच्चस्तर में पहुंचने का दावा करने लग जाते हैं।

परम्परागत भारतीय ग्रामीण–समाज की व्यवस्था अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की दृष्टि से प्रायः आत्मनिर्भर रहा है क्योंकि पारम्परिक ग्रामीण समाज जजमानी व्यवस्था पर संचालित होता रहा है। जजमानी व्यवस्था भारतीय ग्रामीण समाज की एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें समाज की सभी जातियाँ पारस्परिक सेवा

के माध्यम से सहयोग करती हैं जिससे सम्पूर्ण समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहती है। इस प्रकार सम्पूर्ण समुदाय में आत्मनिर्भरता बनी रहती हैं। जजमानी व्यवस्था की पृष्ठभूमि में जाति–प्रथा और कृषि आधारित जीवनशैली महत्वपूर्ण रही है। जजमानी व्यवस्था का अध्ययन **विलियम वाइजर**[5](The Hindu Jajmani System), **आस्कर लेविस**[6](Village Life in Nothern India), **एस.सी.दूबे**[7](Indian Village) इत्यादि विद्वानों द्वारा किया गया। जजमानी व्यवस्था में सेवाओं का आदान–प्रदान परम्पराओं के आधार पर पारस्परिकता में किया जाता है। इसमें सेवा देने वाली जातियों को 'कमीन' और सेवा प्राप्त करने वाली जातियों को 'जजमान' कहा जाता है। सर्वाधिक मात्रा में सेवा के बदले सामान के लेन–देन का प्रचलन पाया जाता है जिसे 'तिहाई' कहा जाता है। तिहाई के अतिरिक्त सामयिक खाद्य पदार्थ जैसे–आलू, प्याज, मटर, आम, नीबू इत्यादि का भी लेन–देन होता रहा है। सेवा के बदले सेवा के विनिमय का सम्बन्ध प्रायः कमीन जातियों के मध्य पाया जाता है और सेवा के बदले मुद्रा का चलन प्रायः सामाजिक प्रभाव जमाने के लिए उच्च जातियों और उन सक्षमता और जजमानों के द्वारा किया जाता है जो निवास तो गाँव में करती हैं किन्तु उनके पास आय के निश्चित स्रोत उपलब्ध होते हैं। जजमानी व्यवस्था ग्रामीण भारतीय समाज में लम्बे समय तक प्रचलन में प्रभावी रही है।

जजमानी व्यवस्था की कमीन जातियों को जजमानी व्यवस्था के अनुसार तिहाई, नकदी व सेवा के रूप में समाज से इनको जीवन–यापन की आवश्यक सुविधाएँ प्राप्त होती रहती हैं। किन्तु, परिवर्तन के प्रभावस्वरूप ग्रामीण जीवन व्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने वाली जजमानी व्यवस्था धीरे–धीरे समाप्त होने लगी है। अनेक गाँवों में यह लगभग समाप्त हो चुकी है। कुछेक गांवों में आंशिक रूप से प्रचलन में बनी हुई है। जजमानी व्यवस्था के प्रभावहीन होने के पीछे अनेक कारणों को उत्तरदायी माना जाता है जिसमें नगरीकरण, आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण इत्यादि प्रक्रियाओं के साथ–साथ वैज्ञानिक व तकनीकी उन्नति का बढ़ता प्रभाव, नवीन शिक्षा–प्रणाली से उपजी तार्किक व खुली सोच, सूचना–तकनीकि के चलते सुगम व सार्वत्रिक पहुँच, ग्राम–समुदाय की बढ़ती आबादी और तदनुरूप बढती हुयी उनकी आवश्यकताओं ने मुद्रा की माँग को उच्चतम स्तर तक बढ़ा दिया। इस अपेक्षा को पूरा करने में असफल रहने के कारण जजमानी व्यवस्था असफल होने लगी और इस व्यवस्था को बाजारी शक्तियों ने लगभग जीर्ण–शीर्ण बना दिया। इस प्रकार कमीन जातियाँ जो प्रायः भूमिहीन होती **है**। साथ ही, कृषि–कौशल तथा कृषिक–रुचि से विहीन होती है, बाध्य होकर बाज़ार की शरण में जाने लगी। उपरोक्त तथ्यों के आलोक में ग्रामीण–समाज की व्यावसायिक गतिशीलता का अध्ययन समीचीन है। व्यावसायिक गतिशीलता व्यक्तिगत या सामूहिक व्यावसायिक स्थिति में परिवर्तन को संदर्भित करता है लिपसेट और बेण्डिक्ट के मत में, "व्यावसायिक गतिशीलता ने सामाजिक गतिशीलता में वृद्धि किया है। सामाजिक गतिशीलता सामाजिक जीवन में होने वाले उस स्थानान्तरण की प्रक्रिया से सम्बन्धित है, जिसके अन्तर्गत समाज का एक सदस्य एक पद से दूसरे पद अथवा एक स्थान या पेशे से दूसरे स्थान या पेशे को अपनाने की ओर अग्रसर होता है।

परम्परागत भारतीय ग्रामीण–समाज की व्यावसायिक गतिशीलता के यथार्थ को जानने के लिए ग्रामीण व्यावसायिक संरचना की स्थिति, ग्रामीण व्यवसाय से प्राप्त आय, कृषि कार्य में संलग्नता से पारिवारिक भरण–पोषण की स्थिति, कृषि अधिष्ठित कुटीर एवं लघु उद्यमों की व्यावसायिक स्थिति, ग्रामीण समाज में व्यवसाय सम्बन्धी तकनीकी पहलू, ग्रामीण उत्पादों के रख–रखाव एवं वितरण की व्यवस्था, ग्रामीण रोजगार से परिवार का भरण–पोषण, पारिवारिक व्यवसाय के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों की ओर पलायन इत्यादि के तथ्यों की जाँच से ज्ञात होता है कि नवीन तकनीकी एवं वैज्ञानिक विकास की शक्तियों ने बाज़ार की माँग एवं पूर्ति के पारंपरिक ढाँचे को आमूलचूल परिवर्तित कर दिया हैं। तदनुरूप, ग्रामीणों की बढती आबादी और उनकी नव सृजित अपेक्षाओं के आलोक में बाज़ार के अधीन उनकी पूर्ति के क्रम में

व्यावसायिक गतिशीलता एक ज्वलंत पक्ष बनकर उभरा है। व्यावसायिक गतिशीलता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सरकारी योजनाओं के ढाँचे में कौशल विकास मिशन, किसान क्रेडिट कार्ड, पशुपालन, मछलीपालन, मुर्गीपालन जैसे कार्यक्रमों को समायोजित किया जा रहा है जिससे स्वरोजगार को प्रोत्साहित करने के लिए अनुकूल वातावरण का सृजन किया जा सके।

सामाजिक गतिशीलता प्रादेशिक, क्षेत्रीय व स्थानीय स्तर पर असमान है; परंतु कोई भी क्षेत्र इससे अछूता नहीं है। उदाहरण के लिए गाँव की तुलना में शहरी क्षेत्रों में गतिशीलता अधिक तीव्र देखी जा सकती है। शहरों में लोग अब जाति की उच्चता पर उतना विचार न कर व्यक्ति के पद या व्यवसाय अथवा निजी परिलब्धि के आधार पर समाज में उनकी स्थिति के बारे में विचार करते हैं। इस प्रकार के खुलेपन को**जेम्स सिल्वरबर्ग**[8] ने भी अपने अध्ययनों में स्वीकार किया है। उसके अनुसार भारत अब बन्द–समाज नहीं रह गया है। यह सत्य है कि पाश्चात्य देशों की तुलना में यहाँ गतिशीलता कम है परन्तु उसकी तुलना इस देश के किसी भी ऐतिहासिक काल से नहीं की जा सकती। भारतीय समाज में गतिशीलता के प्रमुख निर्धारक तत्व इस प्रकार हैं।

(1) अंग्रेजों के आगमन के साथ यहाँ औद्योगिकीरण की प्रक्रिया आरंभ हुई। नये पेशे उत्पन्न हुए जो जाति–व्यवस्था के मूल में नहीं थे। इन पेशों के लिए योग्यता के आधार पर लोगों का चयन किया जाने लगा फलतः जाति व पेशे का परंपरागत सम्बन्ध विखर गया। अब परम्परा से निम्नतर किन्तु लाभकारी समझे जाने वाले व्यवसायों को पारंपरिक तौर पर उच्च समझी जाने वाली जातियां प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से अपनाने लगी हैं।

(2) नगरीकरण के विस्तार के साथ–साथ संचार व यातायात साधन बढ़े। विभिन्न जाति व धर्म के लोग एक जगह रहने लगे। लोग एक साथ यात्रा करने लगे। लोगों के बीच की सामाजिक दूरी खत्म होने लगी। शहरी क्षेत्रों में वर्ग–व्यवस्था की स्थापना होने लगी और वर्ग–व्यवस्था जाति व्यवस्था पर आध्यारोपित होने लगी।

(3) आधुनिक शिक्षा का आधार तार्किक–वैज्ञानि चिंतन है। अतः इसके द्वारा समतामूलक एवं विकासोन्मुखी समाज को बढ़ाव मिलना स्वाभाविक है। योगेन्द्र सिंह का मत है कि शिक्षा भारत में आधुनिकीकरण के सर्वाधिक महत्वर्पूण साधनों में से एक है। शिक्षा ने जनता की राष्ट्रवाद, उदारता एवं स्वतंत्रता जैसी आकांक्षाओं को गतिशील किया। भारत में शिक्षा ने विद्यार्थियों की एक उपसंस्कृति का निर्माण किया जो पूरी तरीके से आधुनिक तो नहीं है परंतु परंपरा से आधुनिकता के संक्रमण को दर्शाती है ।

(4) भारत में कानूनी व संवैधानिक प्रयासों ने भी गतिशीलता को प्रेरित किया है। अश्पृश्यता को सन्1955 में कानूनी रूप से समाप्त कर दिया गया। जाति, धर्म, लिंग व जन्म स्थान के भेदभाव को संविधान ने गैर–कानूनी ठहरा दिया। दलितों व पिछड़ों को आरक्षण का लाभ देकर उन्हें भी विकास की मुख्यधारा में सम्मिलित होने का अवसर दिया है।

(5) पश्चिमीकरण की प्रक्रिया के कारण यहाँ गतिशीलता तीव्र हुई क्योंकि पश्चिमी मूल्य काफी हद तक समतावादी व प्रजातांत्रिक रहे। संस्कृतिकरण की प्रक्रिया के माध्यम से जातीय गतिशीलता संभव हो सकी। संस्कृतिकरण की अवधारणा ने जातिगत सोपान में उच्चजातियों व निम्न जातियों के बीच की दूरी को कम करके उन्हें गतिशील होने का अवसर दिया है। इस प्रक्रिया के माध्यम से निम्न जातियां समाज के उच्च स्तर में पहुंचने का प्रयास करती है।

(6) समाज में मुद्रा–व्यवस्था के स्थापित होने से विनिमय की सहजता व स्वीकार्यता में वृद्धि हुई; फलतः नकदी कमाने की प्रवृत्ति को बल मिला है। जो अंततः जीवनयापन के तरीकों को अन्य व्यावसायिक

विकल्पों से विस्थापित किया। समाज में पारस्परिक निर्भरता बढ़ने लगी और आत्मनिर्भरता कम होने लगी। आवश्यकतापूर्ति की इस कड़ी में नवीन व्यवसायों का जन्म हुआ।

वर्तमान भारत बंद समाज–व्यवस्था से खुले समाज–व्यवस्था की ओर तीव्र गति से अग्रसर है; ऐसे में गतिशीलता का बनना स्वाभाविक है। जैसे–जैसे विकास की दर तीव्र होगी, उदारीकरण व विश्वव्यापरीकरण बढ़ेगा, वैसे–वैसे खुलापन भी बढ़ता जायेगा और सामाजिक गतिशीलता के अवरोध भी समाप्त होते जायेंगें।जजमानी व्यवस्था के अवक्रमित होने के कारण पारम्परिक भारतीय ग्रामीण व्यवस्था की न केवल आत्मनिर्भरता कमजोर हुई अपितु जजमानी व्यवस्था के अधीन जीवन–यापन करने वाली अनेक जातियों जैसे– धोबी, तेली, बढ़ई, लुहार, इत्यादि के समक्ष पारिवारिक भरण–पोषण की विकट समस्या उत्त्पन्न हो गयी। इन बदली हुई परिस्थितियों में ये सेवा–प्रदायी जातियां अंततः बाज़ार के माध्यम से अपने पुश्तैनी पेशे से आजीविका अर्जित करने को विवश हो गयीं। इनके कल्याण के लिए और इन्हें मुख्यधारा के उपलब्ध अवसरों से लाभान्वित होने लायक बनाने का दायित्व भले ही राज्य का है। किन्तु, तकनीकी विकास एवं वैश्विक सम्पर्क ने सम्पूर्ण भारतीय ग्रामीण व्यवस्था को सामाजिक व्यावसायिक गतिशीलता की ओर उन्मुखित कर दिया है।

संदर्भ ग्रन्थः

1.जे0पी0 सिंह, आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन पीएचआई लर्निंग, नईदिल्ली, 2010
2.योगेन्द्र सिंह, मॉडर्नाइजेशन ऑफ इंडियन ट्रेडिशन, रावत पब्लिकेशन ,जयपुर, 1986
3.पी0ए0 सारोकीन, सोशल मोबिलिटी, हार्पर व कंपनी, न्यूयार्क, 1927
4.जे0पी0 सिंह, आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन पीएचआई लर्निंग, नईदिल्ली, 2010
5.William Henricks Wiser, The Hindu Jajmani System, Munshiram Manoharlal Publishers, Delhi, 1988.
6- Oscar Lewis, Village Life in Northern India, Random House, USA, 1958.
7.S.C. Dube, Indian Village, Routledge Publication, United Kingdom, 1955.
7- Kathleen Gough, The Social Structure of a Tanjore Village, 1955.
8- Lipset and Bendix, Social Mobility in Industrial Society, Transaction Publishers, USA, 1959.

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

आधुनिक काल मे अनुसूचित जातिया : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

दुर्गेश कुमार पाण्डेय
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी0जी0 कालेज गंगापुर, वाराणसी

सारांश

मुगल साम्राज्य के पतन के बाद व्यापारी के रुप में भारत आये अंग्रेजों ने अन्य शक्तियों पुर्तगाली, डच, फ्रांसीसी को हराकर भारत में अपना साम्राज्य स्थापित किया तथा १८५७ तक लगभग सम्पूर्ण भारत पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। इस समय भारतीय सामाजिक संगठन कमोवेश पूर्ववत् ही था परन्तु इस समय तक भारत में अनगिनत जातियाँ प्रवेश कर चुकी थीं। इस समय ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र प्रमुख जातियाँ समाज में थीं उनके कायों का बँटवारा पूर्ववत था लेकिन इस समय तक भारत की उच्च जातियों में मुसलमानों के सम्पर्क में रहने के कारण नैतिक पतन हुआ तथा वे व्यवहार में अधिक हिंसक हुए। इस कारण निम्न जातियों पर अत्याचार पहले की अपेक्षा अधिक बढ़ गये।

मुख्य शब्द– समाज, वर्ग, दास, अनुसूचित जातियां, आन्दोलन

१८वीं शताब्दी में समाज में सम्राट का स्थान महत्वपूर्ण होता था। ये कैसी भी परिस्थिति में क्यों न रहें सुन्दरी, सुरा तथा संगीत इनकी पहली आवश्यकता थी। ग्रामीण क्षेत्र में जमींदार, कृषक, हस्तशिल्पी तथा अन्य पुरोहित, वैद्य आदि वर्ग पाये जाते थे इनमें निम्न वर्ग के लोग जो प्रायः कृषक, हस्तशिल्पी होते थे अत्यन्त निर्धनता पूर्ण जीवन यापन करते थे। इस समय समाज में एक अन्य कुरीति दास वृत्ति थी। मुख्य रुप से दास दो प्रकार के होते थे। एक घरों में काम करने वाले दास थे जब कि दूसरे थे खेतों में काम करने वाले बँधुआ मजदूर ये लोग भूमि के हस्तान्तरण होने पर नए स्वामी के पास हस्तान्तरित हो जाते थे। इनकी कठिनाइयों का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि ये निर्धनता के कारण कभी–कभी अपनी संतान तक को बेच देते थे। इस समय यूरोपीय कम्पनियाँ १० वर्षीय कन्या के लिये ५ से १५ रुपये, १६ वर्षीय लड़के के लिए १५ से २० रुपये प्रति दास के मूल्य से बंगाल, असम, बिहार की मन्टियों से मोल लोकर दास को यूरोप तथा अका ती थीं। १७८६ में की गयी घोषणा द्वारा दास व्यापार बन्द कर दिया गया परन्तु गावों में आज भी बन्धुआ मजदूरी की प्रथा कहीं–कहीं चल रही है, जिनमें राजस्थान, बिहार के पिछड़े क्षेत्रों का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है।

समाज की भावी दुर्दशा को कतिपय दूरदर्शी समाज–सुधारकों ने अनुभव किया तथा इस क्षेत्र में प्रयास भी आरम्भ किए। लगभग १५वीं सदी में हरिजनोद्धारा के लिए नियोजित प्रयासों के संकेत मिलते हैं जो आशानुकूल फलीभूत नहीं हो सके परन्तु १६वीं सदी में सरकारी एवं गैरसरकारी प्रयासों एवं आन्दोलनों में अभूतपूर्व गति आयी। ये चेष्टायें समाज की मानसिकता को परिवर्तित करने में पूर्णतः सफल तो नहीं, आंशिक सफल कही जा सकती हैं। ऐसे समाज सुधार आन्दोलनों का प्रथम इन धार्मिक भावना से ऊपर उठकर समाज सुधार आन्दोलन को चलाने वाले सर्वप्रथम नेता महाराष्ट्र के श्री ज्योतिराव फुले थे। जिन्होंने जातीय बन्धनों को व कुरीतियों को दूर करने के लिए धर्म का आश्रय नहीं लिया, श्री फुले ने एक संस्था सत्य शोधक – समाज की स्थापना पर बल देना था, चाहे उसकी जाति कुछ भी हो। इनसे प्रभावित होकर सन् १८६५ में बंगाली ब्राह्मण शशिपाद बंधोपाध्याय ने बाशनमार (बंगाल) में अस्पृश्य श्रमिकों की स्थिति को सुधारने के लिए प्रयास किया।

राजाराम मोहन राय (१७७२ – १८३३) भारतीय इतिहास की वह कड़ी है जो अतीत को वर्तमान से जोड़ती है जाँति – पाँति तथा अन्य सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए ब्रह्म समाज की स्थापना की । देवेन्द्रनाथ टैगोर और केशवचन्द्र सेन उनके कार्य को आगे बढ़ाया। एम० जी० रानाडे के नेतृत्व में प्रर्थाना समाज (१८७७) की स्थापना हुई । उसने ब्रह्म समाज के सिद्धान्तों को व्यापक बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया स्वामी दयानन्द ने १८७५ में विदेशी शासन की अधीनता में भी एक राष्ट्र व्यापी संस्था – आर्य समाज की स्थापना करके वस्तुतः एक क्रान्तिकारी कार्य किया, जिस प्रकार मार्टिन लूथर ने प्रयास किए उसी के समान ही स्वामी दयानन्द जी ने हिन्दू धर्म सुधार के लिए प्रयत्न किए। यहाँ तक कि उन्होंने अछूतों को "महाशय" जैसा सम्मानित सम्बोधन दिया। इस क्षेत्र में स्वामी घनान्द जी के प्रयासों को भुलाया नहीं जा सकता, जिन्होंने सर्वप्रथम "अछूतोद्धारमंडल" की स्थापना की । आधुनिक काल (१६वीं शताब्दी) के आन्दोलन तथा प्रयासों पर पाश्चात्य शिक्षा व संस्कृति का प्रभाव स्पष्टतः परिलक्षित होता है। लाला लाजपत राय , जो एक सच्चे देशभक्त , महान नेता व समाज – सुधारक रहे है। उन्होंने भी देश की इस कमजोर अवस्था को अनुभव किया। उन्होंने कहा है कि भारत सच्चे अर्थो में तब तक एक राष्ट्र नहीं बन सकता जब तक कि तथाकथित अछूतों को समाज में उचित स्थान नहीं मिलेगा। अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए डा० अम्बेडकर, जो स्वयं महार जाति के थे, के नेतृत्व में राष्ट्रव्यापी आन्दोलन छेड़े गए। हरिजनों की स्थिति सुधारने के प्रयास में ब्रिटिश सरकार ने १६३० और १६३१ में गोल मेज सम्मेलनों का आयोजन किया जिसमें डा० अम्बेडकर की सहमति से " साम्प्रदायिक पंचाट " १६३२ के रूप में ब्रिटिश सरकार ने एक प्रस्ताव पास किया। इस पंचाट में अछूतों को हिन्दुओं से पृथक मानकर पृथक निर्वाचन तथा प्रतिनिधित्व का अधिकार प्रदान करने की व्यवस्था की गई जिसका गाँधी जी तथा राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं ने विरोध किया। गाँधी जी ने इसके विरूद्ध पूना में आमरण अनशन प्रारम्भ कर दिया। इसके फलस्वरूप २६ सितम्बर , १६३२ को पूना पैक्ट हुआ जिसके अनुसार अछूतों को स्वतंत्र अल्पसंख्यक न मानकर हिन्दुओं का ही अंग स्वीकार किया गया।

कुछ समय के अन्तराल में सन् १६२० में काग्रेस के कलकत्ता – सम्मेलन में कांग्रेस सदस्यों के लिए सात सूत्रीय कार्यक्रम की घोषणा की गई। संक्षेप में इस कार्यक्रम के अर्न्तगत प्रत्येक सदस्य छूआछूत मिटाने के लिए प्रत्येक सम्भव कार्य करेगा तथा सामाजिक निर्योग्ताओं के विरूद्ध हरिजनों को हर सम्भव सहायता की जायेगी। इस कार्यक्रम को अधिक प्रभावशाली बनाने के उद्देश्य से सन् १६२१ में कांग्रेस सेंशन में सत्याग्रह करने का निर्णय लिया। इन आन्दोलनों से प्रभावित होकर सन् १६३० में ब्रिटिश सरकार ने हरिजनोत्थान के लिए कतिपय कदम उठाये जैसे – स्कूलों में हरिजनों को शिक्षा की व्यवस्था , नौकरी में विशेष सुविधाएं प्रदान करना आदि। किन्तु ये सभी सुविधाएं नाम मात्र के लिए थीं। पंडित मदनमोहन मालवीय जी की अध्यक्षता में हरिजन – सेवक – संघ परिषद ने यह प्रस्ताव स्वीकृत किया कि यह परिषद निश्चय करती है कि अब भविष्य में हिन्दू जाति में किसी को जन्म से अस्पृश्य नहीं समझा जायेगा और जिन्हें अब तक अस्पृश्य समझा गया उन्हें अन्य हिन्दुओं की भाति ही मंदिरों, कुओं, पाठशालाओं, सड़को और अन्य सार्वजनिक संस्थाओं के उपयोग का अधिकार रहेगा। इस संस्था ने प्रचार द्वारा हरिजनों के मंदिरों में प्रवेश हेतु जनमत तैयार किया और कुटीर उद्योगों के विकास, हरिजनों के लिए चिकित्सा व्यवस्था, स्कूल खोलना, गरीब बच्चों को पढ़ने की सामग्री तथा छात्र–वृत्तियों की व्यवस्था, हरिजन बस्तियों की सफाई, कुएँ खुदवाना आदि कार्य किए जिसके फलस्वरूप मद्रास सरकार ने कानून पास करके अछूतों के लिए दक्षिण भारत के मंदिरों के द्वार खुलवा दिए । इस प्रकार की संस्थाएँ लगभग प्रत्येक प्रदेश में संगठित हुई। अखिल भारतीय स्तर पर "भारतीय दलित वर्ग सघ" तथा " भारत दलित सेवक संघ " की स्थापना की गई। यह भी हरिजन सेवक संघ के समान ही प्रचार तथा कार्य करती है। इसके अतिरिक्त जी० डी० बिड़ला ,

रामेश्वरी नेहरू, पी० टी० हार्डी, हृदयनाथ कुंजरू आदि ने हरिजनों के मंदिरों में प्रवेश हेतु अभूतपूर्व योगदान दिया

स्वतंत्रता से पूर्व किए गये इन प्रयासों व आन्दोलनों ने हरिजनों की दयनीय स्थिति की और ब्रिट्रिश सरकार का ध्यान आकर्षित किया। फलतः हरिजनों को विशेष सुविधाएं उपलब्ध कराने तथा इनकी दशा को सुधारने के लिए सरकार ने १६३५ में विधान की धारा ३०६ में एक अनुसूची तैयार करवाई जिसमें दलित एवं हरिजन कहें जाने वाले समस्त वर्गो को सम्मिलित किया गया। तभी से इन्हें अनुसूचित जाति की संज्ञा प्रदान की गई जिसका प्रस्ताव सर्वप्रथम "साइमन – आयोग" ने रखा। किन्तु १६३५ का यह विधान भी उद्देश्य पूर्ति में असफल रहा। अतः १६३६ में जब लोकप्रिय दल कांग्रेस के विभिन्न प्रातों में मंत्री मण्डल स्थापित हुए तो इस सरकार ने १६३५ के विधान की त्रुटियों को दूर करते हुए विभिन्न कल्याणकारी योजनाएं बनाई। इस संदर्भ में मद्रास सरकार ने मालावार मंदिर प्रवेश अधिनियम बनवाकर इस दिशा में प्रशंसनीय प्रयास किया। १६३६ व १६४० के मध्य सरकार ने अनुसूचित जातियो के स्वास्थ्य और शिक्षा सम्बन्धी उन्नती के लिए आर्थिक सहायता प्रदान की, १६३६ में ही उत्तर प्रदेश सरकार ने पर्लियामेन्ट्री सेक्रेटेरी के दो पदों को अनुसूचित जातियो के लिए सुरक्षित कर दिया, पुलिस विभाग में अनुसूचित जातियो की भर्ती विशेष व्यवस्था की गई , अनुसूचित विद्यार्थी को छात्रवृत्तियां प्रदान की गई और सहायता के लिए सरकारी समितियां खोली गयी।

अंग्रेजी शासन काल में भारत में सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में परिवर्तन हुए इससे निम्न जातियाँ भी अछूती नहीं रहीं। भारत सरकार अधिनियम १६३५ के पारित होने के पश्चात इन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा गया। संविधान के अनुच्छेद ३४ के अनुसार "किसी भी प्रदेश या केन्द्रशासित प्रदेश में, राज्यपाल की सलाह से राष्ट्रपति किन्ही भी जातियों, प्रजातियों या जनजातियों को उनके भाग या जातियों, प्रजातियों या जनजातियों के उपसमूहों को विशिष्ट घोषित कर सकता है और ये उस प्रदेश या केन्द्रशासित प्रदेश के सम्बन्ध में संविधान के संदर्भ में अनुसूचित जातियाँ मानी जायेगी।

स्वतन्त्रता काल से अब तक के दीर्घ अन्तराल में सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों व संस्थाओं के फलस्वरुप कही जाने वाली अनुसूचित जातियों के सदस्यों का जीवन स्तर, स्थिति एवं दशा प्रगतिशील एवं विकासोन्मुख है। यह अत्यन्त स्वाभाविक है कि वर्तमान परिवर्ती प्रगतिशील समाजार्थिक परिवेश से अनुसूचित जातियों के जीवन प्रतिमान, आदर्श मूल्य तथा दृष्टिकोण अवश्यमेव प्रभावित एवं परिवर्तित हुए होंगे। तात्पर्य यह है कि आज अनुसूचित जाति के विचारों व जीवन प्रतिमानों में गतिशीलता व परिवर्तनशीलता स्पष्टतः परिलक्षित हो रही है। शासकीय योजनाओं के फलस्वरुप उन्हें शिक्षित होने के अवसर प्राप्त हुए हैं, वे सवर्ण एवं सभ्य कहे जाने वाले लोगों से सम्पर्क एवं सम्बंध स्थापित करने में सफल हो रहे हैं। आज वे अनुभव करने लगे हैं कि वे स्वतंत्र भारत में उपेक्षित नहीं हैं। आज उनमें अपनी स्थिति एवं अधिकारों के प्रति जागरुकता का विकास हो रहा है तथा राजनैतिक क्षेत्र में आरक्षण से उन्हें अपनी शक्ति का अभास होने लगा है। इन समस्त परिवर्तित परिस्थितियों के परिणाम सवरुप उनकी सामाजिक स्थिति में सुधार हुआ है तथा उनके जीवन प्रतिमान भी बदल रहे हैं। यहाँ यह जानना आवश्यक हो जाता है कि उनकी सामाजिक स्थिति एवं जीवन प्रतिमानों में क्या–क्या परिवर्तन हो रहे हैं। साथ ही यह उल्लेखनीय है कि क्या स्वतंत्रता के लगभग पचहत्तर वर्षों के पश्चात भी इन शासकीय योजनाओं का यही क्रियान्वन हो रहा है क्या इन योजनाओं से अनुसूचित जातियों के लोगों में परजीविका का विकास तो नहीं कर रहे हैं। क्या ये योजनाएं अनुसूचित जातियों के प्रति सवर्ण जातियों में हृदय परिवर्तन करने में सफल हुई हैं सांविधिक तौर पर दलितों से आशय उस वर्ग से है जो संविधान की धरा ३४१(१) तथा (२) के अन्तर्गत अनुसूचित जाति की श्रेणी में रखे गये हैं।

संविधान में इनकी अलग पहचान इनकी सामाजिक निर्योग्यताओं एवं आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए इन्हें विशेष सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक सुरक्षा प्रदान करते हुए सांविधिक उपबंध किये गये हैं। गरीबी, बेरोजगारी, बीमारी, अशिक्षा एवं गन्दगी की शिकार ये जातियां सदियों से समाज में बहिष्कृत एवं नागरिक अधिकारों से वंचित रही हैं। इन जातियों के पास भृमि व जीविका के अन्य संसाधनों का स्वामित्व नहीं है। इनमें से अधिकांश लोग भूमिहीन, छोटे व सीमान्त कृषक हैं जो आजीविका के लिये कृपि पर निर्भर रहते हैं। विगत दो तीन दशकों पूर्व इनमें से अधिकांश व्यक्ति अपने भृ स्वामी के यहाँ पूर्ण कालिक अथवा अंशकालिक बंधुआ मजदूर थे। आज भी दलित अधिकांशतः अशिक्षित, अभावग्रस्त एवं दरिद्र हैं। सरकार ने स्वतन्त्र भारत में नौकरियों, पदों, शैक्षणिक संस्थाओं में आरक्षण और राज्य के विधान सभा तथा लोकसभा में आरक्षित निर्वाचन क्षेत्रों तथा स्थानीय निकायों में आरक्षण की व्यवस्था की है। सरकार द्वारा किये गये समस्त प्रयास ना काफी है तथा इन वर्गो के आर्थिक उन्नयन के लिए अपनाये गये समस्त तरीके, योजनायें एवं अनुदान इनके आर्थिक विकास को त्वरण प्रदान करने में कफी सक्षम हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

1. जनक मीणा 2000, ग्रामीण विकास प्रशासन विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली
2. बी.एन.ठाकुर ''ग्रामीण विकास का समाजशास्त्र'' क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली 2005
3. करतार सिंह ''ग्रामीण विकास–सिद्धांत नीति और प्रबंधन'' सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2007
4. शिव मेहता ''ग्रामीण विकास नीति और कार्यक्रम'' सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2000
5. उमेश चन्द्र अग्रवाल ''ग्रामीण भारत में आधारभूत ढाँचे के विकास हेतु संचालित कार्यक्रम एवं योजना'' कुरूक्षेत्र, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, अगस्त 2006
6. ए.आर.देसाई ''भारत में ग्रामीण समाज'' पापुलर प्रकाशन मुम्बई, 1979
7. रघुवंश प्रसाद सिंह ''राष्ट्रीय ग्रामीण कार्यक्रम'' कुरूक्षेत्र, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 2006
8. सूर्यभान सिंह ''ग्रामीण विकास एवं पंचायतीराज'' कुरूक्षेत्र, सूचन प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, नवम्बर 2005
9. अवधेश तिवारी ''ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं सामाजिक परिवर्तन'' विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
10. त्रिपाठी,आर०एस०,हिस्ट्री आफ एन्सियेन्ट इण्डिया। कनिंगघम ए, दि एन्सिएन्ट जियाग्रैफी आफ इण्डिया,1980

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

बहराइच जनपद में भूमि उपयोग

डा0 राज कुमार गुप्ता
सन्त विनोवा पी0जी0 कालेज, देवरिया

भूमि समस्त गतिविधियों का आधार है, इस स्तर पर ही समस्त गतिविधियों और आर्थिक क्रियाओं का सृजन और विकास होता है। यह व्यक्ति के आर्थिक स्रोतों, व्यवसायिक क्रियाओं जीवनशैली एवं उपलब्धियों को ही निर्धारित नहीं करती बल्कि उनके सामाजिक आर्थिक क्रियाकलापों को भी प्रभावित करती है। अतः मानव प्राकृतिक और मानवीय परिवेश से सामंजस्य स्थापित करते हुए भूमि संसाधन का अधिकाधिक उपयोग करने का सतत् प्रयास करता है। एच0ए0 वुड (1977) के अनुसार भूमि उपयोग केवल प्राकृतिक भूदृश्य के संदर्भ में ही नही अपितु मानवीय क्रियाओं पर आधारित उपयोगी सुधारों के रूप में भी प्रयुक्त होना चाहिए। जबकि सी0 वैनजेटी (1972) ने भूमि उपयोग को प्राकृतिक एवं सास्कृतिक दोनो ही उपादानों के संयोग का प्रतिफल माना है। यही कारण है कि किसी स्थान विशेष के भूमि उपयोग की विभिन्न अवस्थाएं उस क्षेत्र विशेष सामाजिक,आर्थिक एवं सांस्कृतिक अवस्था का द्योतक होती है।

<u>अध्ययन क्षेत्र :–</u> अध्ययन क्षेत्र हिमालय की उपत्यिका में अवस्थित भारत और नेपाल की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से संलग्न है। जनपद बहराइच $27^0$16′ उत्तरी अक्षांश से $28^0$24′ उत्तरी अक्षांश एवं 81^0 03′ से $82^0$12′ पूर्वी देशान्तर के मध्य विस्तृत है। इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 5020 वर्ग किमी0 है। भौगोलिक दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र उत्तर भारत के वृहद गंगेय मैदान का ही एक भाग है जो नदियों द्वारा निक्षेपित अवसादों से निर्मित है। अध्ययन क्षेत्र की औसत ऊंचाई 119 मीटर एवं सामान्य ढाल 4^0 है। जनपद की उत्तरी सीमा अन्तराष्ट्रीय सीमा है जो नेपाल राष्ट्र से लगी है, जबकि पश्चिम में लखीमपुर खीरी, दक्षिण पश्चिम सीतापुर, दक्षिण में बाराबंकी, पूर्व में गोण्डा एवं उत्तर पूर्व में श्रावस्ती जनपद की सीमाएं लगती है। यहां की कुल जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 3498000 है। जनपद छः तहसीलों एवं 14 विकास खण्डों में विभक्त है :–

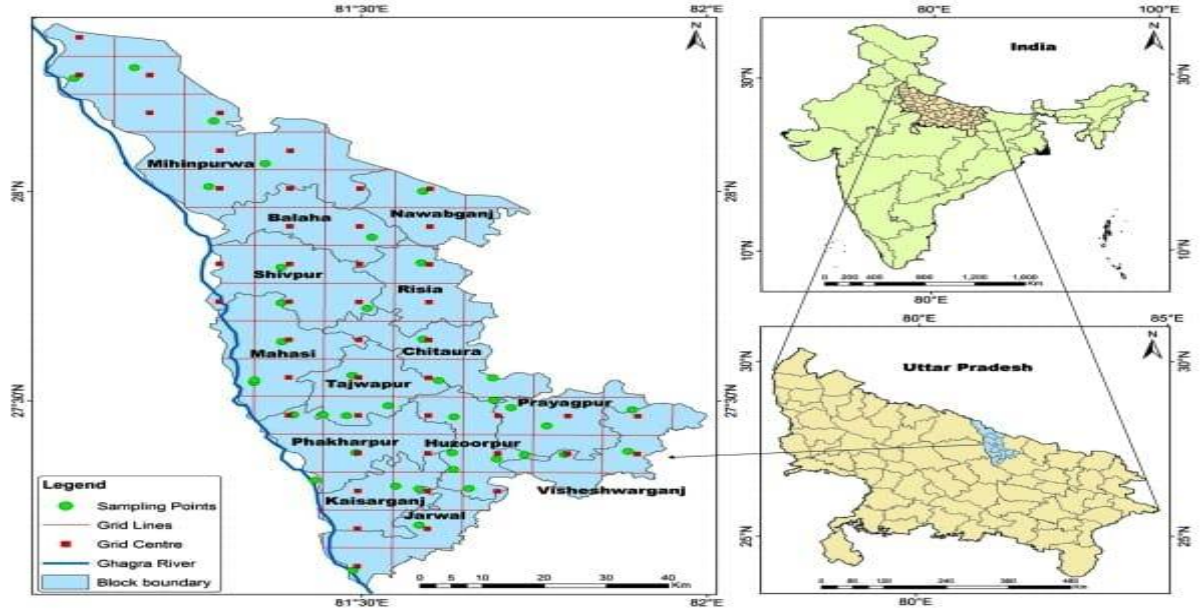

सामान्य भूमि उपयोग :– भूमि का प्रमुख उपयोग फसलों के उत्पादन के लिए किया जाता है तथा अन्य उपयोग यातायात, मनोरंजन, आवास, उद्योग तथा व्यवसाय आदि कार्यों के लिए भी होता है। बहुधा भूमि का उपयोग बहुउद्देशीय हुआ करता है। अध्ययन क्षेत्र के भूमि संसाधन उपयोग को मोटे तौर पर तीन भागों में बांटा जा सकता है–कृषि भूमि, कृष्य बंजर भूमि तथा कृषि हेतु अनुपलब्ध भूमि इनमें कृषि क्षेत्र के तीन वर्ग किए गये हैं : असिंचित कृषि क्षेत्र, सिंचित कृषि क्षेत्र तथा बहुफसली कृषि भूमि। उपयोग सम्बन्धी इस बिन्दुओ के परिपेक्ष्य में विद्वानों ने भूमि उपयोग के पांच वर्ग किए हैं, कृषि भूमि, सिंचित भूमि, बहुफसली भूमि, कृष्य बंजर भूमि तथा कृषि हेतु अनुपलब्ध भूमि। 2021–22 में भूमि उपयोग के परस्पर तुलनात्मक विवरण तालिका सं0–1 में प्रदर्शित है।

तालिका सं0–1

जनपद बहराइच – सामान्य भूमि उपयोग (2021–22)

क्र0 सं0	भूमि उपयोग संवर्ग	क्षेत्रफल (हे0 में)	सम्पूर्ण क्षेत्रफल का प्रतिशत	विभिन्न संवर्गों का प्रतिशत
1	1–कृषि अप्राप्य भूमि	71358	–	10.12
2	अ–जल प्लावित	7977	11.17	1.13
3	ब–अधिवास एवं परिवहन मार्ग	57782	80.97	8.19
4	स–रेह युक्त ऊसर भूमि	3337	4.67	0.47
5	द–अन्य कृषि योग्य भूमि	2242	3.14	0.32
6	2–कृषि योग्य बंजर भूमि	89103	–	12.63
7	अ–वन, बाग, चारागाह एवं झाड़ियों के अन्तर्गत	73675	82.68	10.44
8	ब–परती भूमि	13315	14.98	1.88
9	स–अन्य कृषियोग्य बंजर भूमि	2113	2.37	0.29
10	3–कृषिगत भूमि	544989	–	77.25
11	अ–सिंचित भूमि	205330	37.67	29.11
12	ब–असिंचित भूमि	114535	21.01	16.23
13	स–द्विफसली भूमि	225124	41.30	31.91
	जनपद बहराइच का योग	705450	–	100.00

स्रोत :– अप्रकाशित रजिस्ट्रार, कानूनगो बहराइच।

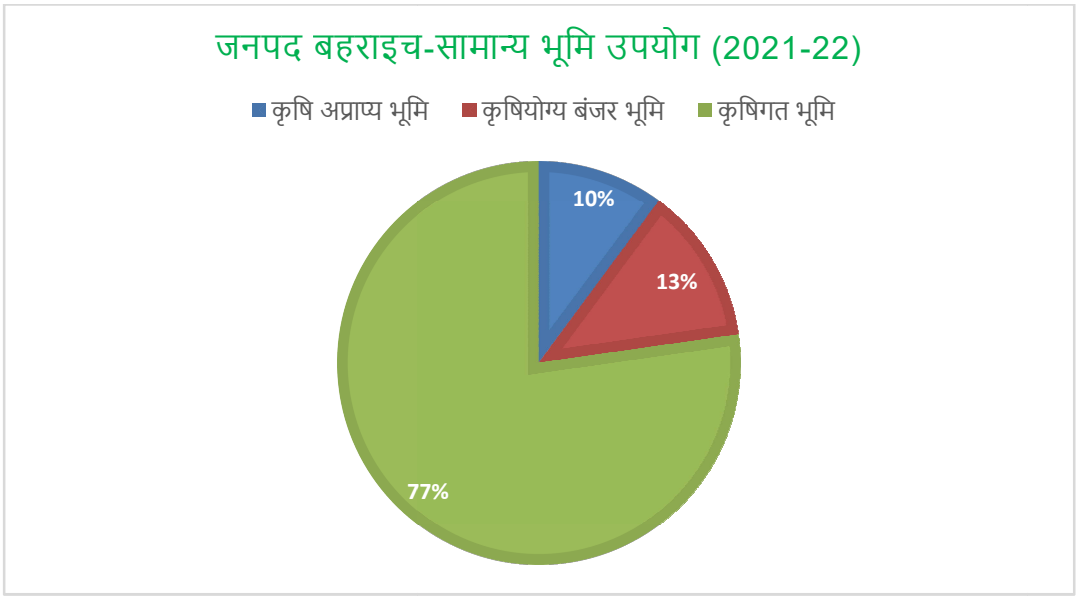

बहराइच जनपद सामान्यत भूमि उपयोग तालिका–1 से स्पष्ट है कि कृषि अप्राप्य भूमि सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 10.12 प्रतिशत है जबकि कृषि योग्य बंजन भूमि 12.63 प्रतिशत हैं कृषित भूमि उपयोग के अन्तर्गत कृषि योग्य बंजर भूमि का अध्ययन महत्वपूर्ण होता है। इस वर्ग के अन्तर्गत सम्मिलित भूमि से कृषिगत क्षेत्र में भावी विस्तार की सम्भावनाएं निहित रहती है। कृषि योग्य बंजर भूमि से आशय उस भूमि से है जो कृषि हेतु प्राप्त नही है किन्तु जिसे अल्प लागत द्वारा कृषित भूमि में परिवर्तित किया जा सकता है (वी0 मालिक, 1975)

तालिका सं0–2

जनपद बहराइच – विकास खण्डवार सामान्य भूमि उपयोग (2021–22)

क्र0 सं0	विकास खण्ड का नाम	विकास खण्ड का क्षेत्रफल (हे0 में)	कृषि अप्राप्य भूमि		कृषि योग्य बंजर भूमि		कृषिगत भूमि			
			क्षेत्रफल हे0 में	क्षेत्रफल प्रतिशत में	क्षेत्रफल हे0 में	क्षेत्रफल प्रतिशत में	सिंचित भूमि		असिंचित भूमि	
							क्षे0 हे0 में	क्षे0 प्र0 में	क्षे0 हे0 में	क्षे0 प्र0 में
1	मिहींपुरवा	94885	7754	8.17	48178	50.77	18425	19.41	20523	21.62
2	नवाबगंज	37570	2628	6.99	16281	43.32	16778	47.16	1786	4.75
3	बलहा	28540	3597	12.60	1672	5.85	14446	50.61	8531	29.89
4	शिवपुर	37214	3757	10.09	1889	5.07	18507	49.73	12871	34.58
5	रिसिया	25004	2479	9.9	1205	4.81	14505	58.01	6607	26.42
6	चित्तौरा	29982	7883	26.29	1178	3.92	18346	61.19	2495	8.32
7	पयागपुर	26367	5197	19.71	878	3.32	19146	72.61	731	2.77
8	विशेश्वरगंज	24672	2755	11.16	1384	5.60	17302	70.12	3128	12.64
9	महसी	30889	5533	17.91	2415	7.81	16499	53.41	6193	20.04
10	तेजवापरु	42140	4022	9.54	1524	3.61	15444	36.34	21068	44.99
11	फखरपुर	23196	6262	26.99	2070	8.92	11244	48.47	4416	19.03

12	हुजूरपुर	24210	1957	8.08	1662	6.86	15977	65.99	4303	17.77
13	कैसरगंज	19450	2763	14.20	3201	16.45	15797	81.21	2529	13.00
14	जरवल	26096	5332	20.43	3176	12.17	5117	19.60	12111	46.40
	योग	470215	61919	13.16	86713	18.44	217533	46.26	1072292	22.81

स्रोत :–अप्रकाशित रजिस्ट्रार, कानूनगो, तहसील बहराइच।

अध्ययन क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि का वितरण विकास खण्ड पर तालिका संख्या–2 से स्पष्ट है कि जनपद के विकासखण्डों में कृषि योग्य भूमि का वितरण लगभग असमान है। सर्वाधिक कृषि योग्य बंजर भूमि मिहींपुरवा विकास खण्ड में है जो सम्पूर्ण विकास खण्ड क्षेत्रफल का 50.77 प्रतिशत है। इस क्रम में नवाबगंज 43.33 प्रतिशत, कैसरगंज 16.45 प्रतिशत एवं जरवल 12.17 प्रतिशत के साथ सर्वाधिक कृषि योग्य बंजर भूमि रखते हैं। जबकि सबसे न्यून क्षेत्रफल पयागपुर 3.32 प्रतिशत, तेजवापुर 3.61 प्रतिशत एवं चित्तौरा 3.92 प्रतिशत पाया जाता है। कृषि योग्य भूमि का सामान्य अध्ययन करने के पश्चात् उनकी विशेषताओं उपयोग के प्रतिरूपों एवं वितरण के क्षेत्रीय अध्ययन विकास खण्ड स्तर पर चित्र संख्या–2 में प्रदर्शित किया गया है क्योंकि क्षेत्रीय अध्ययन के द्वारा इस प्रकार की भूमि का गहन अध्ययन किया जा सकता है।

शुद्ध कृषित भूमि का महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसके उपयोग की विभिन्न अवस्थाएं मानव के सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास स्तर की द्योतक है। सामान्यतः मानव कृषि कार्य से सम्बन्धित विभिन्न सुविधाओं का विकास कर कृषित भूमि के विस्तार के लिए सदैव प्रयत्नशील रहता है। 2017–18 में प्राकृतिक अनुकूलता सिंचाई साधनों का विकास उन्नत किस्म के बीजों एवं उर्वरकों का प्रयोग और नूतन तकनीकी के विकास के फलस्वरूप जनपद में शुद्ध कृषित भूमि (सिंचित भूमि + असिंचित) सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 69.07 प्रतिशत है।

जनपद बहराइच में शुद्ध कृषित सिंचित भूमि का सम्पूर्ण क्षेत्रफल 217533 हे0 (46.26 प्रतिशत) तालिका–2 से स्पष्ट है। सर्वाधिक सिंचित भूमि कैसरगंज जहां सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 81.21 प्रतिशत, पयागपुर 72.61 प्रतिशत एवं विशेश्वरगंज 70.12 प्रतिशत भूमि इसके अन्तर्गत सम्मिलित है। इसी सन्दर्भ में न्यूनतम सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत मिहींपुरवा में है जहां कुल क्षेत्रफल के 19.61 प्रतिशत भाग ही सिंचित हैं दूसरा न्यनतम सिंचित क्षेत्र जरवल 19.61 प्रतिशत है। सिंचित भूमि उपयोग के प्रतिरूप का क्षेत्रीय अध्ययन विकास खण्ड स्तर पर चित्र सं0–2 में दर्शाया गया है।

जनपद के विकास खण्ड स्तर पर शुद्ध कृषिगत क्षेत्र में असिंचित भूमि का वितरण तालिका सं0–2 से स्पष्ट है कि सर्वाधिक असिंचित भूमि जरवल विकास खण्ड 46.40 प्रतिशत है। इसी सन्दर्भ में तेजवापुर 44.99 प्रतिशत एवं शिवपुर 34.58 प्रतिशत भूमि असिंचित है। जनपद में 2017–18 में जल प्लावित क्षेत्र 7977 हे0 था जो कृषि अप्राप्य भूमि का 11.17 प्रतिशत है। अधिवास एवं परिवहन मार्ग के अन्तर्गत 80. 97 प्रतिशत, रेहयुक्त ऊसर भूमि 4.67 प्रतिशत एवं अन्य कृषि योग्य भूमि 3.14 प्रतिशत है। जनपद में कृषि योग्य बंजर भूमि में कुल क्षेत्रफल का सर्वाधिक भाग वन, बाग, चारागाह एंव झाड़ियों के अन्तर्गत है जो 82. 68 प्रतिशत है। कृषिगत भूमि में द्विफसली भूमि का क्षेत्र 41.30 प्रतिशत सर्वाधिक है।

अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के प्रमुख स्रोतों में राजकीय नलकूप, निजी नलकूप प्रमुख एवं नहर, तालाब सिंचाई के गौड़ स्रोत है। वर्तमान में जनपद में निजी नलकूप प्रमुख सिंचाई का साधन है जो कि सभी विकास खण्डों में विकसित अवस्था में है। जबकि नहर एवं माइनर का विकास अभी सीमित मात्रा में पाया जाता है विशेषकर यह पयागपुर, विशेश्वरगंज एवं कैसरगंज तक सीमित है।

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भूमि उपयोग एवं शस्य परिवर्तन में सिंचाई की भूमिका धनात्मक रूप से प्रकट हुई है फिर भी इसका वांछित स्तर अभी नही प्राप्त हो सका है जिसके लिए अन्य अवस्थापना तत्वों (उर्वरक, बीज, कृषियन्त्रों आदि) का अल्प विकसित होना है परन्तु सिंचाईगत कमिंया नजरअंदाज नही की जा सकती। प्रयास यह होना चाहिए कि खेती बाड़ी के लिए उपलब्ध भूमि के क्षेत्र में किसी प्रकार की कमी न आये वरन् जहां तक सम्भव हो कृषि योग्य परती भूमि में सुधान करें। कृषि कार्यों के लिए उपलब्ध भूमि में वृद्धि ही की जानी चाहिए।

REFERENCES

1– Malik, V: "The U.P. Land Records Manual" part I eastern book company, Lucknow, 1975, PP, 61-62

2– अहमद ए0, एवं सिद्दीकी एम0एफ0, 1967 : क्राप एसोसिएशन पैटर्न इन लूनी बेसिन'' 'द ज्योग्राफर' अंक–14, पृष्ठ–68

3– ब्रजभूषण सिंह, 1979 : कृषि भूगोल, तारा पब्लिकेशन, वाराणसी।

4– हुसैन माजिद : कृषि भूगोल, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

5– तिवारी, आर0सी0 एवं सिंह, बी0एन : कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

6– जनसांख्यिकी पत्रिका बहराइच 2018–19

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

सर्वांगीण विकास शैक्षिक उपलब्धि एवं महाविद्यालयी वातावरण

कुशल पाल यादव
असिस्टेन्ट प्रोफेसर (शिक्षाशास्त्र विभाग)
स्वामी सहजानन्द स्नातकोत्तर महाविद्यालय गाजीपुर

सारांश :–

किसी भी कार्य को लक्ष्य तक पहुँचाने में वातावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है क्योंकि समुचित वातावरण में ही उस कार्य को सफल बनाया जा सकता है। इस प्रकार विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि में उनके महाविद्यालय के वातावरण का अत्यंत प्रभाव होता है।

यह सर्वविदित है कि आज विश्व सम्पूर्ण यंत्रीकरण की दिशा में अग्रसर हो रहा है जिसके कारण शारीरिक प्रयास और भी कम होने लगेगा जो वास्तव में मनुष्य की उत्तरजीविका के लिए हानिकारक सिद्ध होगा। पतन की बाढ़ को रोकना है, नहीं तो मनुष्य का अस्तित्व मस्तिष्क तक ही सीमित रह जायेगा। मनुष्य के विकास में शिक्षा और संस्कारों की प्रमुख भूमिका होती है। शिक्षा का उद्देश्य जहाँ एक ओर बालक के मस्तिष्क में ज्ञान का दीप जलाना है वहीं दूसरी ओर उसके व्यक्तित्व का संतुलित विकास करना भी है। शिक्षा के विभिन्न उद्देश्य जैसे मानसिक विकास, शारीरिक विकास, सांस्कृतिक विकास, जीविकोपार्जन, राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, समायोजन की क्षमता आदि को स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मस्तिष्क के बिना प्राप्त किया जाना प्रायः असम्भव है। शिक्षा एक ऐसा व्यापक शब्द है जिसके विषय में प्राचीन काल के विद्वानों ने शिक्षा को विद्या की संज्ञा दी थी और शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य बालक के ज्ञान को विकसित करना था। केवल मात्र बौद्धिक विकास को सर्वांगीण विकास माना जाता था। आज शिक्षा के अर्थ के सम्बन्ध में वह प्राचीन धारण बदल गई है।

शब्द कुजीः– बालक, वातावरण, सर्वांगीण विकास, महाविद्यालय।

प्रस्तावनाः–

आधुनिक काल में शिक्षा शब्द का प्रयोग नये अर्थ में किया जाने लगा है और शिक्षा का उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का संतुलित विकास करना है। बालक की जन्मजात शक्तियों का विकास वातावरण के सम्पर्क में आने से होता है। बालक प्रतिक्रिया करता रहता है। जिसके फलस्वरूप उसे ज्ञान के साथ अनुभव प्राप्त होता है, जिससे वह सीखता है, समझता है और तद्नुसार व्यवहार करता है। इस प्रकार शिक्षा मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन से सम्बद्ध है अर्थात् शिक्षा जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। इसी के द्वारा बालक के वर्तमान व भावी जीवन का निर्माण होता है तथा उसके विकास के लिए उपर्युक्त वातावरण और साधन प्रदान किये जाते हैं। शिक्षा की किसी भी परिभाषा में उसे शारीरिक शिक्षा से अलग करना सम्भव नहीं है क्योंकि दोनो के उद्देश्य समान होते हैं। जिनके द्वारा मनुष्य में सुन्दर शारीरिक स्वास्थ्य, कार्य–कौशल, अवकाश का सदुपयोग, स्पष्ट सोचने की शक्ति तथा स्वस्थ संवेगों का विकास होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि शिक्षा चाहे जैसी भी हो औपचारिक अथवा अनौपचारिक, इसका उद्देश्य मनुष्य का समन्वित समग्र एवं सन्तुलित विकास करना हैं। शिक्षण कार्य में मनुष्य का मन और शरीर दोनो सम्मिलित रहता है। मनुष्य की अद्वैत प्रकृति शिक्षा का एक मौलिक सूत्र है। जैविक तथा सांस्कृतिक विकास व शारीरिक शिक्षा का अध्यापक के साथ गहरा सम्बन्ध है। शारीरिक व्यायाम, जिसका उपयोग आदिकाल में मनुष्य ने प्रायः आहरोपार्जन एवं संरक्षण के लिए किया, उसका अस्तित्व, स्वास्थ्य का मूल–धार है।

आज के यंत्र प्रधान युग में मनुष्य के लिए स्वास्थ्य अत्यन्त आवश्यक है। व्यायाम करने से व्यक्ति का केवल कार्यकुशलता की दृष्टि में स्वास्थ्य ही नहीं बनता बल्कि उसके मानसिक तथा सांवेगिक तनावों का भी निष्कासन होता है। यदि मनुष्य ने अपने आपको मानसिक प्रक्रिया पर अधिक आश्रित रखा तथा शारीरिक क्रिया की अवहेलना बनाये रखी तो उसका भविष्य कैसा होगा, इसकी केवल कल्पना ही की जा सकती है। शारीरिक व्यायाम सदैव मनुष्य के आकर्षण का केन्द्र इसलिए भी रहेगा क्योंकि इससे उसकी कार्यक्षमता विकसित होती है। खेल क्रीड़ा, स्वास्थ्य तथा स्वास्थ्यता के निर्माण का अति उत्तम साधन है।

शिक्षा कतिपय उद्देश्यों को आगे रखकर चलती है। इन उद्देश्यों द्वारा हम मनुष्यों को अच्छे स्तर का बौद्धिक एवं सामाजिक प्राणी बनाना चाहते हैं। हम यह भी चाहते हैं कि वह सद्भाव सीखे तथा नागरिकता की सद्भावना से ओतप्रोत हो बौद्धिक विकास में मनुष्य के लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक होता है कि वह अपने अन्दर निहित गुणों तथा प्रतिभावों को समझे। यह अर्थ ज्ञान संचय से कहीं अधिक है–अर्थ यह है कि मनुष्य अपने वातावरण में रहते हुए अनुभव करें कि वातावरण से उसका सम्बन्ध घनिष्ट हो चला है। यहाँ की संस्कृति से उसका अनुबन्ध हो गया है। इस बौद्धिक चेतना में, जिसके द्वारा मनुष्य अपनी शक्तियों एवं गुणों को भली–भाँति समझता है, इसमें शिक्षा तथा शारीरिक शिक्षा का एक बहुत बड़ा योगदान है।

छात्रों की क्षमतानुसार यदि उन्हें प्रतिदिन चुनी हुई क्रियाओं में भाग लेने का अवसर दिया जाये तो उनकी स्वस्थ्यता बढ़ सकती है। स्वास्थ्य की सुन्दर क्रियाओं के अभ्यास से उनमें स्वास्थ्य विज्ञान सम्बन्धी ज्ञान की वृद्धि होती है तथा उनके व्यवहार में संशोधन हो जाता है।

समाजिक एवं संवेगात्मक विकास के द्वारा मनुष्य सदा अपने रचनात्मक रूप में प्रकट होता रहता है। जहाँ शारीरिक शिक्षा द्वारा मन जिज्ञासु होता है। वहीं शिक्षा के द्वारा उस जिज्ञासु मन को शान्त किया जाता है। जिज्ञासा शिक्षित पुरूष के लिए अति आवश्यक है। इसी जिज्ञासा की बदौलत हम अपने वातावरण को जानने का प्रयास करते हैं। शिक्षा न तो पुस्तकीय ज्ञान का पर्यायवाची है और न ही केवल जीविकोपार्जन का साधन, इसके विपरीत शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, समाज की चतुर्मुखी उन्नति और सभ्यता की चहुमुखी प्रगति की आधारशिला है। शिक्षाविदों ने शिक्षा को प्रकाश एवं शक्ति का ऐसा स्त्रोत माना है जो व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, भौतिक और आध्यात्मिक शक्तियों एवं क्षमताओं का विकास करके उसके चरित्र एवं व्यक्तित्व को उत्कृष्ट बनाती है।

इसीलिये प्राचीन भारत के मनीषियों ने शिक्षा की ऐसी प्रणाली का प्रतिपादन किया जिसने न केवल वैदिक साहित्य को सुरक्षित रखा वरन ज्ञान के विविध क्षेत्रों में मौलिक विचारकों को भी जन्म दिया।

श्री अरविन्दों और गाँधी जी ने भी अपने बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्त में ऐसी शिक्षा एवं शिक्षा प्रणाली अपनाने पर जोर दिया जो बच्चे और मनुष्य की शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों का सर्वांगीण विकास करके उन्हें आत्मनिर्भर बना सकें।

शैक्षिक उपलब्धिः

शैक्षिक मापन में निष्पत्ति परीक्षणों का विशेष महत्व है निष्पत्ति परीक्षणों के द्वारा यह मापन किया जाता है कि छात्रों ने कक्षा में पढ़ाये गये विषयों की पाठ्यवस्तु के सम्बन्ध में कितना सीखा है। इस प्रकार के परीक्षणों में सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु पर प्रश्न पूछे जाते हैं और सह उत्तर को देखकर उनका योग कर लिया जाता है, जिसे प्राप्तांक कहते हैं। इस प्रकार निष्पत्ति परीक्षण में पाठ्यवस्तु के सीखने को विशेष महत्व दिया जाता है। वी0एस0 ब्लूम ने शैक्षिक उद्देश्यों को छः वर्गों में विभाजित किया है। अभिज्ञान, बोध, प्रयोग, विश्लेषण, संश्लेषण एवं मूल्यांकन। ज्ञान का व्यवहार शिक्षा संस्थाओं का कार्य शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक का सम्पूर्ण विकास करना और ज्ञानात्मक पक्ष पर स्वामित्व प्राप्त करना है सभी दर्शनों की

ज्ञान मीमांसा में इसी का विवेचन किया गया है कि ज्ञान क्या है और कैसे प्राप्त किया जा सकता है? शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य ज्ञान को प्राप्त करना है। शिक्षा संस्थाओं में जो ज्ञान दिया जाता है। वह सूचना स्तर तक ही होता है। इन सभी को ज्ञानात्मक शैक्षिक उपलब्धि माना जाता है। अन्य शैक्षिक उपब्धियों का सम्बन्ध भावात्मक एवं क्रियात्मक उद्देश्यों से होता है। भावात्मक उद्देश्यों का सम्बन्ध रूचियों, अभिवृत्तियों, मूल्यों एवं सौन्दर्यानुभूति के विकास से होता है। भावात्मक उद्देश्यों को छः वर्गो में विभाजित किया जाता है। आग्रहण, प्रतिक्रिया, अनुमूलन, विचारण, व्यवस्थापन और चरित्रीकरण। बालक के चारित्रिक गुणों का विकास भावात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति पर आधारित होता है। इस प्रकार के गुणों के विकास को अन्य शैक्षिक उपलब्धियाँ माना जाता है, परीक्षण के निर्माण के समय यह आवश्यक होता है कि इस प्रकार के परीक्षणों का निर्माण किया जाए जिससे उच्च शैक्षिक उपलब्धियों का मापन किया जा सके जिससे बालकों की अभिप्रेरणा, मौलिकता, सृजनात्मक चारित्रिक गुणों के विकास का मापन हो सके मूल्यांकन में ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक तीनों प्रकार के उद्देश्यों की जाँच की जाती है अर्थात शैक्षिक उपलब्धि से अभिप्राय यह है कि महाविद्यालय में अध्ययनरत विद्यार्थियों का विश्वविद्यालयों के द्वारा संचालित वार्षिक परीक्षा में कुल प्राप्तांक प्रतिशत क्या है।

छात्रों ने शैक्षिक उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया है, यही उनकी शैक्षिक उपलब्धि को बताता है। शैक्षिक उपलब्धि से अभिप्राय छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान, बोध, कौशल, अनुप्रयोग आदि योग्यताओं की मात्रा से है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के द्वारा छात्रगण अपनी विभिन्न बौद्धिक योग्यताओं का विकास करते हैं। छात्रों ने किस सीमा तक अपनी बौद्धिक योग्यताओं का विकास किया है, यही उनकी उपलब्धि का सूचक है।

महाविद्यालयी वातावरणः–

महाविद्यालयी वातावरण से अभिप्राय महाविद्यालय के खुले एवं बन्द वातावतरण से है। बालक का व्यक्तित्व प्राकृतिक तथा वातावरणीय गुणों का उत्पाद होता है। प्राणी का जन्मजात स्वाभाव होता है कि वह वातावरण में होने वाली पारस्परिक क्रियाओं का निरीक्षण करता है तथा उन्हीं व्यवहारों को ग्रहण करने की कोशिश करता है। इसलिए यह कहना अतिश्योक्ति न होगा कि सीमित जन्मजात योग्यताओं के अलावा, वह कारक परिवेश वातावरण ही है जो बालक के विकास को प्रभावित करता है। आज सभी प्रबुद्ध व्यक्ति यह मानते है कि बालक का समुचित विकास तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि बच्चों के असीम जिज्ञासा से भरे ओजस्वी मस्तिष्क को तृप्त एवं विकसित करने के लिए स्वस्थ शैक्षिक, पारिवारिक तथा सामाजिक वातावरण का निर्माण नहीं किया जायेगा। मनोविज्ञान के आधुनिक सिद्धान्त बताते हैं कि बालक के विकास में वातावरण का प्रभाव सर्वप्रमुख होता है। प्रसिद्ध व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिक वाटसन ने तो यहां तक कह डाला है कि ''तुम मुझे कोई भी बच्चा दे दो जो कहोगे उसे वही बना दूँगा।'' वाटसन की उपर्युक्त उक्ति में वातावरण का बालक पर कितना अधिक प्रभाव पड़ता है, स्पष्टतः परिलक्षित होता है।

व्यक्ति वातावरण से अन्तःक्रिया करके अपने व्यवहारों को इस प्रकार परिवर्तित करता है कि वातावरण के साथ उसका उचित सामंजस्य हो सके। व्यक्ति के व्यवहार में आए इस प्रकार के परिवर्तन को अधिगम कहते हैं। कुछ वातावरण इस प्रकार के होते हैं कि उनमें व्यक्ति को सीखने में सुविधा होती है जबकि इसके विपरीत अन्य प्रकार के वातावरण में उसे असुविधा होती है। यदि सीखने के लिए व्यक्ति को उचित वातावरण प्रदान किया जाए तो अधिगम में गुणात्मक वृद्धि हो सकती है। ''शिक्षण एक ऐसी ही प्रक्रिया है, जिसमें अधिगमकर्ता के सीखने की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाना ही शिक्षक का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। वास्तव में उचित वातावरण का निर्माण करके अधिगमकर्ता के सामने आने वाली कठिनाइयों को दूर करके अधिगम की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाना ही शिक्षण है।

यहाँ पर वातावरण के सृजन से तात्पर्य विभिन्न आयामों को संगठित करके इस प्रकार प्रस्तुत करने से है, जिसमें अधिगमकर्ता का पूर्व–निर्धारित उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता मिलती हैं विभिन्न प्रकार के शिक्षण वातावरण को बनाने के लिए विभिन्न प्रकार की प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है। एक प्रकार का शिक्षण वातावरण कुछ निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति में छात्रों के लिए सहायक होता है।

निष्कर्षः–

इस प्रकार शारीरिक व मानसिक दोनो विकास सर्वांगीण विकास के अन्तर्गत आता है क्योंकि सर्वांगीण विकास ही शिक्षा का मूल उद्देश्य है और शारीरिक विकास व मानसिक विकास एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। शैक्षिक उपलब्धि में हम छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान, बोध, कौशल अनुप्रयोग आदि को मापते हैं और उचित वातावरण में ही रहकर छात्र निश्चित उद्देश्यों को प्राप्त कर सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. Ahmad, M (2008), Comprehensive dictionary of education. New Delhi: Atlantic Publishers and Distributors (P) Ltd.
2. Allpart, G.W. (1935) Attitudes in C.M. Murchenson (ed.) Handbooks social psychology. Warster, Mass: Clark University Press.
3. एन0सी0इ0आर0टी0: इण्डियन इयर बुक ऑफ एजुकेशन, 1964
4. एन0सी0इ0आर0टी0: द सेकण्ड नेशनल सर्वे ऑफ सेकण्डरी टीचर एजुकेशन इन इण्डिया।
5. Biswas, A & Aggarwal, J.C. (1971). Encyclopeadic dictionary and directory of education New Delhi: The Academic Publishers (INDIA)

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

जनजातीय समाजों में होने वाले आधुनिक परिवर्तनों का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

धर्मेंद्र कुमार
एम.ए. समाजशास्त्र

सारांश –
जनजाति वह सामाजिक समुदाय है जो राज्य के विकास के पूर्व अस्तित्व में था या जो अब भी राज्य के बाहर है। जनजाति वास्तव में भारत देश के आदिवासियों के लिए प्रयोग होने वाला एक वैधानिक पद है जिसे भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति नाम से संबोधित किया गया है। जनजातियों को भारत का मूल निवासी भी कहा जाता है यह प्राचीन काल से ही देश में निवास कर रहे हैं लेकिन जिस प्रकार से समाज का क्रमवार विकास हुआ लोगों के खान–पान रहन–सहन आचार विचार शिक्षा व स्वास्थ्य में वृद्धि हुई तकनीकी में वृद्धि हुई तथा वहीं दूसरी तरफ जनजाति समाज का समुचित विकास पर ध्यान नहीं दिया गया किंतु आज वर्तमान आधुनिक समाज में अन्य समाजों के साथ–साथ जनजाति समाजों के भी समस्त क्षेत्र में भी परिवर्तन हुए हैं जो आज स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ रहे हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य जनजाति समाजों में होने वाले प्रमुख परिवर्तनों का समाजशास्त्री दृष्टिकोण से अध्ययन किया गया है। जैसे जनजातियों में सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन, आर्थिक परिवर्तन, राजनीतिक परिवर्तन, इत्यादि पर प्रकाश डाला गया है यह शोध पत्र द्वितीय स्रोतों पर आधारित है।

बीज शब्द – जनजाति समाज ,परिवर्तन ,संविधान, आधुनिकीकरण, जनसंख्या

प्रस्तावना–

जनजातीय जिसे वनवासी ,आदिवासी ,वन्य जाति,इत्यादि नाम से भी जाना जाता है। यह आदिकाल से ही भारत में निवास कर रहे हैं जिन्होंने जंगलों पहाड़ों को अपना निवास स्थान बनाए रखा है जिनका जीवन सदा एवं सरल होता है सामान्य तौर पर जनजाति सामान्य मानव समूह से अलग क्षेत्र में निवास करती हैं और उनका रहन–सहन, खान पान, आचार विचार आम लोगों की तुलना में अलग या भिन्न होती है वास्तव में जनजातीय व्यक्तियों का वह समूह या समुदाय है जो निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करता है और किसी आदि पूर्वज से अपना उद्‌गम मानता है जिनकी एक सामान्य संस्कृत एवं भाषा होती है। भारत देश में जनजातियों की संख्या कुल जनसंख्या का लगभग 8 से 9% है। हजारों सालों से जंगलों एवं पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले जनजातियों को हमेशा से दबाया और कुचला जाता रहा है जिससे इनका जीवन अभावग्रस्त ही रहा है इनका खुले मैदान में निवासियों तथा शब्द कहे जाने वाले लोगों से ना के बराबर संपर्क रहा है अर्थात् जनजाति समाज आधुनिक सभ्यता के प्रभाव से बहुत हद तक दूर हैं यह सभी विशेषताएं 20वीं शताब्दी तक थी किंतु आज के वर्तमान समय में जनजाति समाजों में भी आने का अनेक परिवर्तन देखने को मिल रहा है चाहे वह सामाजिक क्षेत्र, हो आर्थिक क्षेत्र हो, राजनीतिक क्षेत्र हो, सांस्कृतिक क्षेत्र हो लगभग समस्त क्षेत्रौं में परिवर्तन देखा जा रहा है। जिसमें आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण, नगरीकरण तथा सरकारी गैर सरकारी संगठनों इत्यादि की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। 21वीं सदी तक देश में जनजाति समझो की स्थिति में काफी हद तक बदलाव हुआ है। भारत की 2011 की जनगणना के अनुसार 10.42 करोड़ भारतीयों को अनुसूचित जनजाति के रूप में अधिसूचित किया गया है जिसमें से 1. 004 करोड़ शहरी क्षेत्र में निवास करते हैं। अनुसूचित जनजाति देश की कुल जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत और कल ग्रामीण जनसंख्या का 11.3ः है। शहरी क्षेत्र में निवास करने वाली जनजातियों की इतनी बड़ी

जनसंख्या आधुनिक सभ्यता की मुख्य धारा का हिस्सा हो चुकी हैं। आज के आधुनिक समय में जनजाति समाज का चेहरा भी बहुत बदल गया है आज वह भी अपने अधिकारों हसन इत्यादि के प्रति जागरूक हो चुके हैं और देश विदेश में आ जाकर बड़े पैमाने पर अपनी प्रतिभा का परचम लहरा रहे हैं तथा सरकारी, गैर सरकारी नौकरियां, खेलो, व्यवसायों आदि को अपना रहे हैं। जैसे आज भारत की राष्ट्रपति महामहिम श्रीमती द्रौपदी मुर्मू उड़ीसा की संथाल जनजाति से हैं।

पूर्व साहित्य सर्वेक्षण––

पांडे, अंकुर कुमार 2022, जनजाति समस्याओं के निराकरण में मीडिया की भूमिका के अध्ययन में यह पाया गया है की जनजाति समझो कि जो प्रमुख समस्याएं हैं जैसे आर्थिक, राजनीतिक ,सामाजिक तथा सांस्कृतिक समस्याओं का निराकरण मीडिया के द्वारा उजागर किया गया है तथा सरकारी गैर सरकारी पर्यटनों से इसकी समस्याओं का निराकरण काफी हद तक किए जाने का प्रयास किया गया है।

दुबे, गिरिजा प्रसाद 2015, सामाजिक न्याय और भारतीय जनजाति एक समाज वैज्ञानिक विश्लेषण के अध्ययन से स्पष्ट किया गया है की जनजाति समाज के लोगों को भी सामाजिक न्याय एवं समाज के मुख्य धारा में जोड़ने के उपरांत भी आज जनजातियों की काफी जनसंख्या अभी भी जंगलों वह पहाड़ों तथा दुर्गम स्थानों पर निवास कर रही है तथा अपने परंपरागत व्यवसायों में संलग्न है अर्थात् अभी भी इनको समाज के मुख्य धारा में जोड़ने के लिए सरकार को प्रयास रत रहना होगा।

माधुरी,कुमारी 2016, अनुसूचित जनजातियों में राजनीतिक चेतना और सहभागिता द्वारा उत्पन्न बदलाव नामक इस अध्ययन से पता चलता है कि अनुसूचित जनजातीय समाजों के लोगों में सोच विचार में व्यापक परिवर्तन आया है तथा जनजातियों में राजनीतिक चेतना एवं सहभागिता के फलस्वरुप जनजातियों में शक्ति, सत्ता एवं नेतृत्व की परंपरागत प्रदत्त प्रणाली का स्थान लोकतांत्रिक प्रणाली ग्रहण करती जा रही है। अतः उक्त साहित्य सर्वेक्षणों से यह स्पष्ट होता है कि पूर्व की जिन जनजातियों के विषय में हम जो सोचते थे जो कल्पना करते थे वही जनजाति आज वर्तमान में आधुनिक परिवर्तनों के कारण विकास के रथ पर सवार होकर तीव्र गति से आगे बढ़ रही है।

अनुसूचित जनजातियों के संबंध में संवैधानिक व्यवस्थाएं–

ब्रिटिश काल के समय से ही भारत सरकार जनजातियों को मुख्य धारा में लाने के लिए प्रयास करती रही है स्वतंत्रता प्राप्त के पश्चात् स्वाधीन भारत के संविधान में जनजातियों के उत्थान के लिए अर्थात् अपनी मुख्य धारा में लाने के लिए आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, मान्यता और धर्म की स्वतंत्रता तथा प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता का दिलासा दिया गया है। संविधान में मूल अधिकारों का उल्लेख किया गया है जो नागरिकों को यह विश्वास दिलाता है कि धर्म,लिंग, वर्ग, जाति, प्रजाती एवं अन्य आधार पर किसी भी नागरिक के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाएगा। भारतीय संविधान में जनजातियों के लिए दो प्रकार की व्यवस्था की गई है।–संरक्षी एवं विकासी (protective and Promotive provisions) संरक्षी प्रावधानों का उद्देश्य जनजाति हितों की सुरक्षा करना है तथा विकासी प्रावधानों का उद्देश्य उन्हें प्रगति का अवसर प्रदान करना है। इन दोनों प्रकार के प्रधानों का उल्लेख करने वाले संविधान के अंश इस प्रकार हैं।

संविधान में 12वें भाग के अनुच्छेद 275 के अनुसार केंद्र सरकार राज्यों को जनजाति कल्याण एवं उनके उचित प्रशासन के लिए विशेष धनराशि देगी। भाग 15 के अनुच्छेद 325 में कहा गया है कि किसी भी नागरिक को धर्म, प्रजाति, जाति एवं लिंग के आधार पर मताधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा। भाग 16 के अनुच्छेद 330 एवं 332 में लोकसभा एवं राज्य विधान सभाओं में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान सुरक्षित किए गए हैं। 338 अनुच्छेद में राष्ट्रपति द्वारा अनुसूचित जातियों एवं

जनजातियों के लिए विशेष अधिकारी के नियुक्ति की व्यवस्था की गई है। पांचवी अनुसूची में जनजाति सलाहकार परिषद की नियुक्ति की व्यवस्था है। अनुच्छेद 324 एवं 244 में राज्यपालों को जनजातियों के संदर्भ में विशेषाधिकार प्रदान किए गए हैं संविधान में कुछ अनुच्छेद ऐसे भी हैं जो कुछ विशेष राज्यों के जनजाति क्षेत्र के लिए विशेष सुविधाएं देने से संबंधित हैं संविधान में रखे गए विभिन्न प्रावधानों का मुख्य उद्देश्य जनजातियों को देश के अन्य नागरिकों के समक्ष बनाना है तथा उन्हें भी देश के मुख्य धारा से जोड़ना तथा एकीकरण करना है जिससे जनजातीय समाज के लोग भी देश के आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्थाओं में भागीदारी कर सकें। भारत में कई प्रकार की जनजातियां पाई जाती हैं जिसमें प्रमुख जनजातियां भील, गोंड, संथाल, मीणा, नायर, खासी, गारो, जयंतियां, उरांव, मुंडा, भूटिया, चेंचू, हो, भूमिज, बैगा, बिरहोर इत्यादि।

राज्यवार जनजातियों की संख्या–

राज्य	**जनसंख्या**
जम्मू कश्मीर।	1493299
हिमाचल प्रदेश।	392161
पंजाब।	00
चंडीगढ़।	00
उत्तराखंड।	291903
हरियाणा।	00
दिल्ली।	00
राजस्थान।	9238534
उत्तर प्रदेश।	1134273
बिहार	1336573
सिक्किम।	206360
अरुणाचल प्रदेश।	951 811
नागालैंड।	1710973
मणिपुर।	902740
मिजोरम।	1036115
त्रिपुरा।	1166 813
मेघालय।	2555861
असम।	3884371
पश्चिम बंगाल।	5296953
झारखंड।	8645042
ओड़िसा।	9590756
छत्तीसगढ़।	7822902
मध्य प्रदेश।	15316734
गुजरात।	8917174
दमन एवं दीव।	15363
दादर नगर हवेली।	178564
महाराष्ट्र।	10510213

आंध्र प्रदेश।	5918073
कर्नाटक।	4248987
गोवा।	149275
लक्ष्यदीप।	61120
केरल।	484839
तमिलनाडू।	794697
पुडुचेरी।	00
अंडमान एवं	00
निकोबार द्वीप समूह।	28530

जनजातीय समाजों में होने वाले परिवर्तन–

परिवर्तन प्राकृतिक का नियम है विश्व का कोई भी समाज ऐसा नहीं है जो परिवर्तन से अछूता रहा हो प्रत्येक समाज में चाहे अनचाहे या प्रक्रिया अबाध गति से चलती रहती है। परिवर्तन एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है जो सभी समाजों में पाई जाती है ऐसे ही जनजाति समाज में आनेका–अनेक परिवर्तन दिखाई देते हैं। जहां पहले जनजातीयां जंगलों एवं पहाड़ों में अपना निवास स्थान बने रहते थे तथा अपना जीवन यापन चलाने के लिए कृषि कार्य पशुपालक खाद्य पदार्थ एकत्रित करना तथा मुख्य धारा से दूर निवास करते थे किंतु आधुनिक युग में ऐसा नहीं है आज जनजातियों में भिन्न–भिन्न प्रकार के परिवर्तन हो रहे हैं खान–पान, रहन–सहन, व्यापार, शिक्षा, राजनीतिक आदि क्षेत्रों में बहुत परिवर्तन दिखाई पड़ने लगा है। आज पहाड़ी जनजातियों की तुलना में भारतीय समाज की मुख्यधारा में अधिक शामिल होते दिखाई दे रहे हैं। संस्कृतिकरण, शिक्षा, औद्योगीकरण एवं वैश्वीकरण का आदिवासी जीवन और समाज पर गहरा प्रभाव पड़ा है। जिसके परिणाम स्वरुप जनजाति समाजों के समस्त पक्षों में परिवर्तन दिखाई दे रहा है जिसमें मुख्य रूप से सामाजिक परिवर्तन सांस्कृतिक परिवर्तन आर्थिक परिवर्तन तथा राजनीतिक परिवर्तन पर इस शोध पत्र में प्रकाश डाला गया है।

सामाजिक परिवर्तन– जनजाति समाजों में जहां पहले सदा एवं सरल जीवन जीना पसंद करते थे तथा अपने को समाज अर्थात मुख्यधारा से कटा हुआ समझते थे एवं अपना पूरा जीवन जंगलों एवं पहाड़ों में व्यतीत किया करते थे किंतु आज ऐसा नहीं है जनजाति समाजों के तीव्र परिवर्तन हुए जिनमें फलस्वरूप उनके रहन–सहन वेशभूषा खान–पान सामाजिक प्रस्तुति भूमिका इत्यादि में बड़ा बदलाव देखने को मिल रहा है जिससे उनके सामाजिक प्रस्थिति में बहुत सुधार हुए हैं। आज जनजाति समाज भी अन्य समाजों के साथ विकास की मुख्य धारा में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं जिसमें अपना तथा देश के विकास में अपनी भागीदारी प्रस्तुत कर रहे हैं और अपना जीवन यापन सुचारू रूप से चला रहे हैं आधुनिक परिवर्तनों के परिणाम स्वरुप इन दुर्गम स्थानों पर निवास करने वाले जनजाति समूह के व्यक्तियों में एक नई प्रकाश की रोशनी दी है जिसके कारण समूह के व्यक्तियों में अधिकारों के प्रति जागरूकता आई है और अपने जीवन शैली को आधुनिक एवं शब्द समाजों के साथ जोड़ पानी में संभव हो पाए हैं।

सांस्कृतिक परिवर्तन– भारत की संस्कृति अपने आप में एक विशेष पहचान बनाई हुई है इसका मुख्य कारण यहां निवास करने वाले व्यक्तियों की सांस्कृतिक गतिविधियों का समान होना जो अपने आप में अकल्पनीय है और और उनकी एकता भारती समानता की प्रमाणिकता है। जनजातियों की जीवन शैली उनका वेश–भूषा, रंगसज्जा तथा उनका रहन–सहन ही जनजातीय संस्कृति कहलाती है। देश में जनजातीय भिन्न–भिन्न रूपों में अपने मूल्यों परंपरा और स्वदेशी संस्कृतियों को दर्शाती हैं। जनजाति एक ऐसा सामाजिक समूह है जो एक निश्चित क्षेत्र में एक निश्चित भाषा विशिष्ट संस्कृति और सामाजिक संगठन

रखता है जिसके माध्यम से यह अपने–अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हैं। जनजाति समाज आज भी अपनी पारंपरिक संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए जाने जाते हैं किंतु वर्तमान परिदृश्य में जनजाति समाजों के संस्कृत में बहुत बदलाव अर्थात् परिवर्तन दिखाई पड़ता है। आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के प्रभाव के फलस्वरुप समीपस्थ क्षेत्रों में आदिवासी नगरी एवं औद्योगिकरण इकाइयों के समीप बस गए हैं एवं नगरी जीवन शैली को स्वीकार करते हुए जीवन यापन कर रहे हैं।

आर्थिक परिवर्तन– सामान्यतः जनजाति समाज की आर्थिक गतिविधियां बहुत ही साधारण एवं सरल होती हैं जनजातीय समाजों के लोगों का मुख्य व्यवसाय भोजन संग्रहण, शिकार, पशुचारण ,खेतिहर ,शिल्प उत्पादन एवं लघु व्यापार इत्यादि हुआ करते थे। भारत में अनेक जनजातीय निवास करती हैं जिनकी आर्थिक गतिविधियां भी भिन्न–भिन्न होती हैं पिछले कुछ दशकों में जनजाति अर्थव्यवस्था में तेजी से बदलाव देखे गए हैं जनजाति समाज में इन परिवर्तनों के लिए उत्तरदायित्व महत्वपूर्ण करण औद्योगिकरण भी है। औद्योगीकरण का प्रभाव प्रत्येक जगह पर महसूस किया जाता है। नौकरियां एवं अन्य अवसरों के लिए औद्योगिक क्षेत्र की ओर लोगों के आंदोलन का आदिवासी अर्थव्यवस्था पर बहुत प्रभाव पड़ा है। युवा आदिवासी अब अपने–अपने स्थान पर पारंपरिक भूमिका निभाने के इच्छुक नहीं है, वर्तमान समय में जनजाति क्षेत्र औद्योगिक क्षेत्र में बड़े पैमाने पर लोग पलायन हो रहे हैं। शहरीकरण और आधुनिकीकरण का जनजातीय समाजों के अर्थव्यवस्था में परिवर्तन लाने में बहुत बड़ा योगदान है बेहतर जीवन शैली के लिए लोगों का शहर की ओर आना तथा शहरी केदो में रहने के आधुनिक तरीकों से आकर्षित होते हैं जिसके फलस्वरुप जनजाति समाजों के आर्थिक संरचना में तेजी से परिवर्तन होता दिखाई पड़ रहा है। शिक्षा ने भी जनजाति समाजों के आर्थिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है शिक्षा का स्तर जितना अधिक ऊंचा होगा गतिशीलता भी उतनी ही अधिक होगी। कई शिक्षित आदिवासी उद्योगों और संगठनों में पेशेवर कार्यकारी अधिकारी और अन्य कुशल मजदूरों के रूप में काम कर रहे हैं उन्होंने अपना पारंपरिक व्यवसाय छोड़ दिया है। अतः स्पष्ट है कि आधुनिक परिवर्तनों से जनजातीय समाजों के लोगों की जीवन शैली में पहले की अपेक्षा वर्तमान समय में अच्छी और सुदृढ़ दिखाई दे रही है।

राजनीतिक परिवर्तन– प्राचीन काल से ही जनजातियों का अपना एक अलग रहन–सहन, खान–पान, संस्कृत भाषा तथा निवास स्थान रहा है। यह अपने को सब समाज से अलग समझते थे तथा समाज के मुख्य धारा से अपने को हमेशा अलग महसूस करते रहे हैं, समाज में किसी भी प्रकार का अधिकार प्राप्त नहीं हुआ करते थे वह अपने समूह या कबीले में ही रहना पसंद करते थे किंतु समाज में परिवर्तन हुए और जनजाति समाज भी धीरे–धीरे अपने को सब समाज के प्रभाव से परिवर्तित करते गए और परिणामस्वरूप आज वर्तमान समय मंर उनकी रुचि राजनीतिक क्षेत्र में बढ़ती जा रही है। जनजातियों में राजनीतिक प्रक्रियाओं की क्रियाशीलता ने राजनीतिक चेतना को जन्म दिया, राजनीतिक चेतना का मतलब राजनीतिक जागरूकता से है तथा जनजातियों के सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक उत्थान के लिए भारतीय संविधान में इसके लिए कुछ विशेषता अधिकार प्रदान किए गए हैं जिससे इनको भी भारतीय समाज के प्रमुख धारा में आने के लिए सहायता या सुविधा प्राप्त हुई हैं। जिसके फल स्वरुप आधुनिक समय में एक औसत जनजाति सदस्यों की राजनीतिक परिवर्तन के स्तर में वृद्धि के लक्षण को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जनजाति समाज आज अपने योग्यता एवं कार्य कुशलता से देश के अनेक पदों को सुशोभित कर रहे हैं। उदाहरण स्वरूप भारत के प्रथम नागरिक राष्ट्रपति के पद को वर्तमान में एक जनजाति महिला महामहिम द्रोपदी मुर्मू जी सुशोभित कर रही है तथा देश के संसद से लेकर ग्राम पंचायत तक के छोटे–बड़े पदों पर भी अपनी सेवा प्रदान कर रहे हैं जो एक सराहनीय कार्य है।

उपर्युक्त विवेचनाओं से स्पष्ट होता है कि जनजाति समाजों में पहले की तुलना में आज अनेक आधुनिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होते नजर आ रहे हैं जो जनजाति समाज को भारतीय समाज के मुख्य धारा से जोड़ने में अपनी अहम भूमिका निभा रही है जिससे जनजाति समाज का विकास तीव्र गति से होता दिखाई पड़ रहा है।

निष्कर्ष– अतः निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं कि जनजातीय समाजों की सोच, विचार में व्यापक परिवर्तन आया है, पहले जिन जनजाति समाजों के विषय में हम जो सोचते थे, कल्पना करते थे वह जनजाति समाज वर्तमान में उन जनजातीय समाज से भिन्न और अलग दिखाई पड़ रहे हैं। आज की जनजातीय अपने को विकास के क्रम में आगे बढ़ा रही है चाहे वह सामाजिक क्षेत्र हो, चाहे राजनीतिक क्षेत्र हो, चाहे आर्थिक क्षेत्र हो, चाहे सांस्कृतिक क्षेत्र हो प्रत्येक क्षेत्र में वह अपने आपको विकसित कर रहे हैं तथा अपने आप को सभी क्षेत्रों में आगे ले जाने का भर्षक प्रयास कर रहे हैं तथा वर्तमान समय में जनजातियों के प्रत्येक पक्षों में आधुनिक परिवर्तन दिखलाई पड़ रहे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. Dwivedi, Digant , kushvaha, Sarita 2021, journal of advances and scholary Researches in Allied education education vol-18 issue no-4 July 2021 ISSN 2230&7540
2. K- ,Madhuri ,2016 international journal of research in economics and social sciences vol- 6 impact factor 6-225 ISSN 2249&7382
3. Kashyap, Alok Kumar, 2022, the opinion (An international journal of Arts & Social sciences) impact factor 4-875 ISSN & 2277 –9124, vol, 11, No- 22
4. Kumar,ravikant ,2020 ,Shikhar sambodhan : journal of Arts humanitics and Social sciences vol, 3 impact factor 3-589 ,ISSN-2581–6241
5. चतुर्वेदी, मल्लिका ,2015 ,सामाजिक विमर्श, समाज विज्ञान जर्नल , ISSN 0973–3655
6. पांडे ,रवि प्रकाश, पांडे ,प्रखर, 2022, भारत में समाज ,संरचना, संगठन एवं परिवर्तन, विजय प्रकाशन मंदिर भी 21/122 F 1, बैजनत्या वाराणसी, ISBN. 978–81–952697–9–2
7. दोषी ,एस .एल ,जैन, पी.सी,2020, जनजातीय समाजशास्त्र, रावत पब्लिकेशन, सत्यम अपार्टमेंट सेक्टर नंबर 3 जवाहर नगर जयपुर ISBN-978–81316–11–22–8

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

भारत में गुणवत्तापूर्ण शिक्षक शिक्षाः कोविड–19 के विशेष सन्दर्भ में

रेनू यादव
शोध छात्रा शिक्षा संकाय

राम सरदार यादव
आचार्य शिक्षा संकाय
कामता प्रसाद सुन्दरलाल साकेत महाविद्यालय, अयोध्या

सारांशः
कोरोना वायरस की बीमारी ने भारत की शिक्षा प्रणालियों को प्रभावित कर दिया है। इसकी वजह से स्कूलों और विश्वविद्यालयों को अनिश्चित काल तक बंद भी करना पड़ा है। इस शोधपत्र का उद्देश्य भारतीय शिक्षक शिक्षा प्रणाली पर कोविड–19 के प्रभाव की समीक्षा करना और इसकी क्षमता और चुनौतियों का पता लगाना है। यह अध्ययन यह व्यक्त करता है कि परिसर कक्षा शिक्षण से ऑनलाइन शिक्षण के लिए यह बदलाव करना आसान नहीं है। कोविड–19 खुद को बदलने का मौका अवश्य हो सकता है। शिक्षाविदों और विद्वानों को इस परिस्थिति में संसाधनपूर्ण समाधान, और संभवतः व्यापक विशेष कौशल और लचीलेपन की आवश्यकता होगी है, जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि सभी छात्रों की चिन्ता का समाधान हो सके और हमारी शैक्षिक प्रणालियों में भी अनुकूलन क्षमता का निर्माण किया जा सके।

प्रस्तावना

अध्यापक शिक्षा से तात्पर्य अध्यापकों के प्रशिक्षण व्यवस्था से है। एक सक्षम, आत्मनिर्भर, अनुशासित आदि गुणों से युक्त विद्यार्थी के लिए आवश्यक है उसकी उच्चकोटि की शिक्षा व्यवस्था, जो न केवल पाठ्यक्रम से पूरी की जा सकती है बल्कि उसके लिए एक सक्षम अध्यापक की भी आवश्यकता होती है। इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु अध्यापकों को विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है। उसे ही अध्यापक शिक्षा कहते हैं। स्वतंत्रता के बाद सभी स्तरों पर अध्यापक शिक्षा संस्थाओं में वृद्धि अधिक तेजी से हुई है। विभिन्न प्रयासों के बावजूद भी भारत में अध्यापक शिक्षा में अपेक्षित उन्नति नहीं हो पाई है। इसके कई कारण रहे हैं जिससे अध्यापक शिक्षण संस्थाओं में गुणात्मक विकास नहीं हो सका। इस सम्बन्ध में कोठारी आयोग (1964–66) ने अध्यापक शिक्षा की समस्याओं पर विस्तार से विचार किया और सुझाव भी दिया है।

कोठारी कमीशन की रिपोर्ट का आरम्भ इस कथन के साथ होता हैः **''भारत के भाग्य का निर्माण देश के कक्षा–कक्ष में किया जाता है।''**निःसंदेह उत्तम शिक्षा कार्यक्रम का निर्धारण अध्यापकों की योग्यता द्वारा ही होता है। यद्यपि हमारे देश में प्राथमिक से माध्यमिक स्तर तक के अध्यापकों को प्रशिक्षित करने हेतु बी0टी0सी0, डी0एल0एड्0, बी0एल0एड0, बी0पी0एड्0, डी0पी0एड्0 एवं बी0एड0 कार्यक्रम की व्यवस्था की गई है।

किसी भी समाज में शिक्षा सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक संरचना का मूल आधार होती है। एक ओर शिक्षा जहॉ व्यक्ति को सामाजिक, राजनैतिक, पर्यावरण एवं जटिल प्रक्रियाओं को समझने में सहायता प्रदान करती है, वहीं दूसरी ओर यह उनमें अर्थपूर्ण सहभागिता के लिए प्रेरित करती है। इतना ही नहीं मूल्यों के प्रतिपादन, स्थायित्व तथा संस्कृति के हस्तान्तरण का प्रमुख आधार और समाज के विभिन्न वर्गों के लिए उर्ध्व गतिशीलता का भी महत्वपूर्ण साधन शिक्षा है। इस तरह शिक्षा न केवल ज्ञान के लिए, बल्कि व्यक्ति की सामाजिक–आर्थिक प्रगति एवं व्यक्तित्व के विकास के लिए अपरिहार्य साधन भी है। शिक्षा, पद,

प्रतिष्ठा एवं सत्ता का प्रतीक होने के साथ–साथ व्यावसायिक ज्ञान का आधार तथा सामाजिक सामन्जस्य का माध्यम है। विभिन्न भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने अपने अध्ययनों के आधार पर समाज में शिक्षा के महत्व तथा उपयोगिता पर प्रकाश डाला है। शिक्षा व्यक्ति को उच्च आय वाले तथा प्रतिष्ठित व्यवसायों में जाने के लिए आधार प्रदान करती है और फलस्वरूप व्यक्ति के अन्तर्सामूहिक पद एवं सत्ता परिवर्तन का मूल आधार बनती है। शिक्षा ही एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा व्यक्ति ज्ञान एवं प्रशिक्षण प्राप्त करके समाज में विशेषज्ञों, बुद्विजीवियों एवं प्रौद्योगतन्त्रवादियों के वर्गो में प्रवेश कर सकता है और उनसे सम्बन्धित अधिकार तथा सुविधाएं प्राप्त कर सकता है। विद्वानों ने व्यक्तिगत दृष्टिकोण से शिक्षा को पद एवं प्रतिष्ठा का प्रतीक माना है। वर्ल्ड सर्वे ऑफ एजूकेशन के अनुसार विकासशील देशों में औपचारिक शिक्षा उच्च पद एवं स्थिति का मापदण्ड है और यह भी सत्य है कि अविकसित देशों में अभी भी शिक्षा पर उच्च वर्गो का ही एकाधिकार है। व्यावसायिक प्रशिक्षण से सम्बन्धित होने के कारण शिक्षा व्यक्तिगत तथा सामाजिक प्रगति का आधार है।

व्यावसायिक संरचना के अन्तर्गत शिक्षा वह मौलिक आधार है, जिसके बगैर वर्तमान तकनीकी और प्रौद्योगिकीय युग में समाज के राजनैतिक ढ़ॉचे में कोई भी व्यवसायी सफल नहीं हो सकता है। आधुनिक प्रौद्योगिकीय तथा प्रशासनतन्त्रीय व्यावसायिक संरचना में यह व्यक्ति की प्रकार्यात्मक भूमिका निर्धारित करता है और व्यावसायिक गतिशीलता के अवसर प्रदान करती है। यही नहीं, यह व्यक्ति की सामाजिक गतिशीलता का एक महत्वपूर्ण साधन तथा आधुनिक प्रौद्योगिकी को अपनाने का प्रमुख आधार है। शिक्षा को प्रभावशाली सामाजिक–राजनैतिक सहभागिता करने का महत्वपूर्ण आधार माना गया है।

आज सम्पूर्ण विश्व कोविड–19 महामारी से पीड़ित है। कोरोनावायरस वायरसों का एक बड़ा परिवार है जो सामान्य सर्दी–जुखाम से लेकर अधिक गंभीर बीमारियों जैसे मध्य पूर्व श्वसन सिंड्रोम (MERS)और गंभीर तीव्र श्वसन सिंड्रोम (SARS) का कारण बनता है। लैटिन भाषा में "कोरोना" का अर्थ "मुकुट" होता है और इस वायरस के कणों के इर्द–गिर्द उभरे हुए कांटे जैसे ढाँचों से इलेक्ट्रान सूक्ष्मदर्शी में मुकुट जैसा आकार दिखता है, जिस पर इसका नाम रखा गया था। सूर्य ग्रहण के समय चंद्रमा सूर्य को ढक लेता है तो चन्द्रमा के चारों ओर किरण निकलती प्रतीत होती है उसको भी कोरोना कहते हैं।

एक नए कोरोना वायरस (COVID-19) की पहचान चीन के वुहान में 2019 के मध्य दिसंबर में हुई थी । यह एक नया कोरोनावायरस है जो इससे पहले कभी मनुष्यों में नहीं पाया गया है। चीनी वैज्ञानिकों ने बाद में कोरोनावायरस की एक नई नस्ल की पहचान की जिसे 2019–nCoV प्रारम्भिक नाम दिया गया। इस नए वायरस में कम से कम 70 प्रतिशत वही जीनोम अनुक्रम पाए गए जो सार्स–कोरोनावायरस में पाए जाते हैं। डब्ल्यूएचओ ने इसका नाम सार्स–कोव–2 (SARS- CoV2) रखा है। 23 जनवरी 2020 को, विश्व स्वास्थ्य संगठन ने प्रकोप को अंतरराष्ट्रीय चिंता का एक सार्वजनिक स्वास्थ्य आपातकाल घोषित करने का फैसला किया। विश्लेषण से पता चलता है कि 2013 में पहचाने जाने वाले बैट कोरोनोवायरस के पूरे जीनोम स्तर का 96% समान जीनोम nCoV-2019 में है। हालांकि इस बैट कोरोनोवायरस के न्यूक्लियोटाइड अनुक्रम, जिसे RaTG13 के रूप में जाना जाता है।

कोविड–19 के संक्रामक प्रकोप के कारण पूरे भारत में कालेजों और विश्वविद्यालयों को बन्द कर दिया गया है जिससे कि कोविड–19 के प्रसार की गति को धीमा किया जा सके और अस्पतालों में संक्रमित व्यक्तियों की संख्या में कमी आ सके। शिक्षण संस्थान बंद होने के विशिष्ट प्रभाव दिखाई दे रहे हैं परन्तु शिक्षण कार्यों में अवरोध उत्पन्न हो गये है। छात्र शिक्षण संस्थानों, पुस्तकालयों का प्रयोग नहीं कर पा रहे हैं। मोबाइल या ई–मेल द्वारा छात्रों व शिक्षकों में सम्पर्क हो सकता है परन्तु प्रत्यक्ष संचार और कक्षा शिक्षण

का कोई प्रतिस्थापन नहीं है। प्रत्यक्ष संचार होने पर ही पर्यवेक्षण में सुधार होता है। छात्रों के सामने अध्ययन के लिये स्पष्ट रूप से कोई समाधान प्रस्तुत नहीं हो सका है। शिक्षक शिक्षा संस्थानों की नींव कोविड–18 के त्वरित प्रसार से काफी प्रभावित हुई है। संस्थानों को अनिवार्य रूप से बन्द करने सोशल–डिस्टेंसिंग के अन्य प्रावधानों के कारण कोविड–19 की संक्रमण दर में महत्वपूर्ण गिरावट आयी है पस्तु शिक्षण संस्थान के निहितार्थ के बारे में अनिश्चय की स्थिति उत्पन्न हो रही है। शिक्षक–शिक्षा संस्थान क्लास रूम टीचिंग के स्थान पर ऑनलाइन टीचिंग को प्रयुक्त करने का प्रयास कर रहे हैं लेकिन क्लास रूम टीचिंग का ऑनलाइन टीचिंग में फिट होना बहुत व्यावहारिक नहीं है। शिक्षक शिक्षा संस्थान बाधाओं को दूर करने के लिये और छात्रों तक पहुंच बढ़ाने के लिये सस्ते, श्रेष्ठ, स्थिर और और उपयोग में आसान संसाधन उपलब्द्ध कराना चाहते हैं। संस्थान सुनिश्चित करते हैं कि छात्रों और शिक्षा संकाय के विकास के लिए और शिक्षक शिक्षा के अबाध संचालन के लिए विश्वविद्यालय और छात्रों दोनों के पास प्रयाप्त संसाधन उपलब्ध होने चाहिए। यह सुनिश्चित करना और आभासी माध्यमों से परीक्षओं का संचालन करना भी एक चुनौती बना हुआ है।

मानव अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा है तथा उसके जीवन में अनेक दिखावटी एवं आवश्यक तत्व जीवनचर्या से कम हो रहे हैं। हम सभी दिन–प्रतिदिन सहज एवं सरल होते जा रहे हैं। इससे तमाम बदलाव हो रहे हैं, जिनसे शिक्षा का क्षेत्र भी अछूता नहीं है। शिक्षा व्यवस्था भी अनेक मानकों का सामान्य परिस्थिति में अनुपालन करती रही है। केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को मंजूरी दी है। जिसे 2022 में लागू किया गया। नई शिक्षा नीति के निर्माण के लिए जून 2017 में इसरो के पूर्व प्रमुख डॉक्टर के. कस्तूरी रंजन की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया था। इस समिति ने 2019 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मसौदा प्रस्तुत किया था। नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षा की पहुंच, समानता, गुणवत्ता जैसे विषयों पर विशेष ध्यान दिया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के तहत मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय करने की मंजूरी दी गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में वर्तमान सक्रिय 10+2 के शैक्षिक मॉडल के स्थान पर पाठ्यक्रम को 5 +3 + 3 +4 प्रणाली के आधार पर विभाजित करने की बात कही गई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में कहा गया है कि शिक्षक बनने के लिए 4 वर्षीय समन्वित बी0एड0 डिग्री साल 2030 से न्यूनतम योग्यता होगी। नई शिक्षा नीति के दस्तावेज के अनुसार साल 2023 तक राष्ट्रीय शिक्षक शिक्षा परिषद (एनसीटीई) शिक्षकों के लिए एक साझा राष्ट्रीय पेशेवर मानक तैयार करेगी इसके लिए एन0सी0ई0आर0टी0 तथा सी0आर0टी0 शिक्षकों और सभी क्षेत्रों के विशेषज्ञ संगठन के साथ परामर्श किया जाएगा।किन्तु आज हम बेहद असामान्य परिस्थितियों से गुजर रहे हैं। प्रत्यक्ष रूप से हम समाज के अन्य घटकों से मिलने में असमर्थ हैं किन्तु क्या जीवन वास्तव में रुक गया है? नहीं, जीवन रुका नहीं है बल्कि अपना रूप बदल रहा है अपेक्षाएं नए रूप में हमारे सम्मुख आ रही हैं और हम महसूस कर सकते हैं कि मनुष्य की जीवन्तता उसे हार नहीं मानने का हौसला प्रदान कर रही है। भारत सरकार की तरफ से सभी शिक्षण संस्थाओं को आदेश दिया गया है कि कुछ समय तक वे कोविड–19 के प्रकोप को ध्यान में रखते हुए परिसरों को बन्द कर दें। वर्तमान समय में यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि कोविड–19 के संक्रमण के कारण शिक्षक शिक्षा के लिये ऑनलाइन शिक्षा प्रणाली को कब तक जारी रखा जायेगा या यह परिरस्थति कितने समय तक रहेगी धीरे–धीरे ऑनलाइन व्यवस्था नवीन परिस्थितियों के साथ सामंजस्य बनाती जा रही शिक्षक शिक्षा संस्थानों में विभिन्न दूरस्थ शिक्षा प्लेटफार्मों का उपयोग करते हुए शिक्षण कार्य चल रहा है। अभी इस स्तर पर पहुॅच कर यह कहना कठिन है कि यह कितना अधिक सफल रहा है खासकर जब छात्र क्षेत्रों में रह रहा हो और शिक्षा का लाभ एक विशेष क्षेत्र/वर्ग तक सीमित है। सभी ग्रामीण और अर्धशहरी क्षेत्रों के छात्रों के पास लैपटॉप या डेस्कटॉप

नहीं हो सकते हैं। संस्थानों और छात्रावासों के बन्द होने के कारण सभी छात्र अपने घरों को चले गये जो ग्रामीण और सुदूर क्षेत्रों में निवास करते हैं। खराब इण्टरनेट कनेक्टीविटी के कारण वे कनेक्ट भी नहीं हो पा रहे हैं।

यह सभी के लिए नयी सच्चाई होने जा रही है कि हमें वर्तमान समय में कोविड–19 के साथ जीना सीख लेना चाहिये। एक शिक्षक, एक शोधकर्ता, एक शिक्षार्थी के रूपमें कोरोना की दुनिया में पढ़ने, पढ़ाने और सीखने के लिये यह बिल्कुल ही अपना अवसर है। स्पष्ट है कि दुनिया में ज्यादातर लोग प्राथमिक रूप से सबसे सुरक्षित विकल्प के रूप में ऑनलाइन शिक्षण के बारे में ही विचार कर रहे हैं। अब जबकि यह स्पष्ट है कि वर्तमान शैक्षिक सत्र पारम्परिक रूप से स्थापित मानदण्डों के आधार पर पूरा नहीं किया जा सकता है, तब नीति नियंताओं ने इसके दूरगामी असर का अनुमान लगा लिया था और वैकल्पिक मॉडल पर काफी पहले कार्य करना प्रारम्भ कर दिया था। आज अध्ययन अध्यापन के डिजिटल स्वरूप को मान्यता प्रदान की गई है। कक्षा में आमने–सामने के सम्प्रेषण का स्थान इंटरनेट, मोबाइल, लैपटॉप आदि पर आभासी कक्षाओं ने ले लिया है। जूम, सिस्को, वेबएक्स, गूगल क्लासरूम, टीसीएस आयन डिजिटल क्लास रूम आदि ने लोकप्रियता के आधार पर शिक्षा जगत में अपनी पैठ बनानी प्रारम्भ कर दी है। प्रारम्भिक स्तर पर यह सब उपयोग के दौरान कठिन जान पड़ते हैं किन्तु एक बार अभ्यस्त होने पर प्रक्रिया सरल प्रतीत होती है। हॉ, इतना भय अवश्य रहता है जितना कि तकनीक को इस्तेमाल के समय होता है।

तकनीक का असमय फेल होना जैसे इंटरनेट की स्पीड, कनेक्टिविटी की समस्या, लॉकडाउन के समय में कोई साथ उपस्थित होकर सिखाने में बताने वाला नहीं होने से भी ऑनलाइन ट्यूटोरियल की सहायता से ही सीखने की मजबूरी, घर में जो साधन है उन्हीं की सहायता लेकर उसे रिकॉर्ड करना, नोट्स बनाना, उनकी डिजिटल कॉपी तैयार करना, छात्रों से संवाद करना आदि अनेक प्रकार की चुनौतियां शिक्षक समुदाय के समक्ष हैं, किंतु फिर भी इच्छा शक्ति, अतिरिक्त समय एवं प्रयासों के द्वारा हमारे शिक्षक इसे कर रहे हैं। पाठ्यक्रम पूरे कराए जा रहे हैं, छात्र नए माध्यम से शिक्षण पद्धति द्वारा शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं अपने को बदल रहे हैं तो शुभ संकेत है। यह नए प्रकार का बदलाव है जिसने व्यापक स्तर पर परिवर्तन का आगाज किया है। आने वाले समय में इसका व्यापक असर हो सकता है। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षा जगत में भी इसे बढ़ावा तो दिया जा रहा था किंतु इसे समस्त भागीदारों का अपेक्षित सहयोग नहीं प्राप्त हो रहा है। समग्र शिक्षा व्यवस्था के समक्ष कोविड–19 के दुष्परिणामों के फलस्वरूप उत्पन्न परिस्थितियों के कारण से ही सही, डिजीटल शिक्षा के इस यथार्थ से हमारा साक्षात्कार सामूहिक रूप से कराने का कारण बन रहा है।

भारत के शिक्षक शिक्षा संस्थान कोविड–19 को रोकने के प्रयास में लगातार बद चल रहे हैं। कक्षा में सभी शिक्षण गतिविधियों को निलम्बित कर दिया गया है। शिक्षण कार्य के लिये ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफार्म आवश्यक हो गये हैं। परिस्थितियों को देखते हुए भविष्य में भी ऑनलाइन शिक्षण में वृद्धि के चरण को ई–लर्निंग द्वारा विस्तारित किया जायेगा। शिक्षण संस्थानों को इस परिदृष्य के लिये तैयार रहना होगा जिनसे छात्रों का शिक्षण, परीक्षा, संगठनात्मक कार्य, प्रयोगात्मक परीक्षा और साथ ही संस्थाओं का व्यावसायिक पक्ष भी सुगमतापूर्वक चल सके।

भारतीय शिक्षक शिक्षा संस्थानों में परिवर्तन की धीमी दर, व्याख्यान आधारित दृष्टिकोण, संस्थागत पूर्वाग्रह कई वर्षों पुराने हैं परन्तु इस महामारी में भारत की शिक्षक शिक्षा प्रणाली के अच्छे प्रयासों को प्रदर्शित किया है। शिक्षा संस्थान नवीन विचारों के साथ आगे बढ़ रहे हैं। शिक्षण तकनीक के सन्दर्भ में ऑनलाइन व्याख्यान देना और सिखाना अधिक प्रयोग हो रहा है। ऑनलाइन शिक्षण प्रणालियों का उपयोग करके प्रशिक्षित करने के लिये निर्देश आधारित डिजाइनों और सूचना प्रौद्योगिकी के विशेषज्ञों से बहुत

अधिक आभासी समर्थन और सहायता की आवश्यकता होती है। शिक्षक शिक्षा के शिक्षार्थी जिसका उपयोग मिश्रित शिक्षण, अध्ययन के घटक के रूप में, पाठ्यक्रम सामग्री साझा करने के लिये, ऑनलाइन वार्तालाप बोर्ड स्थापित करने के लिये और ऑनलाइन शिक्षण के लिये कर रहे हैं।

राष्ट्रव्यापी बन्द के समय शिक्षकों द्वारा ऑनलाइन सीखने के कौशल के बढ़ाने के लिये और छात्रों के साथ जुड़ने के लिए सोशल मीडिया प्लेटफार्म का उपयोग करने के लिये प्रोत्साहित किया जा रहा है जिससे पाठ्यक्रम को आभासी मोड में स्थानान्तरित करना चुनौतीपूर्ण न हो। इस दिशा में भारत सरकार द्वारा अपनी विभिन्न नियामक संस्थाओं के माध्यम से निरंतर प्रयास किया जा रहा था कि वैश्विक स्तर पर उपलब्ध ज्ञान के खुलेपन एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की प्रतिस्पर्धा में हम अपने को तैयार रखें। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग मानव संसाधन विकास मंत्रालय, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद, नेशनल इंस्टीट्यूशनल रैंकिंग फ्रेमवर्क यानी नेशनल एसेसमेंट एंड एक्रेडिटेशन काउंसिल आदि संस्थाओं या रैंकिंग एजेंसियों ने ओपन लर्निंग प्लेटफॉर्म को बढ़ावा देने का प्रयास किया था। विश्व की दुर्लभ पुस्तकें डिजिटल फॉर्म में लाखों की संख्या में छात्रों को उपलब्ध कराई गई। एन0पी0टी0ई0एल0 यानी नेशनल प्रोग्राम ऑन टेक्नोलॉजी एनहांस्ड लर्निंग द्वारा ऑनलाइन पढ़ाई के नए अवसर प्रदान किये गये। विभिन्न पाठ्यक्रमों को डिजिटल रूप में परिवर्तित करने को बढ़ावा दिया गया। विश्वविद्यालय एवं डिग्री कॉलेजों में होने वाली प्राध्यापकों की नियुक्ति के समय आवेदन करने की अर्हता के निर्धारण में भी इन कसौटियों में किए गए प्रयासों को अंको के रूप में आवश्यक हिस्सा बनाया गया ताकि शिक्षक समुदाय डिजिटल अध्यापन की ओर अपनी रुचि बढ़ा सके।

शिक्षक शिक्षण संस्थान के संकाय पूरी तरह से शिक्षण प्रणालियों में ऑनलाइन पाठ्यक्रम के बदलाव के लिये दबाव में हैं। यदि नये मॉडल के रूप में सोशल डिस्टेसिंग के साथ कोविड–19 के संदर्भ में शेष शैक्षणिक वर्ष के लिये पूरी क्षमता से ऑनलाइन कक्षायें चलानी है तो सभी शिक्षकों एवं शिक्षक शिक्षा शिक्षार्थियों को कम्प्यूटर या लैपटॉप, निर्बाध बिजली और इन्टरनेट आपूर्ति की आवश्यकता होगी जो कि एक बहुत बड़ी चुनौती है। वर्तमान परिस्थिति में शिक्षण कार्य के लिये पर्याप्त संसाधनों, कनेक्टिविटी और अधिक मजबूत इच्छा शक्ति की आवश्यकता है। शिक्षण योजनाओं को वर्तमान समय के अनुसार बनाया जाना चाहिये जिसमें इस महामारी से पहले, इसके दौरान और बाद की रणनीतियों शामिल हों। कोविड के प्रकाव के समय कुछ सुझाव इस प्रकार हो सकते हैंः–

ऑनलाइन शिक्षण के कार्य के लिये शहरी और ग्रामीण दोनो क्षेत्रों के छात्रों को नियमित बिजली और इन्टरनेट कनेक्टिविटी की आवश्यकता है जिसकी आपूर्ति होनी चाहिये।

इस प्रणाली को सस्ता और सरल बनाना होगा अन्यथा जो छात्र कम सम्पन्न हैं या डिजिटल रूप से कम जानकार हैं वे उतने ही पोछे रह जायेंगे।

इन्टरनेट की पर्याप्त आपूति और गुणवत्ता पर ही शिक्षण की गुणवत्ता काफी हद तक निर्भर है।

इन सभी सरकारी प्रयासों के बावजूद भी ई–कंटेंट के निर्माण की गति धीमी थी और अधिकांश शिक्षक समुदाय उससे दूरी बनाए हुए थे किन्तु वर्तमान परिस्थितियों ने बलपूर्वक ही सही पर अधिसंख्य शिक्षक समुदाय को डिजिटल माध्यम से पढ़ने एवं पढ़ाने के प्रति सहज करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा सहित शिक्षा के प्रत्येक घटक को न केवल डिजिटल शिक्षण व्यवस्था ने छुआ है बल्कि इनमें बड़े बदलाव की ओर अग्रसर किया गया है।

समानांतर शिक्षा तंत्र के रूप में चल रहे कोचिंग सेंटर एवं व्यक्तिगत ट्यूटर भी इन माध्यमों का इस्तेमाल करने को उत्सुक हुए हैं। इसके साथ ही पहले से डिजिटल शिक्षा के क्षेत्र में अपना स्थान बनाने का प्रयास करने वाले स्वतंत्र निकायों एवं संस्थानों को भी बड़ा बाजार मिलने की राह आसान होती दिख

रही है। डिजिटल शिक्षा के दोषों से बचने की भी आवश्यकता है। पाठ्यक्रम प्रयोगात्मक एवं अनुप्रयुक्त ज्ञान का हिस्सा पूर्णता छोड़ना उचित नही है जो डिजिटल माध्यम से भावी ढंग से कराया जाना संभव नहीं है।

निष्कर्षः

ऑनलाइन शैक्षिक कार्यक्रम विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के स्तर तक पहुॅचने में उतने सक्षम नहीं है जितना कक्षा–शिक्षण है। ऑनलाइन शिक्षण कभी भी कक्षा–शिक्षण के महत्वपूर्ण घटकों को लेकर नहीं चल सकता जैसे कि शिक्षक की शारीरिक भाव–भंगिमा जो कि शिक्षण के लिये अति महत्वपूर्ण है। भारत में शिक्षक शिक्षा संस्थान इस वर्तमान कठिनाई के समय को एक प्रयोग या अवसर के रूप में उपयोग कर सकते हैं और निकट भविष्य में सभी छात्रों के लिये ऑनलाइन शिक्षा को शिक्षा की प्रगति का एक मुख्य हिस्सा बना सकते हैं। वर्तमान समय की विषम परिस्थितियों से उबरने में कितना समय लगेगा यह कोई नहीं बता सकता। महामारी के समाप्त होने की आशा करते हुए तब तक प्रयास करते ही रहना होगा। सिर्फ कंटेट डिलीवरी, प्रश्न बैंक एवं नोट का प्रेषण करना मात्र अध्यापन की इति श्री समझ लेना ठीक नहीं होगा। छात्रों के अनुकूल प्रणाली को अपनाकर परस्पर संप्रेषण का अवसर भी प्रदान करने की चुनौती डिजिटल शिक्षा प्रणाली में व्यावहारिक रूप में दिखाई देती है। इन प्रश्नों के उत्तर खोजना अभी शेष है। भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 के अन्तर्गत शिक्षक शिक्षा को और भी अधिक महत्व दिया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. UNESCO, “Education: From disruption to recovery” (https://www.unesco.org/en/covid-19/education-response) (2020).
2. WHO, Coronvirous diease 2019 (COVID-19) situation Report-38-42 (https://www.who.int/emergencies/diseases/novel-coronavirus-2019/ situation-reports/situation-reports-archive) (2019).
3. Maria Assunção Flores & Marília Gago: Teacher education in timesof COVID-19 pandemic in Portugal: national, institutional and pedagogical responses, Journal of Education for Teaching, DOI: 10.1080/02607476.2020.1799709, (2020).
4. Reyes Limon Quezada, Christie Talbot & Kristina Belen Quezada-Parker: From bricks and mortar to remote teaching: a teacher education programme’s response toCOVID-19, Journal of Education for Teaching, DOI: 10.1080/02607476.2020.1801330, (2020).
5. Nurfaradilla Mohamad Nasri, Hazrati Husnin, Siti Nur Diyana Mahmud& Lilia Halim: Mitigating the COVID-19 pandemic: a snapshot from Malaysia into thecoping strategies for pre-service teachers’ education, Journal of Education for Teaching, DOI:10.1080/02607476.2020.1802582, (2020).
6. Maria Assunção Flores & Anja Swennen: The COVID-19pandemic and its effects on teacher education, European Journal of Teacher Education, DOI:10.1080/02619768.2020.1824253, (2020)
7. Preeti Tarkar, Impact of Covid-19 Pandemic on Education System,International Journal of Advanced Science and Technology, Vol. 29, No. 9s, pp. 3812-3814, (2020).

8. Kathleen Ann Godber and Denise Robyn Atkins,COVID-19 Impacts on Teaching andLearning: A CollaborativeAutoethnography by Two HigherEducation Lecturers, Frontiers in Education, Vol 6, 647524, (2021).
9. Firdaus Chaudhary, Noreen Jaral, Saima Khanam,Impact of Covid-19 on Teacher Education in India,IJCRT, Volume 10, Issue 9 (2022).
10. Arunaz Kumar, Mahbub Sarkar, Elizabeth Davis, Julia Morphet, Stephen Maloney, Dragan Ilic andClaire Palermo, Impact of the COVID-19 pandemic onteaching and learning in healthprofessional education: a mixed methodsstudy protocol,BMC Medical Education 21:439, (2021).

Nav Jyoti, Vol. 11, No. 22, Jan-June 2023 **ISSN : 2249-7331**
Peer Reviewed Journal, Impact Factor *5.125* (IIFS)

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्राचीन विवाह संस्कार का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. अभिषेक अग्निहोत्री
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
महाराज बलवन्त सिंह पी. जी. कॉलेज, गंगापुर, वाराणसी

नितेश अग्निहोत्री
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
राम अवध यादव पी. जी. कॉलेज, शाहगंज, जौनपुर

सारांश – *विवाह का हिन्दू संस्कारों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है। धार्मिक चेतना का विकास होने पर विवाह सामाजिक आवश्यकता ही नहीं रहा, अपितु वह प्रत्येक व्यक्ति का एक धार्मिक कर्तव्य समझा जाने लगा। विवाह के द्वारा वंश परम्परा अक्षुण्ण हो जाती, सम्पत्ति के उत्तराधिकारी की समस्या का समाधान हो जाता और पितरों की पूजा भी अविच्छिन्न रुप से चलती रहती थी। अतः अविवाहित रहना गृह–देवताओं के विरुद्ध एक गम्भीर पाप व अपराध समझा जाता था। हिन्दू धर्मशास्त्रों में विवाह के आठ प्रकारों का उल्लेख मिलता है– ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच। विवाहगत कृत्यों और उनके उद्देश्यों को भली–भाँति हृदयंगम कर लिया जाय, तदनुसार पति–पत्नी का सहवास हो तो दोनों की सहृदयता, सौमनस्य एवं सामंजस्य बने रहेंगे। विवाह के फलस्वरुप सामाजिक सम्बन्धों में प्रगाढ़ता भी देखने को मिलती है। संस्कृति के हस्तान्तरण में विवाह संस्था का सर्वाधिक योगदान माना जा सकता है।*

मुख्य शब्द – विवाह, गृहस्थ, संस्कृति, सामाजिक, संस्कार, पति–पत्नी।

विवाह स्वयं एक यज्ञ माना जाता था और जो व्यक्ति विवाह कर गृहस्थ जीवन में प्रवेश नहीं करता था, उसे अयज्ञीन कहा जाता था, जो निश्चय ही वैदिक आर्यों की दृष्टि में अत्यन्त निन्दासूचक शब्द था। तैत्तिरीय ब्राह्मण में कहा गया है कि अपत्नीक पुरुष अयज्ञीन अथवा यज्ञहीन है । एकाकी पुरुष अधूरा है, उसकी पत्नी उसका अर्धभाग है। उपनिषदों के युग में आश्रमों का सिद्धान्त पूर्णतः प्रतिष्ठित हो चुका था। सर्वप्रथम ब्रह्मचर्याश्रम, उसके पश्चात् विवाह कर उसे गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना चाहिए, तदनन्तर वानप्रस्थ और सबके पश्चात् उसे सम्पूर्ण सांसारिक सम्बन्धों तथा बन्धनों का त्याग कर संन्यासी का जीवन व्यतीत करना चाहिए। व्यक्तित्त्व विकास के लिए गृहस्थाश्रम अनिवार्य माना जाता था तथा विवाह को किसी भी दृष्टि से हीन नहीं समझा जाता था। स्वर्ग और इहलोक में सुखाभिलाषी व्यक्ति को गृहस्थाश्रम का पालन करना चाहिए, दुर्बलेन्द्रिय व्यक्ति गृहस्थाश्रम का धारण नहीं कर सकता। विवाह की व्युत्पत्ति वि उपसर्गपूर्वक वह् धातु से घञ् प्रत्यय होकर होती है। विवाह शब्द का अर्थ है– कन्या को उसके पितृगृह से विशेष रुप अथवा प्रयोजनविशेष अर्थात् पत्नी बनाने के लिए ले जाना। उद्वाह, परिणय, उपयम, पाणिग्रहण प्रभृति इसके अपर पर्याय है। विवाह शब्द का तात्पर्य स्त्री और पुरुष के उस सम्बन्ध से है जो मैथुन के साथ ही समाप्त नहीं हो जाता, विद्यमान रहता है। महाभाष्यकार पतंजलि ने स्पष्ट रुप से लिखा है कि जो स्नातक विवाह नहीं करता वह निन्दा का पात्र है। मनु के विचार से विवाह का उद्देश्य है कि सन्तानप्राप्ति, शास्त्रोक्त धर्मों का पालन और यौनतुष्टि। हिन्दू समाज में कोई भी धार्मिक कृत्य स्त्री के बिना पूरा नहीं होता, स्त्री के बिना पुरुष अधूरा माना जाता है। अर्धनारीश्वर की कल्पना इसी तथ्य को पुष्ट करती है कि पति पत्नी एक दूसरे के पूरक है।

स्मृतिग्रन्थों में रजस्वला होने से पूर्व कन्या के विवाह की मान्यता प्रतिपादित की गयी है, ऐसा न करने वाले अभिभावक तथा उसके पितरों को नरकभोगी कहा गया है। विवाह से पूर्व स्त्री पुरुष दोनों के ब्रह्मचर्य का पालन अनिवार्य माना गया है। वैदिक विवाह एक धार्मिक संस्कार है, इसलिए इसमें वर–कन्या का चयन बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। हमारा समाज पुरुषप्रधान भले हो, कन्या के गुण–दोषों का विचार अधिक किया जाता हो, परन्तु शास्त्रों में वर–कन्या दोनों के गुणदोषविचार का निर्देश है। वर–कन्या के वैयक्तिक गुण दोंषों पर विचार करने से पूर्व दोनों कुलों का परीक्षण आवश्यक माना गया है। शास्त्रों में एक ही गोत्र, प्रवर और पिण्ड के वर–कन्या के विवाह का निषेध किया गया है। अभिप्राय यह है कि केवल असगोत्र, असप्रवर एवं असपिण्ड वर कन्या का विवाह मान्य है। इस मान्यता का वैज्ञानिक आधार यह है कि निकट सम्बन्धियों के बीच वैवाहिक सम्बन्ध होने पर उत्पन्न होने वाली सन्तानों का विकास असरुद्ध हो जाता है क्योंकि उनके गुण धर्म तथा रक्त कण एक जैसे होते हैं इसके विपरीत अलग–अलग विशेषताओं और रक्त समूहों वाले स्त्री–पुरुषों के संसर्ग से जो सन्तान उत्पन्न होती है, वह अधिक विकसित एवं प्रतिभासम्पन्न होती है। गोत्र कुल आदि के विचारोपरान्त वर–कन्या के वैयक्तिक गुण–दोषों की परीक्षा का विधान है। सामान्यतया रुग्ण, विक्षिप्त, नपुंसक और चरित्रभ्रष्ट वर को विवाह के योग्य नहीं माना गया है। कन्या के गुणों में उसका यवीयसी (वर से आयु में कम) होना, अनन्यपूर्विका होना और मातृत्व के योग्य होना बताया गया है। मनु की दृष्टि से कन्या को अतिरिक्त अंगों से रहित, सुन्दर नाम वाली, हंस और गज के सदृश गम्भीर पादन्यास वाली, छोटे रोम, केश और दन्तपंक्ति वाली तथा कोमलांगी होना चाहिए। विवाह प्रथा के विभिन्न प्रयोजनों की सफलता स्त्री–पुरुष के पारस्परिक सम्बन्धों पर निर्भर है। इसलिये वात्स्यायन प्रभृति कामशास्त्र के आचार्यों ने स्त्री–पुरुष की शारीरिक–संरचना, स्वभाव, रुचि आदि के गहन चिन्तन के आधार पर उनका वर्गीकरण किया है। धर्मशास्त्रों, चिकित्साग्रन्थों एवं कामशास्त्र की मान्यताओं आदि सबके समावेश से गार्हस्थ्य जीवन सर्वथा सफल हो यही विशद चयनप्रक्रिया का मूल प्रयोजन है।

हिन्दू धर्मशास्त्रों में विवाह के आठ प्रकारों का उल्लेख मिलता है– ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच। इनमें से प्रथम चार समाज में सम्मानित थे और अन्तिम चार निन्दित माने गये थे।

1. ब्राह्म विवाह– यह विवाह सर्वोत्तम तथा शुद्धतम माना गया है। इसमें पिता विद्वान् तथा शीलसम्पन्न वर को स्वयं आमन्त्रित कर तथा उसका विधिवत् सत्कार कर, उससे शुल्क आदि स्वीकार न कर, दक्षिणा के साथ यथाशक्ति वस्त्राभूषणों से अलंकृत कन्या का दान करता था। स्मृतियाँ इसे विवाह का सबसे अधिक सम्मानित प्रकार मानती हैं, क्योंकि वह शारीरिक शक्ति के प्रयोग, कामुकता, किसी प्रकार की शर्त अथवा धनलिप्सा से मुक्त था। विवाह का यह प्रकार समाज की विकसित अवस्था का द्योतक है क्योंकि इसमें कन्या का अपहरण तथा शक्ति का अनुचित प्रयोग आदि दुष्प्रवृत्तियों के लिये कोई स्थान नहीं था। इस प्रकार के अस्तित्त्व का संकेत, हमें वैदिक काल में भी प्राप्त होता है। ऋग्वेद में वर्णित सोम के साथ सूर्या का विवाह ब्राह्म विवाह का पूर्वरुप है।

2. दैव विवाह– इस प्रकार के विवाह में कन्या का पिता किसी यज्ञ का आयोजन कर के बहुत से पुरोहितों को आमन्त्रित करता था। उनमें से जो पुरोहित विधिपूर्वक यज्ञ का अनुष्ठान सम्पन्न करा लेता था, उसे पिता अपनी कन्या को दक्षिणा स्वरुप प्रदान करता था। यज्ञ में विधिवत् कर्म करते हुये ऋत्विक् को वस्त्राभूषणों से सुसज्जित कन्या प्रदान करना दैव विवाह है। चूँकि यह विवाह देवताओं के लिये यज्ञ करते समय सम्पन्न होता था इसलिये इसे दैव विवाह की संज्ञा प्रदान की गयी है। विवाह का यह प्रकार ब्राह्म विवाह से हीन माना गया क्योंकि ब्राह्म विवाह में जहाँ किसी प्रकार का स्वार्थ नहीं था, वहीं दैव विवाह में कन्यादान 'पुण्य

प्राप्त करने के लिये और पुरोहित द्वारा यज्ञ में की गयी सेवा के बदले किया जाता था। विवाह की यह प्रथा वैदिक यज्ञों के साथ ही धीरे–धीरे अप्रचलित होकर समाप्त हो गयी।

3. आर्ष विवाह– धर्मशास्त्रों के अनुसार आर्ष विवाह प्राजापत्य की अपेक्षा प्रशस्यतर है। आर्ष विवाह में कन्या का पिता वर पक्ष से यज्ञादि क्रियाओं के लिए एक या दो जोड़ी गाय या बैल प्राप्त करता था। स्पष्टतः यह कन्या का मूल्य नहीं था, किन्तु धन–प्राप्ति का यत् किंचित् भाग अवश्य था, यद्यपि कन्या का पिता उसका सौदा नहीं करता था। गोमिथुन का यह आदान केवल यज्ञ के लिए होता था, किन्तु कुछ पाश्चात्य विचारकों ने वर पक्ष द्वारा कन्या के पिता को दिये गये गाय–बैल को कन्या का मूल्य मानते हुए इसे 'आसुर विवाह' का परिष्कृत रुप माना है। हिन्दू शास्त्रकार इस मत को स्वीकार नहीं करते। उनका विचार है कि गोमिथुन केवल यज्ञीय कर्म के लिये दिये जाते थे, जो किसी भी प्रकार से कन्या का मूल्य नहीं था। इस विवाह में एक गोमिथुन के आदान का विधान करते हैं, किन्तु यह अनुचित हैं। भले ही यह अल्प हो या अधिक हो, यह विक्रय ही हैं।

4. प्राजापत्य विवाह– इस विवाह के अन्तर्गत वर कन्या के पिता के घर प्रार्थी रुप में जाता था और कन्या का पिता उसकी विधिपूर्वक पूजा करके 'तुम दोनों साथ–साथ धर्म का आचरण करो' इस आदेश के साथ वर को कन्या प्रदान कर देता था। इसके अनुसार अपनी कन्या का पाणिग्रहण पिता योग्य वर के साथ इस उद्देश्य से कर देता था कि वे दोनों अपने नागरिक व धार्मिक कर्तव्यों का साथ–साथ पालन करे। अपने स्वरुप में यह विवाह ब्राह्म विवाह जैसा ही था। समाज की उन्नत दशा में ही शिक्षित पुरुषों व स्त्रियों ने इसका अनुसरण किया होगा। बाल विवाह के प्रचलित होने पर इसका ह्रास हो गया, क्योंकि इस प्रकार के विवाह के लिए केवल प्रौढ़ युवक व युवतियाँ ही समर्थ हो सकते थे, जो उस प्रतिज्ञा के अर्थ को समझ सकते, जिसमें उन्हें प्रविष्ट होना था। हिन्दू समाज में प्रायः यही प्रथा अधिक प्रचलित हुयी, जिसमें वर वधू तथा उनके परिवार उच्च मर्यादा तथा उन्नत आदर्शों के साथ आबद्ध थे।

5. आसुर विवाह– जब कन्या के माता–पिता अथवा सम्बन्धी वर से धन ग्रहण कर अपनी कन्या प्रदान करे तो इस प्रकार के विवाह को आसुर विवाह कहा गया। मनुस्मृति में कहा गया है कि कन्या के माता–पिता, उसकी जाति वालों तथा स्वयं कन्या द्वारा वर से धन लेकर स्वेच्छापूर्वक वर को कन्या प्रदान करना 'आसुर विवाह' कहलाता है। वस्तुतः यह विवाह एक प्रकार से धन लेकर कन्या का विक्रय था। आरम्भ में यह प्रथा किसी भी प्रकार हीन व दोषयुक्त नहीं मानी जाती थी। महाभारत से विदित होता है कि भीष्म ने कतिपय मुक राजकुमारों के लिए क्रय द्वारा पत्नियाँ प्राप्त की थी। असीमित निन्दा व भर्त्सना किये जाने पर भी यह प्रथा भारत में रही है, यद्यपि अत्यन्त निर्धन परिवारों तक यह प्रथा सीमित है। धर्मशास्त्रों में इसे घृणित और निन्दनीय कहा गया है। विवाह के इस प्रकार में धन ही प्रधान निर्णायक तत्त्व था तथा अल्पाधिक रुप में यह एक सौदा था।

6. गान्धर्व विवाह– यह प्रणय विवाह था जिसमें वर और कन्या माता–पिता की इच्छा के न होने पर भी परस्पर एक दूसरे के गुणों पर अनुरक्त होकर अपना विवाह कर लेते थे। मनु कहते हैं कि जब कन्या और वर कामुकता के वशीभूत होकर स्वेच्छापूर्वक परस्पर संयोग करते हैं, तो विवाह के उस प्रकार को गान्धर्व विवाह कहते हैं। यह विवाह प्रत्येक युग में था, संस्कृत महाकाव्यों में इस प्रकार के अनेक विवाहों का उल्लेख है। दुष्यन्त और शकुन्तला, उदयन और वासवदत्ता, पुरुरवा और उर्वशी तथा चन्द्रापीड और कादम्बरी आदि का प्रणय विख्यात है, जो गान्धर्व विवाह के ही अन्तर्गत आता है। महाभारत में शकुन्तला के पालक पिता कण्व कहते हैं कि 'सकामा स्त्री का सकाम पुरुष के साथ विवाह भले ही धार्मिक क्रिया व संस्कार से रहित क्यों न हो', वह सर्वोत्तम है। किन्तु अधिकांश स्मृतिकार इसे प्रशस्त मानने के लिए उद्यत न थे, वे धार्मिक तथा नैतिक आधारों पर इसे अप्रशस्त मानते थे। यह प्रथम पाँच प्रकारों की अपेक्षा हीन

माना जाता था, क्योंकि इसका उद्भव कामुकता से होता तथा धार्मिक क्रियाओं तथा संस्कार के बिना ही यह सम्पन्न हो जाता था।

7. राक्षस विवाह– मनु के अनुसार 'रोती–पीटती हुई कन्या का, उसके सम्बन्धियों को मार कर या क्षत–विक्षत कर बलपूर्वक हरण करने के विवाह को राक्षस प्रकार का विवाह कहा जाता था। वस्तुतः इसमें निहित क्रूरता के कारण ही इसे राक्षस विवाह कहा गया। श्री कृष्ण ने रुक्मी को युद्ध में पराजित कर उनकी बहन रुक्मिणी से विवाह किया था, जो राक्षस विवाह के अन्तर्गत आता है। इस प्रकार में वर कन्या के पिता या स्वयं कन्या की स्वीकृति की प्रतीक्षा न कर बलपूर्वक उसका हरण कर लेता था। यह प्रकार प्राचीन युद्धप्रिय जनों में प्रचलित था तथा इस प्रकार प्राप्त स्त्रियों का उपभोग युद्ध की लूट के रुप में किया जाता था।

8. पैशाच विवाह– सर्वाधिक अप्रशस्त एवं नितान्त घृणित प्रकार माना गया है पैशाच विवाह। मनु के अनुसार सोती हुई, अचेत, पागल या मदिरापान की हुयी कन्या के साथ जब कामातुर होकर बलात् विवाह करता है तो इसे पैशाच विवाह कहा जाता था। स्मृतियों ने इस विवाह की घोर भर्त्सना की है। गर्हित कर्म होने के कारण इसे पैशाच विवाह नाम दिया गया है। ऐसा लगता है कि पश्चिमोत्तर भारत की पिशाच जाति में इसका प्रचलन था, जिससे इसका नाम पैशाच पड़ा। धर्मशास्त्रों ने इस विवाह भेद को अत्यन्त, जघन्य, अप्रशस्त, गर्हित, निन्दित और अधार्मिक बताया है।

हिन्दुओं के जीवन–दर्शन में धर्म–भावना का सर्वोच्च स्थान रहा है। यह अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं था कि दम्पत्ति किस प्रकार सम्बद्ध में आबद्ध हुए, किन्तु यदि वे एक बार संयुक्त हो गए, तो संस्कार द्वारा उस सम्बन्ध को स्थायी कर दिया जाता था। यह विश्वास था कि वैवाहिक विधि–विधान से विवाह सम्बन्ध को पवित्रता मिल जाती है। विवाह के प्रत्येक प्रकार में उनका अनुष्ठान अनविार्य समझा जाता था। वशिष्ठ तथा बौधायन के अनुसार यदि किसी कनया का बलात् अपहरण कर लिया गया हो, किन्तु मन्त्रों से विधिवत् संस्कार न किया गया हो, तो उसका विवाह किसी अन्य व्यक्ति के साथ विधिवत् किया जा सकता है, क्योंकि वह तो पूर्ववत् कुमारी ही रहती है। भारत में ये नियम इस रुप में प्रचलित हैं कि किसी भी व्यक्ति को अपने गोत्र के भीतर तथा जाति या वर्ण के बाहर विवाह नहीं करना चाहिए। यदि विवाहगत कृत्यों और उनके उद्देश्यों को भली–भाँति हृदयंगम कर लिया जाय, तदनुसार पति–पत्नी का सहवास हो तो दोनों की सहृदयता, सौमनस्य एवं सामंजस्य बने रहेंगे। जगद्गुरु शंकराचार्य के शब्दों में– उनके वृत्त एक होंगे, चित्त एक होगा, संकल्प एक होंगे, वाणी के स्वर एक हांगे, मन की गति–कति–रति मिल जायेगी और प्राकृत कामवासना के कारण कुमार्ग में जाने की प्रवृत्ति सर्वथा निवृत्त हो जायगी।

ऋग्वेद तथा अथर्ववेद के वैवाहिक सूक्तों से ज्ञात होता है कि वर्तमान हिन्दू वैवाहिक विधि–विधानों की प्रमुख रुप–रेखा वही है जो आज से लगभग पाँच सहस्र वर्ष पूर्व थी। विवाह के फलस्वरुप सामाजिक सम्बन्धों में प्रगाढ़ता भी देखने को मिलती है। संस्कृति के हस्तान्तरण में विवाह संस्था का सर्वाधिक योगदान माना जा सकता है। समाज में बालक–बालिकाओं के समाजीकरण एवं व्यक्तित्त्व निर्माण और यथोचित विकास की दृष्टि से विवाह संस्कार का विशेष स्थान है। बालक के स्वस्थ व्यक्तित्त्व की बुनियाद विधिक वैवाहिक संस्कार से परिवार में ही पड़ती है। परिवार की स्थापना ही विवाह संस्कार की देन है। अतः विवाह भोगार्थ संस्कार नहीं है, योगार्थ संस्कार है।

विवाह का मूल उद्देश्य काम का उपशमन और कर्तव्य का उद्बोधन, यानि धर्म की मर्यादा में अर्थ के संयमित उपभोग द्वारा काम की पूर्ति के साथ–साथ समाज के साथ भी सामंजस्य स्थापित करना है। यदि सूक्ष्मतापूर्वक विचार किया जाय तो विवाह न केवल समझौता है और न ही केवल काम–भावना की तृप्ति , अपितु समग्र जीवन प्रवाह (WAY OF LIFE) का निर्देशक है। जो समाज, प्रकृति एवं परिवेश के

साथ दम्पत्ति के सम्बन्धों का भी मार्ग–निर्देशन करता है। अतः इसे भारतीय संस्कृति एवं समाज के मेरुदण्ड के रुप में निरुपित किया जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगा। विवाह संस्था के बिना भारतीय समाज की कल्पना करना असम्भव है।

सन्दर्भ :–

- अयज्ञियो वा एष योऽपत्नीकः। तैत्तिरीय ब्राह्मण–2.2.26
- अथो अर्द्धो वा एष आत्मनः यत् पत्नी। तैत्तिरीय ब्राह्मण–2.9.4.7
- स सन्धार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
  सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः।। मनु स्मृति– 3.79
- एवमुपयमनपाणिग्रहणशब्दात्परिणयनशब्दोऽपिदण्डिन्यायेनैव। – अपरार्क, पृष्ठ– 65
- विलिस्टाइन गुडसेल, पी० एच० डी०, ए हिस्ट्री आफ दि फैमिली एज ए सोशल एण्ड एजुकेशनल
- इंस्टीट्शन, पृष्ठ–6
- अधीतः स्नात्वा गुरुभिरनुज्ञातेन खट्वा रोढव्या। य इदानी मतोऽन्यथा करोति स उच्यते
  खट्वासोढोऽयं जाल्मः।। महाभाष्य – 2.1.26
- अपत्यं धर्मकर्माणि शुश्रुषा रतिरुत्तमा।
  दाराधीनस्तथा स्वर्गः पितृणामात्मनश्च।। मनुस्मृति – 6.28
- अर्धो ह वा एष आत्मनो यज्जाया तस्माद्यज्जायां.....तर्हि हि सर्वो भवति। शतपथ ब्राह्मण – 5.2.1.10
- प्राप्ते तु द्वादशे वर्षे यः कन्यां न प्रयच्छति। मासि मासि रजस्तस्य पिबन्ति पितरोऽनिशम्।। पराशर स्मृति– 77.8
- कुलमग्रे परीक्षेत मातृतः पितृतश्चेति। आश्वलायन गृहसूत्र–1.15
- पद्ध सगोत्राय दुहितरं न प्रयच्छेद। आपस्तम्ब धर्मसूत्र – 2.11.15
- कुब्जवामनजात्यन्धक्लीबपङ्ग्वार्तरोगिणाम्। व्रतचर्या भवेत्तेषां यावज्जीवमनंशतः।। विष्णु पुराण –(गीताप्रेस गोरखपुर)
- अनन्यपूर्विकां कान्तामसपिण्डां यवीयसीम्। याज्ञवल्क्य स्मृति– 1.52
- अव्यंगांगी सौम्यनाम्नीं हंसवारणगामिनीम। तनुलोमकेशदशनां मृद्वंगीमुद्वहेत्स्त्रियम्। मनुस्मृति– 3.10
- ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः। गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः।। मनुस्मृति– 3.21
- आच्छाद्य चार्चयित्वा च श्रुतिशीलवते स्वयम्। आहूय दानं कन्यायाः ब्राह्मो धर्मः प्रकीर्तितः।। मनुस्मृति–3.27
- यज्ञे तु विततते सम्यगृत्विजे कर्मकुर्वते। अलंकृत्य सुतादानं दैवं धर्म प्रचक्षते।। मनुस्मृति– 3.28
- एकं गोमिथुनं द्वे वा वरादायाय धर्मतः। कन्याप्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्चते।। मनुस्मृति– 3.29
- पूर्वैः प्रवर्तितं किंचित् कुलेऽस्मिन् नृपसत्तमैः। साधु वा यदि वा साधु तन्नातिक्रान्तुमुत्सहे।। महाभारत, आदि पर्व – 122.9
- इच्छायाऽन्योऽन्यसंयोगः कन्यायाश्च वरस्य च। गान्धर्वस्स तु विज्ञेयो मैथुन्यः कामसम्भवः।। मनुस्मृति–3.32
- सकामयाः सकामेन निर्मन्त्रः श्रेष्ठ उच्यते। – महाभारत, 4.94.60
- गान्धर्वस्तु क्रियाहिनः रागादेव प्रवर्तते। – वीरमित्रोदय, भाष्य 2, पृष्ठ 57
- हत्वा छित्त्वा च भित्त्वा च क्रोशन्तीं रुदतीं गृहात्। प्रसह्म कन्यां हरतो राक्षसो विधिरुच्यते।। मनुस्मृति– 3.33

- निर्जित्य रुक्मिणं सम्यगुपमेये च रुक्मिणीम्। राक्षसेन विवाहेन सम्प्राप्तां मधुसूदनः।। विष्णु पुराण–5. 26.11 (गीताप्रेस गोरखपुर)
- सुप्तां मत्तां प्रमत्तां वा रहो यत्रोपगच्छति। सा पापिष्ठो विवाहानां पैशाचश्चाष्टमोऽधमः।। मनुस्मृति–3. 34
- बलादपहृता कन्या यदि मन्त्रैर्न संस्कृता। अन्यस्मै विधिवद्देया यथा कन्या तथैव सा।। – वीरमित्रोदय, भाष्य–2, पृष्ठ–860
- पं० पी० एन० पट्टाभिराम शास्त्री के ग्रन्थ 'संस्कारविज्ञान' में शंकराचार्य स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती जी महाराज द्वारा लिखी भूमिका से